Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132
गौरवपूर्ण प्रकाशन-द्वितीय दशक की ओर अग्रसर

Supported by:
Kisaan Helpline
+91-7415538151

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com
ISSN-2582-5976
वर्ष-20 अंक-03 ग्वालियर, जून -2025 मूल्य 30 रुपए

आजादी के बाद पहली बार सरकार की किसानों से सीधे जुड़ने की पहल

किसानों को जागरूक करने के लिए देशभर में 'विकसित कृषि संकल्प अभियान'

जानिए...क्या है 'विकसित कृषि संकल्प अभियान

* यह अभियान 723 जिलों में 65,000 से अधिक गांवों को शामिल करने का लक्ष्य रखता है और इससे 1.3 करोड़ से अधिक किसानों को सीधे तौर पर जोड़ने की उम्मीद है, ताकि वैज्ञानिक कृषि पद्धतियों को अपनाने और स्थायी कृषि विकास को प्रोत्साहित किया जा सके।

* यह अभियान विज्ञान-समर्थित, जलवायु सहिष्णु और किसान-केंद्रित कृषि के माध्यम से भारत को बास्केट ऑफ द वर्ल्ड बनाने की दृष्टि से मेल खाता है।

देश में कृषि क्षेत्र में व्यापक सुधार लाने के लिए केन्द्र सरकार कई स्तर पर काम कर रही है। कृषि उत्पादन बढ़ाने, किसानों की आय में वृद्धि करने, किसानों को विविध फसल उगाने के लिए प्रोत्साहित करने जैसे कई कदम उठाए गए हैं। अब सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर 'विकसित कृषि संकल्प अभियान' शुरू किया है। 15 दिवसीय यह अभियान देश में 29 मई से शुरू हुआ जो 12 जून को समाप्त हुआ। इस अभियान की शुरू केन्द्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने ओडिशा के पुरी से की। गौरतलब है कि केन्द्रीय कृषि कृषि शिवराज सिंह चौहान ने लगभग देश के कई राज्यों में भ्रमण कर किसानों और वैज्ञानिक के साथ संवाद किया।

श्री गणेशाय नमः

श्री सॉंवलिया सेठ

किसान कृषि सेवा केन्द्र

Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com

7692967419 9109726855

हमारी सेवाएँ:-

सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर,कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।

कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।

उन्नत किस्म के नर्सरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।

स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company

कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा

1988 से भारतीय किसानों की सेवा में...

सुदर्शन इण्डस्ट्रीज

विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

बारिश और चेतावनी : बदलता मौसम, बिगड़ता संतुलन

एक ओर जहां लोगों को चिलचिलाती गर्मी से थोड़ी राहत मिली, वहीं दूसरी ओर भीषण बारिश और तेज हवाओं ने जनजीवन को पूरी तरह से अस्त-व्यस्त कर दिया। मई महीने में जब उत्तर भारत 44-45 डिग्री सेल्सियस की झुलसाने वाली गर्मी के लिए जाना जाता है, ऐसे समय में अचानक ऐसे तूफान, तेज बारिश और ओलावृष्टि जैसे दृश्य आमतौर पर मानसून के चरम काल में भी दुर्लभ होते हैं।

हालांकि भारतीय मौसम विज्ञान विभाग (आईएमडी) ने इस तूफान से पहले ही रेड अलर्ट जारी कर दिया था परंतु तूफान की तीव्रता और व्यापक प्रभाव ने पारंपरिक मौसमी पूर्वानुमानों को भी पीछे छोड़ दिया। रविवार की देर रात तेज हवाओं ने पूरे दिल्ली-एनसीआर में अपना प्रभाव दिखाना शुरू कर दिया। पश्चिम और उत्तर-पश्चिम दिशा से तेजी से बढ़ते तूफानी बादल महज कुछ ही घंटों में दिल्ली-एनसीआर की ओर आ गए। आसमान में अचानक तेज बिजली चमकने लगी, फिर गरज के साथ बारिश शुरू हुई और देखते ही देखते स्थिति एक शक्तिशाली तूफान में बदल गई। हवा की रफ्तार इतनी अधिक थी कि कई इलाकों में पेड़ उखड़ गए, ट्रैफिक सिग्नल गिर गए, बिजली के खंभे झुक गए और कई वाहनों को क्षति पहुंची। आईएमडी के अनुसार, इस दौरान हवा की गति 60 किमी प्रतिघंटा तक पहुंच गई थी और कुछ स्थानों पर तो यह इससे भी अधिक रिकॉर्ड की गई।

केवल दिल्ली ही नहीं, नोएडा, ग्रेटर नोएडा और गुरुग्राम जैसे एनसीआर के प्रमुख शहरों में भी हालात कुछ अलग नहीं थे। गुरुग्राम में तेज हवा के कारण कई जगहों पर निर्माणाधीन साइटों की छतें उड़ गई जबकि नोएडा में एक निर्माणाधीन बिल्डिंग की क्रेन गिरने से दो लोग घायल हो गए। उत्तर भारत के अन्य भागों, जम्मू, पंजाब, हिमाचल, उत्तराखंड, राजस्थान में भी यह तूफान तबाही लेकर आया। जगह-जगह सैंकड़ों पेड़ उखड़ गए, जिससे कई जगहों पर सड़कों का संपर्क टूट गया। हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले में बादल फटने की घटना भी सामने आई, जहां सात वाहन बह गए और कई अन्य क्षतिग्रस्त हो गए। पंजाब में वर्षाजनित हादसों में कुछ लोगों की मौत की भी पुष्टि हुई। खेतों में काम कर रहे किसान तेज आंधी की चपेट में आ गए। इससे पहले 21 मई को भी शाम के समय अचानक दिल्ली-एनसीआर का मौसम बदल गया था और अचानक बदले मौसम के बीच भीषण आंधी-तूफान और ओलावृष्टि ने जमकर तबाही मचाई थी। तेज आंधी, बारिश और ओलावृष्टि नोएडा, गाजियाबाद सहित देश के कई राज्यों में लोगों के लिए मुसीबत बन गया था।

'मौन होते वृक्ष, थमती संवेदनाएँ'

अब ना कोई पथिक थके पाँव लाता,
ना वृक्ष की छाँव में मन बहलाता।
न कथा कहे वो सुख-दुख की अपनी,
न सुन पाए सरसर पत्तों की वाणी।

हवा भी अब कृत्रिम सी बहती,
कमरे में मनुज की देह शिथिल रहती।
न ताजगी, न स्पंदन जीवन में,
साँसें बस चलती हैं बंधन में।

खुली हवा में जो चेतना जागे,
अब मशीनों के बीच वो कैसे भागे?
ना मौसम का भान, ना पीड़ा की परछाई,
सूचना बनी है अब संवेदना की कमाई।

हृदय जो कभी भावों से भरता,
अब रक्तसंचार में ही बस उलझा रहता।
दूसरों का दुख अब महसूस नहीं होता,
सिर्फ़ अपने ही ग़म से मन रोता।

वृक्ष भी अब मौन हुए खिन्न हैं,
जैसे वो भी थककर निर्जीव-
सरीखे हुए हैं।
शायद वो भी चाहें खबरों में खो
जाना,
'यहाँ के इतने वृक्ष काट दिए
गए'— बस ये कहलाना।

–डॉ. प्रिया पचौरी

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063
***
नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453
बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732
पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678
***
हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 22 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 23 से 28 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।
–संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
94251-01132 0751-4070802

वार्षिक ₹ 400 · द्विवार्षिक ₹ 750 · पंचवार्षिक ₹ 1800

वर्ष 20 · अंक 03 · ग्वालियर, जून 2025 · मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक
राजू गुर्जर (MJC)
94251-01132
94245-22090

प्रसार/मार्केटिंग टीम
डी.के. बरार
91791-85002, 70247-93010
महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. व्ही.एस. तोमर (पूर्व कुलपति)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया
कृषि विश्वविद्यालय
***
डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव
(Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन
महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)
***
डॉ. आर.के.एस. तोमर
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि.
ग्वालियर (म.प्र.)
***
डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण),
डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले
विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)
***
डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा
उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार
कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर
***
डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी
कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि
विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
***
डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)
***
तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और
कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि
और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
***
बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस
हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)
***
श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542
***
डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन
महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- मशरूम उत्पादन में आवश्यक सावधानियां 10
- आम मिली बग (ड्रोसिचा मैंगीफेरी, हेमिप्टेरा: स्यूडोकोक्सिडी) 11
- कृषि क्षेत्र में नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग: ... 12
- ककड़ी वर्गीय फसलों में फूलन एवं फलन ... 13
- ब्रूसेलोसिस: पशुपालन की एक गंभीर संक्रामक बीमारी 14
- मुर्गी पालन में गर्मी (हीट स्ट्रेस) से होने वाला तनाव.. 15
- पशुओं में क्रिप्टोकोकस इन्फेक्शन एवं बचाव 16
- अमरुद के बागानों में गर्मियों के समय होने वाली क्रियाएं 17
- औषधीय गुणों और तत्वों से भरपूर सब्जियां 18
- बरसात के मौसम में पशुओं को होने वाले प्रमुख रोग.. 19
- समृद्ध जैव विविधता की आवश्यकता 20
- सारकोसिस्टोसिस का प्रकोप: ... 21
- प्रसन्नता, स्वास्थ्य और शान्ति का अद्भुत श्रोत- बागवानी 22
- सोयाबीन की उन्नत खेती 23
- 'किसान क्रेडिट कार्ड योजना' 24
- गोजातीय तपेदिक... 25

उत्तर प्रदेश

- कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा की स्थिति ... 26
- सखरीफ सब्जी फसलों में होने वाले प्रमुख रोग ... 27
- प्याज की वैज्ञानिक खेती, लाभ एवं कीट, रोग प्रबंधन 28
- हल्दी के उपयोग और औषधीय गुण 29
- 'एकीकृत कृषि प्रणाली: समन्वित खेती .. 30
- एकीकृत कृषि प्रणाली 31
- कीट-विष और उनके उपचार 32
- सोरघम के मानव जीवन में पोषण संबंधी लाभ 33
- प्राकृतिक बायोसर्फेक्टेंट्स का उपयोग ... 34
- मिट्टी के नमूने लेने की विधि 35
- किसान सम्मान निधि योजना 36
- उत्तर भारत में मार्च से जुलाई के दौरान हीटवेव.. 37
- मिट्टी परीक्षण के फायदे 38
- नैनो टेक्नोलॉजी 39
- जैव विविधता का कृषि एवं पर्यावरण पर प्रभाव 40
- 'धान की खेती का भविष्य रोग प्रबंधन पर निर्भर है!'... 41

राजस्थान

- वृक्षायुर्वेद शिक्षा: भारतीय समाज पर प्रभाव... 42
- भिंडी फसल में लगने वाले कीट और उनका प्रबंधन 43
- वैज्ञानिक खेती से आम की गुणवत्ता... 44
- अफीम की खेती की उन्नत तकनीक 45
- राजस्थान में जलवायु परिवर्तन: ... 46

बिहार

- कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु आवासीय प्रशिक्षण 47
- गर्मी मौसम के फूल 48

हरियाणा

- केंचुआ खाद के प्रयोग से मृदा सुधार 49
- जल संरक्षण का कृषि में महत्व 50

उत्तराखण्ड

- बे-मौसमी सब्जी उत्पादन:.. 51

नई दिल्ली

- पशुपालन की रीढ़: चारा ज्वार का चमत्कारी योगदान.. 52

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सोयाबीन के उच्च उत्पादन के लिए उगाएं अर्ली किस्म JS. 23-03 और NRC 150

प्रदीप खडीकर 9301606161
वसुन्धरा सीड्स, उज्जैन (म.प्र.)

1. सोयाबीन की नवीनतम अर्ली किस्म जे. एस. 23-03 :- विगत कई वर्षों से किसान इस बात का इंतजार कर रहे थे कि जे. एस. - 9560 व जे.एस.-20-34 व अन्य परन्परागत अर्ली किस्मों के बाद उन्हें एडवांस जनरेशन की एक एसी सोयाबीन की अर्ली किस्म का विकल्प मिले जिनमें इन परम्परागत अर्ली किस्मों में आ रही वायरस, कम उचाई, फूटने (शेटरिंग) व निरन्तर घट रहे उत्पादन की समस्या का सम्पूर्ण समाधान तो मिले ही तथा बढ़ते हुए कटाई में मजदूरी खर्च को देखते हुए इस किस्म की ऊंचाई अच्छी हो ताकि हार्वेस्टर से काटने में भी उपयुक्त हो। साथ ही उसमें दाने की गुणवत्ता व उच्च उत्पादन क्षमता एसे दोनों गुणों का भी संयोजन हो ताकि सोयाबीन उत्पादन में विगत कई वर्षों से कम उत्पादन, बढ़ती खेती की लागत व कम बाजार भाव के कारण हो रहे लगातार नुकसान की भरपाई हो सके व उपरोक्त कारणों का समाधान देकर सोयाबीन उत्पादन को लेकर जो किसानों में निराशा आ रही है उनमें पूर्वानुसार एक उत्साह का संचार कर सके। इस बाबत किसानों का इंतजार खत्म हुआ। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय (**J.N.K.V.V.**) म.प्र. द्वारा वर्षों की कड़ी मेहनत व गहन अनुसंधान के पश्चात सोयाबीन की नवीनतम अर्ली, चमत्कारी किस्म जे. एस. 23-03 अवधि लगभग 88- 7 90 दिवस देश के मध्यक्षेत्र म.प्र./ राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र के विदर्भ मराठवाड़ा व उ.प्र. के बुन्देलखण्ड में बोनी हेतु जारी की है जो कि किसानों की उपरोक्तानुसार बताई गई आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं को पूर्ण करने में भविष्य में पूरी तरह से सक्षम एवं सफल रहेगी व शीघ्र ही परंपरागत सोयाबीन की किस्मों को अपने बहु आगामी गुणों के कारण शीघ्र विस्थापित कर अपना एक उच्च स्थान बनाकर किसानों में बहुत जल्दी लोकप्रिय हो जाएगी।

इस सोया जाति में जल्दी कटाई होने के गुण के कारण खेत में उपलब्ध वर्षाकाल की नमी का उपयोग करते हुए असिंचित अवस्था में भी रबी फसलों की सूखा निरोधक किस्मों का भी उत्पादन लिया जा सकता है। साथ ही जल्दी कटाई होने के कारण खेत खाली होने की स्थिति में अगाती (अर्ली) रबी की फसलें लहसुन-आलू-प्याज, मटर, चना डॉलर चना, शरबती गेहूँ लेने वाले किसानों के लिए यह किस्म एक आदर्श विकल्प है। इससे किसानों का फसल चक्र प्रबंधन अधिक आसान एवं सुविधाजनक हो जाएगा। सोयाबीन एवं आगे की रबी अगाती फसलों का उत्पादन भी जल्दी प्राप्त होने से मण्डी में उसे जल्दी विक्रय कर किसान मण्डी में भीड़भाड़ से मुक्ति तथा उच्चतम भाव का लाभ ले सकते हैं।

प्रमुख गुण (केरेक्टर) :- दाने का आकार गोलाकार, बोल्ड, पीला, चमकदार, बहुत आकर्षक हायलम काला, 100 दानों का वजन लगभग 12/13 ग्राम अंकुरण क्षमता बहुत अच्छी लगभग 85/90 प्रतिशत पौधे का आकार अर्द्ध फैलाव वाला मध्यम ऊंचाई वाला लगभग 47 सेंमी. वाला पौधा सेमिइरेक्ट अच्छी शाखाओं वाला पौधा पत्ती का रंग गहरा हरा आकार मध्यम चोड़ी गोलाकार पत्तिया पाइन्टेड ओवेट पत्ती रोएदार नहीं चिकनी, फूलों का रंग परपल (बैंगनी) आधे फूल आने की अवधि लगभग 36 से 38 दिन फलियों का रंग भूरा (ब्राउन) फलियां रोएदार नहीं, चिकनी, फलियों में चटकने (शेटरिंग) की समस्या बिलकुल नहीं तीन दाने की फलियाँ अधिक, इन्टरनोड शार्ट होने से फलियाँ अधिक।

रोग प्रतिकार क्षमता येलो मोजेक एंथेक्रोनोज, राइजोक्टेनिया एरियल ब्लाईट व अन्य जड़ सहन, चारकोल रॉट आदि रोगों एवं चूसने व काटने वाले कीटों के प्रति सहनशीलता एवं प्रतिरोधकता का गुण व अन्य कई प्रकार की बीमारियों एवं कीट रोधी क्षमता/ सहनशीलता के कारण इस किस्म को मल्टीपल रेजीस्टेस वैरायटी के रूप में भी जाना जाएगा। इस किस्म की बीज दर लगभग 40 किलो एकड़ या 100 से 110 किलो हेक्टेयर रखने व लाईन से लाईन की दूरी 14 इंच रखने, आदर्श कार्यमाला अपनाने, सिंचाई एवं जल निकासी नियोजन, फर्टीगेशन, कीट/व्याधि नियंत्रण एवं खरपतवार नियंत्रण की उत्तम व्यवस्था रखने पर आदर्श परिणाम जे.एस. 23-03 सोयाबीन की इस अर्ली किस्म

वसुन्धरा सीड्स
51, राजस्व कॉलोनी, टंकी पथ, उज्जैन - 456 010 (म.प्र.)
फोन : 2530547 मो. : 9301606161, 9425332517
ई-मेल : vasundharabio@yahoo.co.in
गोडाऊन : बड़ी उद्योगपुरी, मक्सी रोड, महावीर तोल कांटे के पास गोल्डन टाईल्स के सामने, उज्जैन मो. 9669176048, 7649839062

ने भारत में पूर्व में प्रचलित अन्य सभी अर्ली सोयाबीन की किस्मों से 27 प्रतिशत अधिक उत्पादन देकर एक नया रिकार्ड बनाया है। इन्दौर में इस किस्म के 31.89 क्विंटल हेक्टेयर का उत्पादन दिया है। व्यवहारिक रूप से किसानों द्वारा भी इस किस्म का अधिकतम उत्पादन 7 क्विंटल बीघा तक भी लिया गया है।

अन्त में सोयाबीन की यह अर्ली किस्म जिसका दाना व उत्पादन इतना आकर्षक है कि जो बाजार व किसान दोनों का दिल जीतकर शीघ्र ही यह किस्म कृषि क्षेत्र में सर्वोच्चता में नए आयाम बनाते हुए सोयाबीन की खेती में एक मील का पत्थर साबित होगी।

2. सोयाबीन की नवीनतम अर्ली किस्म जे. एस. 24-33 :- विगत कई वर्षों से किसान इस बात से परेशान है कि एक अच्छी प्रमाणिक अर्ली सोयाबीन किस्म में उनके पास जे.एस. 95-60 व जे.एस. 20-34 के बाद जिनमें वायरस, कम ऊंचाई फुटने (शेटरिंग) निरंतर कम हो रहे उत्पादन आदि समस्याएं देखी गई हैं, इन सबका निदान देने वाली कोई एडवांस जनरेशन की अर्ली किस्म उन्हें एक बेहतर विकल्प के रुप नही मिल पा रही थी। किसानों की इन समस्याओं के समाधान एवं एक आदर्श विकल्प के रुप में जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (J.N.K.V.V.) म.प्र. द्वारा वर्षों के गहन अनुसंधान के पश्चात् एक नई सोयाबीन की अर्ली किस्म जे.एस.-24-33 अवधि लगभग 88-90 दिन विकसित की गई है जो कि पूर्व में जारी परंपरागत सोयाबीन किस्मों 95-60- 20-34 व अन्य से अधिक एडवांस किस्म तो है ही किन्तु बेहतर वायरस एवं कीटरोधक क्षमता, फुटने (शेटरिंग) की समस्या नहीं अच्छी ऊंचाई जो कि मैकेनिकल हार्वेस्टर के लिए उपयुक्त आदि गुणों के अतिरिक्त उच्च उत्पादन क्षमता के बहुगुणी विशेषताओं के साथ देश के मध्यक्षेत्र म.प्र., राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र में विदर्भ, मराठवाड़ा व उ.प्र. के बुदेलखण्ड क्षेत्र हेतु अनुशंसित की गई है।

प्रमुख गुण (केरेक्टर) इस किस्म के दाने का आकार गोलाकार, मध्यम, बोल्ड पीला, चमकदार, हायलम का रंग काला 100 दानों का वजन लगभग 11.25 ग्राम अंकुरण क्षमता बहुत अच्छी लगभग 85-90 प्रतिशत पौधो का आकार अर्द्ध फैलाव वाला मध्यम 7 अच्छी ऊंचाई वाला ऊंचाई लगभग 50 सें.मी. मैकेनिकल हारवेस्ट के लिए उपयुक्त ब्रांचिग बहुत अच्छी सेमिइरेक्ट टाईप का पौधा ।

फूलों का रंग परपल (बैंगनी) आधे फूल आने की अवधि लगभग 35 से 40 दिवस ।

फलियों का रंग भूरा (ब्राउन) फलियां चीकनी रोएदार नहीं, फलियों में चटकने (शेटरिंग) की समस्या नहीं, तीन व चार दाने की फलियां, फलियां झुमके में, इन्टरनोंड शार्ट होने से भी अधिक फलियां कोटीलीडन कलर (दाल का रंग) **पीला तेल की मात्रा 20.65 प्रतिशत,** रोग येलो मोजेक चारकोल रॉट व जड़ सड़न के लिए प्रतिरोधी क्षमता सहनशीलता, कीटरोधक क्षमता पत्ती चूसने वाले व पत्ती काटने वाले कीटों के लिए प्रतिरोधी क्षमता/सहनशीलता आदि गुणों के कारण इस किस्म को मल्टीपल रेजीस्टेस वैरायटी की श्रेणी में रखा जा सकता है।

आलू प्याज लहसुन मटर, डालर चना शरबती गेहूँ आदि अगाति फसल लेने वाले किसानों के लिए सोयाबीन की यह अर्ली किस्म वरदान सिद्ध होगी। जल्दी कटाई होने के गुण के कारण खेत में उपलब्ध वर्षाकाल की नमी का उपयोग करते हुए असिंचित अवस्था में, सूखे की स्थिति या कम वर्षा की स्थिति में भी यह किस्म लगाने वाले किसान रबी की सूखा निरोधक किस्में लगाकर भी खेती कर पूरा लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

इस किस्म की बीज दर 40 किलो प्रति एकड़ लाईन से लाईन की दूरी 14 इंच रखने आदर्श कार्यमाला अपनाने फर्टिगेशन मैनेजमेंट, जल निकासी, खरपतवार नियंत्रण, कीट, पौध संरक्षण की उत्तम व्यवस्था रखने पर आदर्श परिणाम। आदर्श परिस्थितियों में व्यवहारिक रुप से इस अर्ली किस्म की उच्च उत्पादन क्षमता का उपयोग करते हुए 30 क्विंटल या इससे अधिक उत्पादन प्रति हेक्टेयर लिया जा सकता है।

सोयाबीन की यह नवीनतम उन्नत अर्ली किस्म जे. एस. 24-33 अपने आदर्श गुणों के कारण अतिशीघ्र पुरानी परंपरागत किस्मों को विस्थापित कर अपना एक उच्च स्थान बनाकर किसानों एवं बड़े कृषि क्षेत्र में आच्छादित होकर किसानों की पहली पसंद बनकर सफलतापूर्वक अपना नाम बनाने में सफल होगी।

सोयाबीन की नवीन किस्म : एन.आर.सी.-150- सोयाबीन अनुसंधान केन्द्र (N.R.C.S.) इंदौर द्वारा वर्षों के गहन अनुसंधानों के पश्चात सोयाबीन की यह अर्ली किस्म अवधि लगभग 92 दिवस देश ने मध्यक्षेत्र म.प्र., राजस्थान, गुजरात, 7 महाराष्ट्र के विदर्भ एवं मराठवाड़ा व उ.प्र. के बुंदेलखण्ड में बोनी हेतु अनुशसित कर वर्ष 2023 में इसे जारी किया गया है।

इस किस्म का दाना बोल्ड, पीला, चमकदार, हायलम-काला 100 दानों का वजन लगभग 11.50 ग्राम पौधा ऊंचाई वाला फैलावदार हार्वेस्टर से काटने हेतु उपयुक्त, फलियां फूटती (शेटरिंग) नहीं, फलियां रोएदार चिकनी नहीं, तीन दाने की फलियां, पत्तियां चोड़ी गोलाकार, फूलों का रंग सफेद फूल आने की अवधि 30/-35 दिन कीट/रोग प्रतिकारक क्षमता अच्छी ।

इस किस्म की बीज दर लगभग 40 किलो/ एकड़ व लाईन से लाईन की दूरी 14 इंच रखने पर आदर्श परिणाम। व्यवहारिक रूप से 30/35 क्विंटल हेक्टेयर तक अधिकमतम उत्पादन देने की क्षमता।

केविके ग्वालियर द्वारा आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण

ग्वालियर। कृषि विज्ञान केन्द्र, ग्वालियर द्वारा "मिलेट तथा स्थानीय उत्पादों के प्रसंस्करण द्वारा पोषण सुरक्षा" विषय पर दो दिवसीय प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। प्रशिक्षण कार्यक्रम में वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. रीता मिश्रा द्वारा ग्रामीण स्तर पर कुपोषण को कम करने तथा पोषक तत्वों की पूर्ति करने के लिए मिलेट तथा स्थानीय उत्पादों के पौष्टिक गुणों के साथ-साथ उनकी प्रसंस्करण तकनीकियों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया। इसमें जिले की 30 आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की सक्रिय भागीदारी रही। महिलाओं को पौष्टिक एवं स्वादिष्ट प्रसंस्करित उत्पादों के निर्माण में साफ-सुथरे उपयोगी उपकरण, शुद्ध पानी का उपयोग, ठंडे, सूखे व हवादार स्थान पर उत्पादों के संग्रहण, आदि का विशेष ध्यान रखने योग्य बातों के बारे में भी बताया गया। कार्यक्रम में डॉ. मिश्रा द्वारा आंगनवाड़ी क्को मिलेट के विभिन्न पौष्टिक व्यंजनों जैसे मल्टीग्रेन आटा, दलिया, बिस्किट, केक, लडडू, नमकीन तथा स्थानीय स्तर पर उपलब्ध गुणकारी एवं पौष्टिक गुणों से भरपूर पौष्टिक सब्जियों जैसे सहजन की पत्तियां से पाउडर बनाना, सहजन की पत्ती व फली का अचार बनाना आदि का प्रायोगात्मक प्रशिक्षण भी प्रदान किया गया। प्रशिक्षणार्थियों को केन्द्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. एस.पी.एस. तोमर तथा अन्य वैज्ञानिकों डॉ. जितेन्द्र राजपूत, डॉ. अमिता शर्मा तथा डॉ. एस.सी. श्रीवास्तव के व्याख्यानों द्वारा पोषण सुरक्षा विषय पर जानकारी भी प्रदान की गई।

एक दिवसीय जागरूकता अभियान

पटना। एकीकृत बागवानी विकास मिशन कृषि मंत्रालय एवं किसान कल्याण भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा एक दिवसीय जागरूकता अभियान का आयोजन गांव गोसाई गांव घोसवरी पटना में आयोजित किया गया। इस एमआईडीएच अभियान में मुख्य अतिथि प्रखंड उद्यान पदाधिकारी घोसवरी, बैज्ञानिक कृषि विज्ञान केंद्र पटना एवं डॉ. एचएम सिंह केन्द्र प्रभारी एनएचआरडीएफ पटना आदि उपस्थित रहे। साथ ही 60 किसान भी इस अभियान में उपस्थित रहे। इस अभियान के आयोजक डॉ. एचएम सिंह ने प्याज और लहसुन प्रजातियां एवं एमआईडीएच के बारे में विस्तृत जानकारी दी। साथ ही साथ मुख्य अतिथि अन्य अधिकारी गण किसान भाइयों का स्वागत एवं अभिनंदन किया। उद्यान पदाधिकारी घोसवरी द्वारा किसानों को एमआईडीएच स्कीम उद्यान विभाग बिहार सरकार द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न प्रकार के स्कीम के बारे में बताया तथा किसानों को विभिन्न फसलों एवं अन्य स्कीमों पर दिए जा रहे अनुदान पर प्रकाश डाला। सभी किसानों को किचन गार्डन किट वितरण किया गया।

पशुपालन से ही खेती लाभ का व्यवसाय बनेगा

मंदसौर। उप मुख्यमंत्री राजेन्द्र शुक्ल ने रीवा जिले के होटल विजय विलास में आयोजित प्रांतीय राजपत्रित पशु चिकित्सक संघ के सम्मेलन का शुभारंभ किया। उप मुख्यमंत्री श्री शुक्ल ने कहा कि निराश्रित और बीमार गौवंश की सेवा तथा पुनर्वास वर्तमान समय की बड़ी चुनौती है। सरकार आधुनिक गौशालाओं का निर्माण कराकर निराश्रित गौवंश को आश्रय देने तथा खेती को बचाने का प्रयास कर रही है। प्रदेश भर में बड़ी संख्या में उन्नत गौशालाओं का निर्माण किया जा रहा है। इनमें हजारों गायों को नया जीवन मिलेगा। इस अभियान में निजी क्षेत्र की भी भागीदारी सुनिश्चित की जा रही है। गौमाता की सेवा से ही मानव जाति का कल्याण होगा। अगर गौमाता बेसहारा रही तो मानव जाति का भविष्य सुरक्षित नहीं होगा। श्री शुक्ल ने कहा कि रीवा में बसामन मामा गौवन्य विहार में सात हजार से अधिक निराश्रित गायों को आश्रय दिया गया है। इन गायों की सेवा में पशु चिकित्सक बड़ी तत्परता और लगन से कार्य कर रहे हैं। शीघ्र ही हिनौती में भी आधुनिक गौशाला शुरू होगी जिसमें लगभग 25 हजार गौवंश को रखने का लक्ष्य रखा गया है।

जनेकृविवि में प्रजनक बीज उत्पादन कार्यक्रम का किया गया डिजिटलीकरण

जबलपुर। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय,जबलपुर में लगातार कृषि शिक्षा, अनुसंधान एवं कृषकों के हित में विभिन्न कार्यक्रम एवं प्रयास किये जा रहे हैं। इसी क्रम में विश्वविद्यालय द्वारा एक और सराहनीय कार्य किया गया है। दरअसल भारत सरकार के कृषि, सहकारिता एवं किसान कल्याण तथा कृषि विभाग, नई दिल्ली तथा राष्ट्रीय बीज विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी संस्थान, मऊ (उ.प्र.) के सहयोग से जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर में प्रजनक बीज उत्पादन कार्यक्रम का डिजिटलीकरण कुलपति डॉ. प्रमोद कुमार मिश्रा के मार्गदर्शन में प्रारंभ किया गया है। इस संबंध में संचालक प्रक्षेत्र डॉ. अनीता बब्बर ने महत्वपूर्ण जानकारी देते हुये बताया कि विश्वविद्यालय में प्रजनक बीज उत्पादन कार्यक्रम को साथी पोर्टल के माध्यम से डिजिटलाइज्ड किया गया है, जिसमें बुवाई से लेकर कटाई तथा वितरण की संपूर्ण जानकारी पोर्टल पर अपलोड की जाएगी। इसके अंतर्गत विश्वविद्यालय के 24 प्रक्षेत्रों को क्यूआर कोड आधारित टैग प्रिंटर तथा उससे संबंधित सामग्री प्रदान की गई है। इस कार्यक्रम में विश्वविद्यालय के विभिन्न प्रक्षेत्रों के प्रक्षेत्र प्रभारी तथा डॉ. मनोज श्रीवास्तव, डॉ. संजय सिंह एवं डॉ. अजय जायसवाल का सराहनीय योगदान रहा।

01/2023-24

किसानों की जागरूकता खरपतवार प्रबंधन का प्रमुख औजार

ग्वालियर। किसानो की जागरूकता खरतपतवार प्रबंधन का प्रमुख औजार है। यही औजार फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में सहायक है। इस समय किसानों के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती खरपतवार का प्रबंधन करना है क्योंकि यह खरपतवार फसलीय क्षेत्र व गैर फसलीय क्षेत्र को प्रभावित करता है, या यूं कहा जाए कि यह अपना प्रभाव सभी जगह छोड़ता है या दिखाता है जैसे कि तालाब, कच्चे रास्ते, खाली पड़ी जमीन, भवन और खेत इनके प्रमुख स्थान होते है। इन सभी जगहों पर खरपतवार का प्रबंधन कर अपनी फसलों को सुरक्षित रखे जाने के संबंध में देशभर से आये 50 से अधिक कृषि वैज्ञानिकों ने अपने-अपने शोध व अनुभव साझा किये। उल्लेखनीय है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर एवं राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर के संयुक्त तत्वाधान में दो दिवसीय अखिल भारतीय समन्वित खरपतवार प्रबंधन परियोजना की 32वी वार्षिक समीक्षा बैठक का समापन हुआ।

इस अवसर पर खरपतवार अनुसंधान निदेशालय, जबलपुर के निदेशक डॉ. जे. एस. मिश्रा ने बताया कि सबसे बड़ी समस्या गाजरघास और तालाबों में जलकुम्भी बनी हुई है। इनके सम्पर्क में आने पर त्वचा संबंधी समस्याऐं तो उत्पन्न होती ही है यह फसल की उत्पादकता को भी घटा देती है। खरपतवार प्रबंधन किस तरह से किया जा सके इसको लेकर देश भर के वैज्ञानिकों ने इस पर शोध किया और नयी-नयी तकनीके इजाद की जिनका प्रयोग कर किसान खरपतवार का प्रबंधन कर सकता है और फसल पैदावार को बढ़ाया जा सकता है। कार्यक्रम को सम्बोधित करते हुए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के पूर्व उप सहायक निदेशक डॉ. एस भास्कर ने बताया कि वैज्ञानिकों ने खरपतवार प्रबंधन को लेकर ड्रोन तकनीक का प्रयोग अलग-अलग फसलों पर किया जिसमें उन्होंने खरपतवार पर नियंत्रण करने में सफलता हासिल की। वैज्ञानिकों ने बताया कि ड्रोन का उपयोग किस मौसम में, किस ऊँचाई पर कितनी दवा का प्रयोग करना चाहिए। इसी तरह से जलीय खरपतवार को किस तरह से नियंत्रण करना चाहिए। कार्यक्रम के समन्वयक डॉ. आर. पी. दुबे ने बताया कि खरपतवार प्रबंधन को लेकर जलवायु परिवर्तन एक बड़ी चुनौती है। जिस तरह से जलवायु परिवर्तन हो रहा है उसमें खरपतवार की पैदावार बढ़ रही है। जिसकी रोकथाम के लिये उपकरण एवं दवाओं के प्रयोग पर वैज्ञानिक कार्य कर रहें है।

कार्यक्रम में मुख्य अतिथि डॉ. ए.के. नायक, उप महानिदेशक (प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन), भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. ए. वेलुमुरूगन, सहायक महानिदेशक (मृदा एवं जल प्रबंधन), भा.कृ.अ.प., नई दिल्ली कार्यशाला से वर्चुअल माध्यम से जुड़े।

'आओ पेड़ लगायें'

आओ मिलकर पेड़ लगाये
गऊ दान सा पुण्य कमाये।
आने, वाली, पीढ़ी को हम,
प्राण, वायु का ज्ञान कराये।

छाया फल दें हमें हमेशा
आओ ऐसे पेड़ लगाये।
गर्मी में शीतला दे और,
पशु पक्षी भी राहत पाये।

बरगद, पीपल, नीम, आम,
शीशम इमली को अपनायें।
प्राणवायु, पेड़ों, से, मिलती
आओ मिलकर पेड़ लगायें।

कचनार और गुलमोहर से
पृकृति को रंगीन बनायें।
महुआ करंज बांस चिरोंजी
इन्हें बेच पैसा भी पायें।

वेद पुराण और ज्ञानी जन
ये ही कहते आये हैं।
सो गऊ दान पुण्य पाया है
जिसने पेड़ लगाये हैं।

आओ मिलकर आज एक
हम मन में बात बिठायें।
छाया फल दें हमें हमेशा,
हम ऐसे ही कुछ पेड़ लगाये।

-सुरेश विचित्र

गेहूँ के अवैध भण्डारण एवं परिवहन करने वालों पर एफ.आई.आर.दर्ज

अशोकनगर। जिले की चंदेरी तहसील अंतर्गत ग्राम बडेरा में शासकीय गेहूँ के अवैध भण्डारण एवं परिवहन की सूचना पर जांच की गई। जांच उपरांत इस संबंध में कनिष्ठ आपूर्ति अधिकारी चंदेरी संजीत सिंह ने थाना चंदेरी में 8 आरोपियों के विरूद्ध एफ.आई.आर. दर्ज कराये जाने हेतु लिखित आवेदन दिया था, जिसके आधार पर 8 आरोपियों पर एफ.आई.आर. दर्ज की गई है। एफ.आई.आर. में 10 मई को चंदेरी के ग्राम बडेरा में गेंहू के अवैध भंडारण एवं परिवहन की सूचना पर जांच की गई। जिसमें पाया कि ग्राम बडेरा में अरविन्द लोधी पुत्र श्रीलाल सिंह लोधी के मकान पर गेंहू के 91 कट्टे, भगवान सिंह पुत्र भूपतसिंह के मकान पर गेंहू के 105 कट्टे एवं खुशी लाल पुत्र देशराज यादव के घर गेंहू के 204 कट्टे कुल 400 कट्टे (200 क्विंटल) पाये गये। उत गेंहू उपार्जन वर्ष 2025-26 के बारदानों में रखा पाया गया। मौके पर 02 अन्नदूत वाहन क्रमांक एमपी 67 जैड बी 8170 तथा वाहन क्रमांक एमपी 67 जैड बी 2818 इसके परिवहन के लिये उपयोग करते पाये गये। मौके पर उत 200 क्विंटल गेंहू और 02 अन्नदूत वाहन जप्त किये गये।

12/2025-26

श्रीअन्न का उत्पादन बढ़ाएं, सरकार खरीदेगी किसानों से श्रीअन्न

भोपाल। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा है कि प्रदेश में रागी, कोदो-कुटकी, ज्वार-बाजरा, मक्का जैसे श्रीअन्न का उत्पादन बढ़ाया जाए और किसानों को श्रीअन्न उत्पादन के लिए प्रोत्साहि त किया जाए। किसानों द्वारा उत्पादित श्रीअन्न अब सरकार खरीदेगी। उन्होंने कहा कि तुअर उत्पादक किसानों को अच्छे किस्म के खाद, बीज और उत्पादन वृद्धि के लिए प्रोत्साहन भी दिया जाए। इसके लिए किसानों को फसल अनुदान देने और उनकी फसल का बीमा कराने जैसे नवाचार भी किये जा सकते हैं।

मुख्यमंत्री डॉ. यादव शुक्रवार को मंत्रालय में किसान कल्याण एवं कृषि विकास विभाग की समीक्षा बैठक को संबोधित कर रहे थे। बैठक में किसान कल्याण एवं कृषि विकास मंत्री श्री एदल सिंह कंषाना, मुख्य सचिव श्री अनुराग जैन, अपर मुख्य सचिव मुख्यमंत्री कार्यालय डॉ. राजेश राजौरा, अपर मुख्य सचिव सहकारिता श्री अशोक बर्णवाल, सचिव कृषि श्री एम. सेल्वेन्द्रम सहित विभागीय अधिकारी उपस्थित थे। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने प्रदेश की सभी मंडियों में प्रबंधन पर विशेष ध्यान देने के निर्देश दिए। उन्होंने कहा कि सभी मंडियों का विभागीय वरिष्ठ अधिकारियों से आकस्मिक निरीक्षण करायें। मंडियों की व्यवस्थाओं को और भी बेहतर बनाया जाए। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि नई जरूरतों के मुताबिक अब अलग-अलग मंडियों की स्थापना पर विचार किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि मंडियों का फसलवार मॉडल तैयार करें। कृषि उपज मंडी के अलावा अब फल व सब्जी मंडी, मसाला मंडी या अन्य विशेष पैदावार की मंडी स्थापना के लिए भी प्रयास किए जाएं। इसके लिए रोडमैप तैयार किया जाए और यदि आवश्यकता है तो इसमें प्रायवेट सेक्टर को भी सम्मिलित किया जाए। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि मंडियों में जारी वर्तमान व्यवस्थाओं का समुचित तरीके से किसानों के हित में प्रबंधन किया जाए। मंडी शुल्क की प्राप्त राशि से किसानों की कल्याण गतिविधियों पर फोकस किया जाए। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि प्रदेश की कृषि उपज मंडियों को आदर्श बनाया जाए। मंडियों में कृषि आधारित सभी व्यवस्थाएं सुनिश्चित हों। मंडियों में किसानों को फसल बेचने में किसी भी प्रकार की असुविधा का सामना न करना पड़े। मंडी में अपनी फसल बेचने आने वाले हर किसान को उसकी उपज का सही दाम मिले किसी का भी नुकसान न होने पाए। मंडियों को और अधिक आधुनिक बनाया जाए यहां किसानों को उनके उपज में गुणवत्ता संवर्धन के बारे में भी बताया जाए। मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि सभी मंडियां अपने विकास कार्यों के लिए आत्मनिर्भर बनें। उन्होंने कृषि अधिकारियों को निर्देशित किया कि वे स्थानीय निकायों से नई मंडियों की स्थापना/ फसल भण्डारण क्षमता बढ़ाने के लिए समन्वय करें, जिससे किसानों को अपनी फसल बेचने के लिए अधिक सुविधाएं मिल सकें।

किसानों को मिले प्रोत्साहन

मुख्यमंत्री डॉ. यादव ने कहा कि फसलों का उत्पादन बढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास किए जाएं। प्रदेश के किसानों को रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर उन्नत

जैव विविधता संरक्षण के संकल्प के साथ विदिशा जिले की नवांकुर संस्थाओं का नर्सरी प्रशिक्षण

विदिशा। मध्यप्रदेश जन अभियान परिषद जिला विदिशा द्वारा विश्व जैव विविधता दिवस विविधता दिवस पर समृद्धि योजना अंतर्गत नवांकुर संस्थाओं का नर्सरी प्रशिक्षण आज हलाली रोपणी, इकाई विदिशा में आयोजित किया गया। कार्यक्रम में मुख्य रूप से वन विभाग के सेवानिवृत्त रेंज अधिकारी श्री एससी जैन, संभाग प्रभारी राज्य कार्यालय, श्री अमिताभ श्रीवास्तव, श्री वरुण आचार्य संभाग समन्वयक भोपाल, श्री अक्षय सिंह, रेंजर वन विभाग, जिला समन्वयक श्रीमति पूजा बंधैया मौजूद रहे। कार्यक्रम के प्रारंभ में संस्था्ओं द्वारा अपने कार्यक्षेत्र में किये जा रहे कार्यों की जानकारी दी गई। वन विभाग के सेवानिवृत्त अधिकारी श्री एससी जैन द्वारा जैव विविधता दिवस के अवसर पर जैव विविधता के संरक्षण के लिए संस्थाओं को सक्रियता से कार्य करने हेतु प्रेरित किया। साथ ही नर्सरी निर्माण के लिए आवश्यक तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान किया। वन विभाग के रेंजर श्री अक्षय सिंह द्वारा नर्सरी तैयार करने की आवश्यक विधियों के बारे में जानकारी दी एवं प्रतिभागियों की समस्याओं का समाधान किया।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता
हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं
पता : अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

मशरूम उत्पादन में आवश्यक सावधानियां

✍डॉ.रीता मिश्रा एवं डॉ. वाई.डी.मिश्रा
रा.वि.कृ.वि.-कृषि विज्ञान केन्द्र, ग्वालियर (म.प्र.) एवं विस्तार निदेशालय, रा. वि. सिं. कृषि वि.वि., ग्वालियर

भारत में मशरूम का उत्पादन दिन प्रतिदिन प्रचलित हो रहा है। पोषण से भरपूर मशरूम का सब्जियों में एक विशेष स्थान है। भारत में मुख्य रूप से बटन, ऑयस्टर, दूधिया, पैडीस्ट्रा तथा शिटाके मशरूम का उत्पादन किया जा सकता है। मशरूम सुपाच्य प्रोटीन तथा अन्य पौष्टिक तत्वों का एक अच्छा स्रोत है। कम लागत में अधिक मुनाफा देने वाली मशरूम की खेती युवाओं तथा ग्रामीण कृषकों व महिलाओं के लिए अत्यन्त लाभकारी है।

मशरूम उत्पादन से लाभ

* कृषि अपशिष्ट जैसे गेहूँ का भूसा, धान का पुआल, बाजरे का डंठल आदि का प्रयोग।
* कम समय, कम उत्पादन लागत व अधिक लाभ।
* उपयोगी पोषक खाद्य पदार्थ की उपलब्धता (तालिका 1)।
* उत्पादन पश्चात बचे हुए अवशेष का कृषि तथा बागवानी में खाद की तरह प्रयोग।
* अतिरिक्त आय/रोजगार का स्त्रोत।

मशरूम उत्पादन हेतु स्थान के चुनाव में सावधानियां

मशरूम उत्पादन हेतु उपजाऊ भूमि की आवश्यकता नहीं होती है। इसका उत्पादन घर/तलघर, बंद कमरों या घास की बनी झोपड़ियों में आसानी से किया जा सकता है। व्यावसायिक स्तर पर मशरूम उत्पादन हेतु 1000 वर्ग मीटर क्षेत्र पर्याप्त होता है। **मशरूम उत्पादन हेतु स्थान का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है-**

* स्वच्छ एवं साफ वातावरण वाले स्थान का चुनाव।
* पानी की आसानी से उपलब्धता।
* पोषाधार की उपलब्धता।
* खाद, रसायन, पॉलीथीन हेतु नजदीकी बाजार।
* परिवहन की सुचारू व्यवस्था।
* मजदूर की आसानी से उपलब्धता।
* बिजली की उपलब्धता।
* विपणन व्यवस्था हेतु नजदीकी बाजार की उपलब्धता।

मशरूम उत्पादन हेतु स्थान का चयन करते समय वर्षभर तापमान तथा नमी का ध्यान रखना आवश्यक है जिससे प्राकृतिक जलवायु का पूरा लाभ उठाया जा सकता है तथा मशरूम उत्पादन की लागत को भी कम किया जा सकता है।

मशरूम के अधिक उत्पादन हेतु ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बिन्दु

मशरूम उत्पादन में सफाई का विशेष महत्व है

जिससे अनेक प्रकार की बीमारियों व कीड़ों के अनुक्रम को कम किया जा सकता है।

* मशरूम उत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं जैसे स्पॉनिंग, स्पॉन बढ़वार, पिन हेड आदि में साफ-सफाई रखना अत्यन्त आवश्यक है।
* ऑयस्टर मशरूम की विभिन्न प्रजातियों का रंग अलग-अलग होता है (तालिका 2) तथा इसके उत्पादन में कवकजाल व फलनकाय निर्माण हेतु तापमान का विशेष ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है (तालिका 3)।
* उत्पादन हेतु प्रयोग किया जाने वाला आधार/भूसा चमकीला, सूखा, साफ-सुथरा, बीज रहित, फफूंदी रहित होना चाहिए तथा यह बरसात के पानी से भीगा हुआ नहीं होना चाहिए।
* मशरूम स्पॉन को बनाने एवं संग्रहण करते समय संक्रमण से बचाना अत्यन्त आवश्यक है एवं इसमें किसी भी प्रकार की दूसरी फफूंद का प्रकोप नहीं होना चाहिए।
* मशरूम कक्ष में उत्पादन पूर्व आंतरिक दीवारों एवं फर्श पर 20 मिली./लीटर फॉर्मेलिन तथा 1.0 ग्राम/लीटर कार्बेन्डाजिम 50 डब्लू.पी. का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।
* मशरूम उत्पादन कक्ष की दीवारों तथा खिड़कियों में जाली का प्रयोग करना आवश्यक है जिससे कीड़े कक्ष में प्रवेश न कर सकें।
* स्पॉनिंग (बीज मिलाने का कार्य) बन्द जगह/कमरे में करना चाहिए।
* मशरूम उत्पादन आरंभ होने पर सुबह व शाम को 1 से 2 घंटे के लिए खिड़की व दरवाजों को खोल देना चाहिए जिससे शुद्ध हवा का संचार बना रहे।
* नमी बनाए रखने के लिए हाइग्रोमीटर जैसे यंत्र मशरूम उत्पादन कक्ष में आवश्यक रूप से पर होना चाहिए।
* मशरूम उत्पादन में प्रयोग करने वाले औजार एवं मशीनों का भंडारण भी साफ स्थान पर करना चाहिए।
* मशरूम उत्पादन कक्ष के सभी थैलों में से यदि कुछ थैले संक्रमित हो गए हों तो उन्हें दूर किसी स्थान में ले जाकर फेंक दें या गड्ढे में दबा देना चाहिए।
* साफ हाथों से पहले नए मशरूम को इसके बाद पुराने मशरूम को तोड़ना चाहिए। इस बात का ध्यान रखें कि मशरूम को घड़ी के घूमने की दिशा व विपरीत दिशा में अंगूठे व उंगलियों की मदद से घुमाकर तोड़ें जिससे इसका तना न टूटने पाए।
* मशरूम तोड़ने के पश्चात् फर्श पर गिरे हुए मशरूम के टुकड़े या अवशेष को तुरन्त उठाकर किसी अखबार में लपेटकर दूर फेंकें।
* मशरूम उत्पादन पश्चात् थैलों को वर्मीकम्पोस्ट इकाई में स्थानान्तरित करके मूल्यवान खाद का निर्माण करना चाहिए।
* मशरूम उत्पादन के बाद कक्ष को अच्छी तरह से पानी से धोकर उत्पादन पूर्व की भांति रासायनिक घोल से छिड़काव करना चाहिए।
* उत्पादन कक्ष के बाहर 1% फॉर्मेलिन के घोल से डूबा हुआ पायदान अवश्य रखना चाहिए जिससे आगन्तुकों के भ्रमण पर उनके जूते, चप्पल, आदि से संक्रमण कक्ष में न पहुंच सके। आगन्तुकों हेतु मशरूम उत्पादन कक्ष के अन्दर रखी हुई चप्पलों का प्रयोग भी किया जा सकता है।
* मशरूम उत्पादन के समय कोई भी ऐसा उपकरण प्रयोग नहीं करना चाहिए जिसे चलाने के लिए खनिज तेल का उपयोग होता है।

कुछ महत्वपूर्ण सावधानियों के साथ मशरूम का सफलतापूर्वक उत्पादन करके लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

तालिका 1: मशरूम की आहार पौष्टिकता

पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
नमी	91.0
प्रोटीन	3.50
वसा	0.40
कार्बोहाइड्रेट	0.90
लवण	1.04
अन्य	2.45

तालिका 2: ऑयस्टर मशरूम की विभिन्न प्रजातियों के फलनकाय का रंग

प्रजाति	रंग
प्लूरोटस फ्लोरिडा	सफेद
प्लूरोटस सजारकाजू	स्लेटी
प्लूरोटस डेजेमार	गुलाबी
प्लूरोटस ऑस्ट्रीयस	सफेद/धूसर

तालिका 3: ऑयस्टर मशरूम की विभिन्न प्रजातियों के लिए उपयुक्त परिस्थियां

प्रजाति	उपयुक्त तापक्रम (डिग्री से.ग्रे.)	
	कवकजाल हेतु	फलनकाय निर्माण हेतु
प्लूरोटस फ्लोरिडा	22-28	18-20
प्लूरोटस फ्लेबिलेटस	24-28	24-26
प्लूरोटस सजारकाजू	20-28	24-26
प्लूरोटस आस्ट्रीयस	22-28	20-22

श्रद्धा परमार (पीएचडी स्कॉलर)
कीट विज्ञान विभाग, राजमाता विजयाराजे
सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

आम मिली बग (ड्रोसिचा मैंगीफेरी, हेमिप्टेरा: स्यूडोकोक्सिडी)

परिचय

आम (मैंगीफेरा इंडिका) सबसे महत्वपूर्ण और व्यापक रूप से उगाया जाने वाला उष्णकटिबंधीय फल है। यह एनाकार्डिएसी परिवार से संबंधित है। आम के पेड़ को दक्षिणी एशिया का मूल निवासी माना जाता है। आम में विटामिन ए और सी भरपूर मात्रा में होता है। यह 4000 से अधिक वर्षों से आयुर्वेदिक और स्वदेशी चिकित्सा प्रणालियों में एक महत्वपूर्ण जड़ी बूटी रही है। आयुर्वेद के अनुसार, आम के पेड़ के विभिन्न भागों में विभिन्न औषधीय गुण पाए जाते हैं। आम के पेड़ की पत्तियों के रस में एंटी हाइपरसेंसिटिव गुण होते हैं जो रक्तचाप को कम करने में मदद करते हैं। पत्तियां मौखिक समस्याओं के इलाज में भी मददगार होती हैं। सूखे आम की छाल का चूर्ण खाने से दस्त से राहत मिलती है। आम के पेड़ की छाल से प्राप्त गोंद को फटे पैरों और खुजली से प्रभावित क्षेत्रों पर लगाया जा सकता है। आम तोड़ने के बाद शाखा से निकलने वाले रस को दर्द से राहत के लिए मधुमक्खी के डंक पर लगाया जा सकता है। इसके कई उपयोगों और लाभों के कारण इसे सही मायने में ÷फलों का राजा÷ कहा गया है। पके आम के फल को स्फूर्तिदायक और ताजगी देने वाला माना जाता है। इसका रस एक पुनर्योजी टॉनिक है और हीट स्ट्रोक में इस्तेमाल किया जाता है। बीजों का उपयोग अस्थमा और कसैले पदार्थ के रूप में किया जाता है। जलती हुई पत्तियों से निकलने वाले धुएं को हिचकी और गले के रोगों से राहत के लिए साँस में लिया जाता है। आम को कृषि जलवायु परिस्थितियों की एक विस्तृत श्रृंखला में उगाया जाता है और 500 से अधिक कीटों की प्रजातियों द्वारा हमला किया जाता है जहां 21 प्रजातियां विशेष रूप से पूर्वी क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण कीट हैं। आम पर आमतौर, फल मक्खियाँ (बैक्ट्रोसेरा डोर्सालिस और बी. ज़ोनाटा), आम मिली बग (ड्रोसिचा मैंगीफेरा, ग्रीन) और आम हॉपर (अमोर्टियोडस एटकिंसोनी, लेथ) सबसे विनाशकारी कीट हैं।

आम मिली बग

जीवन चक्र

मिली बग मिट्टी में 15 सेमी गहराई में अंडाकार, चमकीले गुलाबी रंग के अंडे देती हैं। अंडों से निम्फ निकलने का काम दिसंबर के अंत में शुरू होता है। पहले इनस्टार निम्फ तुरंत पेड़ों पर चढ़ते हैं। वे 3 निम्फल इनस्टार से गुजरते हैं। नर और मादा की जीवन क्षमता क्रमशः 7 और 15-35 दिन की होती है। मादा अप्रैल-मई के दौरान 22-47 दिनों तक अंडे देती है। वयस्क अंडाकार, चपटे होते हैं, शरीर सफेद पाउडर से ढका होता है। नर के पास एक जोड़ी काले पंख होते हैं और वे गहरे लाल रंग के होते हैं।

क्षति के लक्षण

आम मिली बग (ड्रोसिचा मैंगीफेरी, हेमिप्टेरा: स्यूडोकोक्सिडी), भारत में आम में लगने वाला प्रमुख कीट हैं। अंडे से निकले कीट पेड़ पर चढ़ते हैं, पुष्पक्रम पर बैठते हैं और रस को चूसते हैं और इस तरह फूल झड़ जाते हैं और फल लगने पर असर पड़ता है। इस कीट के गंभीर हमले के बाद पत्तियां सूख जाती हैं, अंतिम टहनियाँ गिर जाती हैं, फल समय से पहले गिर जाते हैं। हनी ड्यू और सूटी मोल्ड की घटना फलों के बाजार मूल्य को कम कर सकती है। आम के पौधे पर मीलीबग के संक्रमण और नुकसान के कारण उपज का नुकसान 80% तक बढ़ सकता है। मिलीबग के कारण होने वाला नुकसान सभी नुकसानों का 80% तक हो सकता है।

प्रबंधन

- मिली बग को पेड़ों पर चढ़ने से रोकने के लिए चिपचिपे बैंड या पॉलीइथिलीन बैंड का उपयोग करना चाहिए।
- 2 प्रतिशत मिथाइल पैराथियान का मृदा में अनुप्रयोग करना चाहिए।
- मिथाइल पैराथियान 1 मिली/लीटर, क्लोपायरीफोस 20 ईसी 2.5 मिली/लीटर का प्रयोग करना चाहिए।
- ऑस्ट्रेलियाई लेडीबर्ड बीटल, क्रिप्टोलेमस मोंट्रोज़िरी को 10/पेड़ की दर से छोड़ा जाना चाहिए।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

कृषि क्षेत्र में नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग: एक सतत विकास की ओर

✍ नीलम बुनकर, हार्दिक गुप्ता
कृषि महाविद्यालय इंदौर, आरवीएसकेवीवी, ग्वालियर

✍ अमन शर्मा, अभय शर्मा, मोनिका राजपूत
✍ लक्ष्मीकांत शर्मा एवं गरिमा शर्मा
कृषि महाविद्यालय ग्वालियर, आरवीएसकेवीवी, ग्वालियर

परिचय

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, और देश की एक बड़ी जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इसी पर निर्भर करती है। परंपरागत कृषि पद्धतियों में मुख्य रूप से डीज़ल और कोयले जैसे जीवाश्म ईंधनों का प्रयोग होता रहा है, जिससे न केवल पर्यावरण को क्षति पहुँचती है, बल्कि किसानों की उत्पादन लागत भी बढ़ती है। बदलते समय और बढ़ते पर्यावरणीय संकट को देखते हुए अब कृषि क्षेत्र में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का प्रयोग एक सशक्त विकल्प के रूप में उभर रहा है।

नवीकरणीय ऊर्जा

नवीकरणीय ऊर्जा वह ऊर्जा है जो प्राकृतिक स्रोतों से निरंतर प्राप्त होती है और जिसे बार-बार उपयोग में लाया जा सकता है, जैसे कि सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा, बायोमास और बायोगैस। इन ऊर्जा स्रोतों का विशेषता यह है कि ये पर्यावरण के अनुकूल होते हैं और इनका प्रयोग प्रदूषण रहित होता है।

कृषि में नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग के क्षेत्र

1.सिंचाई में सौर ऊर्जा: सौर ऊर्जा चालित पंप किसानों को बिना बिजली या डीजल के सिंचाई करने की सुविधा प्रदान करते हैं। इससे न केवल पानी की बचत होती है, बल्कि ऊर्जा की लागत भी घटती है।

2.पवन ऊर्जा: पवन ऊर्जा से संचालित टरबाइन छोटे पैमाने पर जल पंपिंग और कृषि उपकरणों के संचालन में सहायक होती हैं। समुद्र तटीय क्षेत्रों और खुले मैदानों में इसका प्रयोग अधिक सफल होता है।

3.बायोगैस: पशु अपशिष्ट, फसल अवशेष और जैविक कचरे से बायोगैस का उत्पादन किया जाता है, जिसका प्रयोग रसोई, मोटर पंप तथा कृषि मशीनों में किया जा सकता है। यह ऊर्जा स्रोत किसानों को आत्मनिर्भर बनाता है।

4.सौर सुखाने की तकनीक: सौर ड्रायर का उपयोग कृषि उपज को सुखाने में किया जाता है, जिससे भंडारण में गुणवत्ता बनी रहती है और नुकसान कम होता है।

5.शीत भंडारण: सौर ऊर्जा आधारित कोल्ड स्टोरेज प्रणाली छोटे किसानों के लिए फसलों की ताजगी बनाए रखने में सहायक होती है, जिससे उत्पाद को बेहतर मूल्य मिल पाता है।

6.कृषि यंत्रों में जैव ईंधन का प्रयोग: जैव डीज़ल जैसे ईंधन का प्रयोग ट्रैक्टर, थ्रेशर और अन्य यंत्रों में किया जा सकता है, जिससे जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता कम होती है।

लाभ

- ऊर्जा लागत में कमी और उत्पादन लागत का घटाव।
- पर्यावरण प्रदूषण में कमी और कार्बन उत्सर्जन का नियंत्रण।
- ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन।
- किसानों की आत्मनिर्भरता और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा।
- कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और भंडारण क्षमता में वृद्धि।

चुनौतियां

- प्रारंभिक लागत अधिक होना।
- तकनीकी ज्ञान की कमी और प्रशिक्षण की आवश्यकता।
- रखरखाव की व्यवस्था और तकनीकी सहायता की अनुपलब्धता।

निष्कर्ष

भारत की अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि है, और इसकी उत्पादकता प्रत्यक्ष रूप से ऊर्जा संसाधनों पर निर्भर करती है। परंपरागत रूप से किसान डीज़ल, कोयला और बिजली जैसे जीवाश्म ईंधनों पर निर्भर रहे हैं, जो न केवल पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं, बल्कि लागत भी बढ़ाते हैं। ऐसे में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत – जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोगैस और बायोमास– कृषि के लिए एक पर्यावरण-अनुकूल और आर्थिक रूप से लाभकारी विकल्प बनकर उभरे हैं। सौर ऊर्जा चालित पंपों का उपयोग सिंचाई में किया जा रहा है, जिससे बिजली और डीज़ल की लागत में भारी कमी आई है। बायोगैस संयंत्र खेतों और गोबर के अपशिष्ट से ईंधन उत्पन्न करते हैं, जो रसोई, मोटर पंप और मशीनों में उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इसके साथ ही, पवन ऊर्जा और सौर ड्रायर्स का प्रयोग कृषि उपज के भंडारण और प्रसंस्करण में भी हो रहा है।

भारत सरकार की "कुसुम योजना" जैसे प्रयास किसानों को सौर पंप और नवीकरणीय ऊर्जा उपकरणों के लिए सब्सिडी प्रदान कर रहे हैं, जिससे ग्रामीण भारत में ऊर्जा आत्मनिर्भरता को बल मिल रहा है। नवीकरणीय ऊर्जा न केवल कृषि की लागत को कम कर रही है, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण, टिकाऊ विकास और किसानों की आय में वृद्धि का मार्ग भी प्रशस्त कर रही है। आने वाला समय निःसंदेह हरित कृषि क्रांति का साक्षी होगा।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता: चीनोर रोड, छीमक, जिला–ग्वालियर (म.प्र.)
04/2023-24

ककड़ी वर्गीय फसलों में फूलन एवं फलन पर प्रशिक्षण और छंटाई का प्रभाव

कुलदीप गुर्जर एम.एससी. बागवानी (सब्जी विज्ञान)
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर

परिचय: ककड़ी वर्गीय फसलें, जैसे खीरा, ककड़ी, खरबूजा और तरबूज, भारत में महत्वपूर्ण फसलें हैं। ये फसलें अपनी पौष्टिकता और आर्थिक महत्व के कारण किसानों के बीच लोकप्रिय हैं। इन फसलों से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए उचित प्रशिक्षण और छंटाई तकनीकों का ज्ञान आवश्यक है। प्रशिक्षण और छंटाई न केवल पौधों के विकास को नियंत्रित करते हैं बल्कि फूलन और फलन की प्रक्रिया को भी महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। इस लेख में, हम ककड़ी वर्गीय फसलों में फूलन और फलन पर प्रशिक्षण और छंटाई के प्रभावों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

प्रशिक्षण का महत्व: प्रशिक्षण का अर्थ है पौधों को एक निश्चित आकार और संरचना देना ताकि वे अधिकतम सूर्य का प्रकाश प्राप्त कर सकें, हवा का संचारण अच्छा हो और फल आसानी से विकसित हो सकें। **ककड़ी वर्गीय फसलों में प्रशिक्षण के कई तरीके हैं, जिनमें शामिल हैं:**

सिंगल स्टेम प्रशिक्षण: इस विधि में मुख्य तने को ऊपर की ओर बढ़ने दिया जाता है और सभी पार्श्व शाखाओं को हटा दिया जाता है। यह विधि सीमित स्थान वाले खेतों या ग्रीनहाउस के लिए उपयुक्त है।

डबल स्टेम प्रशिक्षण: इसमें दो मुख्य तनों को विकसित होने दिया जाता है, जिससे पौधे की उपज क्षमता बढ़ जाती है।

ट्रेलिसिंग (जाली का उपयोग): पौधों को जाली या तारों के सहारे ऊपर चढ़ाया जाता है। यह विधि फलों को जमीन के संपर्क में आने से बचाती है, जिससे सड़न और बीमारियों का खतरा कम होता है। साथ ही, यह हवा के संचारण और सूर्य के प्रकाश के प्रवेश को बेहतर बनाता है।

फूलन और फलन पर प्रशिक्षण का प्रभाव

प्रशिक्षण तकनीक का सीधा प्रभाव ककड़ी वर्गीय फसलों के फूलन और फलन पर पड़ता है:

सूर्य का प्रकाश: उचित प्रशिक्षण से पौधे के सभी हिस्सों को पर्याप्त सूर्य का प्रकाश मिलता है। यह प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को बढ़ाता है, जिससे पौधे में ऊर्जा का उत्पादन अधिक होता है और अधिक फूल और फल लगते हैं।

हवा का संचारण: ट्रेलिसिंग जैसी विधियों से पौधों के बीच हवा का अच्छा संचारण होता है। यह नमी को कम करता है, जिससे फंगल रोगों की संभावना कम हो जाती है और स्वस्थ फूल और फल विकसित होते हैं।

स्थान का अनुकूलन: प्रशिक्षण पौधों को कम जगह में व्यवस्थित करने में मदद करता है, जिससे प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक पौधे लगाए जा सकते हैं और कुल उपज बढ़ सकती है।

फलों का विकास: जब फल जमीन के संपर्क में नहीं आते हैं, तो वे समान रूप से विकसित होते हैं और उनमें दाग-धब्बे कम होते हैं। ट्रेलिसिंग से फलों को सहारा मिलता है, जिससे उनका आकार और गुणवत्ता बेहतर होती है।

छंटाई का महत्व: छंटाई एक महत्वपूर्ण कृषि क्रिया है जिसमें पौधे के अवांछित हिस्सों, जैसे सूखी पत्तियां, रोगग्रस्त शाखाएं और अतिरिक्त फूल या फल को हटाया जाता है। ककड़ी वर्गीय फसलों में छंटाई का उद्देश्य पौधे के विकास को संतुलित करना, उपज की गुणवत्ता में सुधार करना और बीमारियों को नियंत्रित करना है।

फूलन और फलन पर छंटाई का प्रभाव

छंटाई विभिन्न तरीकों से फूलन और फलन को प्रभावित करती है:

ऊर्जा का वितरण: अवांछित शाखाओं और पत्तियों को हटाने से पौधे की ऊर्जा का वितरण मुख्य तने और फलों की ओर होता है। इससे फूलों और फलों का विकास बेहतर होता है और उनकी संख्या में वृद्धि हो सकती है।

मादा फूलों का विकास: कुछ ककड़ी वर्गीय फसलों में मादा फूल मुख्य रूप से पार्श्व शाखाओं पर लगते हैं। उचित छंटाई पार्श्व शाखाओं के विकास को प्रोत्साहित कर सकती है, जिससे मादा फूलों की संख्या बढ़ती है और अधिक फल लगते हैं।

फलों का आकार और गुणवत्ता: यदि पौधे पर बहुत अधिक फल लग रहे हों तो उनकी गुणवत्ता और आकार कम हो सकता है। अतिरिक्त फलों की छंटाई करने से बचे हुए फलों को पर्याप्त पोषक तत्व मिलते हैं जिससे उनका आकार बढ़ता है और गुणवत्ता में सुधार होता है।

रोग और कीट नियंत्रण: रोगग्रस्त और सूखी पत्तियों को हटाने से बीमारियों और कीटों के फैलने का खतरा कम हो जाता है। स्वस्थ पौधे अधिक फूल और फल पैदा करते हैं।

हवा का संचारण और सूर्य का प्रकाश: घनी पत्तियों और शाखाओं की छंटाई से पौधे के अंदर हवा का संचारण और सूर्य का प्रकाश बेहतर होता है, जो फूलन और फलन हेतु अनुकूल वातावरण बनाता है।

विभिन्न ककड़ी वर्गीय फसलों में प्रशिक्षण और छंटाई

विभिन्न ककड़ी वर्गीय फसलों में प्रशिक्षण और छंटाई की तकनीकें थोड़ी भिन्न हो सकती हैं:

खीरा: खीरे की बेलों को आमतौर पर ट्रेलिसिंग के माध्यम से प्रशिक्षित किया जाता है। पार्श्व शाखाओं की नियमित छंटाई मादा फूलों के विकास को बढ़ावा देती है।

ककड़ी: ककड़ी की खेती में भी ट्रेलिसिंग और सिंगल या डबल स्टेम प्रशिक्षण का उपयोग किया जा सकता है। आवश्यकतानुसार पत्तियों और शाखाओं की छंटाई की जाती है।

खरबूजा और तरबूज: इन फसलों को आमतौर पर जमीन पर बढ़ने दिया जाता है, लेकिन कुछ मामलों में छोटे स्तर पर ट्रेलिसिंग का उपयोग किया जा सकता है। फलों की संख्या को नियंत्रित करने के लिए छंटाई महत्वपूर्ण है ताकि बड़े और मीठे फल प्राप्त किए जा सकें।

निष्कर्ष

ककड़ी वर्गीय फसलों में फूलन और फलन को अधिकतम करने के लिए उचित प्रशिक्षण और छंटाई तकनीकें महत्वपूर्ण हैं। प्रशिक्षण पौधों को सही संरचना प्रदान करता है, जिससे वे अधिक सूर्य का प्रकाश और हवा प्राप्त कर सकते हैं, जबकि छंटाई पौधे की ऊर्जा को सही दिशा में केंद्रित करती है और फलों की गुणवत्ता में सुधार करती है। किसानों को अपनी फसल और खेती की परिस्थितियों के अनुसार उचित प्रशिक्षण और छंटाई विधियों का चयन करना चाहिए ताकि वे स्वस्थ और भरपूर उपज प्राप्त कर सकें। इन तकनीकों को अपनाकर, किसान न केवल अपनी उपज बढ़ा सकते हैं बल्कि अपनी आय में भी वृद्धि कर सकते हैं।

01/2023-24

ब्रूसेलोसिस : पशुपालन की एक गंभीर संक्रामक बीमारी

शुभम शर्मा (Department of Livestock Production and Management)

प्रिया पचौरी, योगिता पांडे
(Department of Veterinary Anatomy)

आफरीन खान, शिवांगी पांडे
(Department of Veterinary Biochemistry)
(M.P.)

परिचय

ब्रूसेलोसिस (**Brucellosis**) एक संक्रामक जीवाणुजनित रोग है, जो मुख्यतः गाय, भैंस, बकरी, भेड़ और सूअर जैसे पालतू जानवरों को प्रभावित करता है। यह रोग Brucella नामक बैक्टीरिया के कारण होता है। यह बीमारी न केवल पशुओं में उत्पादन घटाती है, बल्कि यह एक जूनोटिक रोग (यानि जो जानवरों से इंसानों में फैलता है) भी है, इसलिए यह सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए भी खतरा है।

ब्रूसेलोसिस के कारण

इस रोग का मुख्य कारण Brucella abortus (गाय-भैंस में), Brucella melitensis (बकरी-भेड़ में), और Brucella suis (सुअर में) होता है। यह जीवाणु संक्रमित पशु के दूध, मूत्र, गर्भाशय स्राव, या भ्रूण के संपर्क से फैलता है।

संक्रमण के फैलने के मार्ग

संक्रमित गर्भपात या जन्म के समय बाहर निकले द्रव और भ्रूण से

संक्रमित दूध का सेवन

संक्रमित पशुओं के मल-मूत्र या उनके रहने की जगह से **पशुपालक, पशु चिकित्सक और डेयरी कर्मचारी सबसे अधिक जोखिम में होते हैं**

लक्षण - पशुओं में

गर्भपात (विशेषकर गर्भ के अंतिम चरण में), बाँझपन, बच्चा मर जाना या कमजोर पैदा होना, दूध उत्पादन में कमी, अंडकोषों में सूजन (नर पशुओं में), कभी-कभी लंगड़ाहट और जोड़ों में सूजन

लक्षण- मनुष्यों में

(मानव ब्रूसेलोसिस को "माल्टा फीवर" या "अनडुलेंट फीवर" भी कहते हैं), बार-बार बुखार आना, जोड़ों और मांसपेशियों में दर्द, थकावट और कमजोरी, पसीना आना, खासकर रात में, सिरदर्द और वजन कम होना, लंबे समय तक इलाज न होने पर यह रोग पुराना हो सकता है

नुकसान

पशुओं में बार-बार गर्भपात से भारी आर्थिक हानि, दूध उत्पादन में गिरावट, प्रजनन क्षमता कम हो जाना, मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव, काम करने की क्षमता में कमी

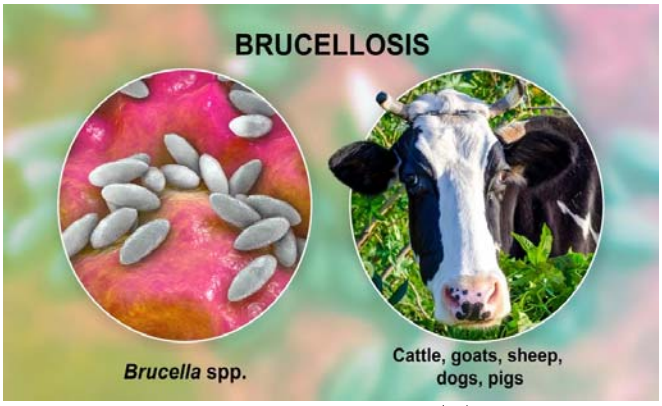

रोकथाम के उपाय

टीकाकरणः मादा बछड़ों को Brucella S19 वैक्सीन 4-8 महीने की उम्र में देना चाहिए, संक्रमित पशुओं की पहचान कर उन्हें अलग करना, संक्रमित पशुओं को बेचने या पालने से बचें, पशुओं के गर्भपात के उत्पादों को सावधानी से नष्ट करें, पशुपालन में स्वच्छता का विशेष ध्यान, दूध को अच्छी तरह उबालकर ही सेवन करें, प्रयोगशाला या पशु चिकित्सा कार्यों में सुरक्षात्मक उपकरण (जैसे दस्ताने, मास्क) पहनना

उपचार

पशुओं में

ब्रूसेलोसिस का कोई निश्चित इलाज नहीं है। संक्रमित पशु को आमतौर पर अलग या मारकर नष्ट किया जाता है ताकि संक्रमण और न फैले।

मनुष्यों में

एंटीबायोटिक दवाओं का कोर्स 6 सप्ताह या उससे अधिक समय तक चलाया जाता है। सही इलाज से रोग को पूरी तरह ठीक किया जा सकता है।

निष्कर्ष

ब्रूसेलोसिस एक खतरनाक लेकिन रोकथाम योग्य रोग है। पशुपालकों को चाहिए कि वे अपने पशुओं का नियमित टीकाकरण कराएं, साफ-सफाई बनाए रखें और किसी भी गर्भपात या संदिग्ध लक्षणों पर तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें। यह न केवल पशुओं को सुरक्षित रखेगा, बल्कि इंसानों को भी इस जूनोटिक खतरे से बचाएगा।

01/2023-24

डॉ. राकेश दांगी, डॉ. निधि सिंह चौधरी
डॉ. विवेक अग्रवाल, डॉ. सुपनेश जैन
डॉ. अंजली सिंह, डॉ. पल्लवी भदोरिया
पशु औषधि विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

मुर्गी पालन में गर्मी (हीट स्ट्रेस) से होने वाला तनाव: पहचान और समाधान

परिचय: गर्मियों के महीनों में हीट स्ट्रेस (ऊष्मा तनाव) मुर्गी पालन में एक प्रमुख चुनौती बनकर उभरता है। यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब पक्षी अपने शरीर में उत्पन्न गर्मी और बाहर की गर्मी के बीच संतुलन बनाए रखने में असमर्थ हो जाते हैं। इस असंतुलन के कारण कई स्वास्थ्य समस्याएं और उत्पादन में हानि हो सकती है। इसलिए, यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि हीट स्ट्रेस के कारण क्या हैं, पक्षी इस पर कैसे प्रतिक्रिया करते हैं, और इसे कम करने के लिए कौन-कौन सी रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं ताकि उत्पादन पर इसके दुष्प्रभाव को न्यूनतम किया जा सके।

1.हीट स्ट्रेस की स्थिति में पक्षी अपने शरीर का तापमान सामान्य बनाए रखने के लिए कई प्रकार की प्रतिक्रियाएँ दिखाते हैं, जैसे- पेंटिंग (तेज़ साँस लेना) में वृद्धि, पंख फैलाना, छायादार स्थानों या जहाँ वायु का प्रवाह अधिक हो वहाँ की ओर जाना, कंघी और वॉटल्स (गले की लटकने वाली त्वचा) में रक्त प्रवाह बढ़ जाने से उनका फूल जाना, शरीर के आंतरिक अंगों से त्वचा की ओर रक्त का प्रवाह बढ़ जाने के कारण त्वचा का रंग गहरा पड़ जाना, शारीरिक गतिविधियों में कमी, तथा चारे की मात्रा में कमी और पानी का सेवन अधिक करना, जिससे दस्त हो सकते हैं।

2.पोल्ट्री उत्पादन पर हीट स्ट्रेस का प्रभाव: हीट स्ट्रेस के कारण उत्पादन में होने वाली हानियाँ कई कारकों पर निर्भर करती हैं, जैसे-अधिकतम तापमान, अधिक तापमान की अवधि, तापमान परिवर्तन की गति, और हवा की आपेक्षिक आर्द्रता। इसके परिणाम स्वरूप मृत्यु दर में वृद्धि, चारे के सेवन में कमी, आंत्र (गट) स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव, संचयी फीड कन्वर्जन अनुपात (CFCR) में वृद्धि, शरीर के भार में कमी, मांस की गुणवत्ता में गिरावट, रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी, अंडा उत्पादन में गिरावट, अंडों का वजन कम होना, अंडों के खोल की गुणवत्ता कमजोर होना, एल्ब्युमिन की ऊँचाई में कमी और हैचिंग क्षमता में गिरावट जैसे दुष्प्रभाव देखे जाते हीट स्ट्रेस का अंडे के खोल की गुणवत्ता पर प्रभाव- हीट स्ट्रेस के कारण मुर्गियों में अत्यधिक पैंटिंग (तेज़ साँस लेना) होती है, जिससे उनके रक्त में एसिड-बेस संतुलन बिगड़ जाता है। इसका सीधा प्रभाव अंडे के खोल की मोटाई और मजबूती पर पड़ता है, जिससे अंडे का खोल पतला और कमजोर हो जाता है।

मुर्गियों में हीट स्ट्रेस को कम करने प्रभावी रणनीतियां

मुर्गियों में हीट स्ट्रेस (गर्मी के तनाव) को कम करने के लिए मुख्यत: दो प्रमुख उपाय किये जा सकते हैं-प्रथम उपाय आवास प्रबंधन (Housing Management) और दुसरा पोषण प्रबंधन (Nutritional Management)। इनके माध्यम से मुर्गियों के स्वास्थ्य और उत्पादन क्षमता में सुधार किया जा सकता है।?

आवास प्रबंधन

हीट स्ट्रेस को कम करने हेतु आवास प्रबंधन के अंतर्गत कई उपाय अपनाए जा सकते हैं। गर्म दिनों में मुर्गियों की दिनचर्या और प्रबंधन कार्यों को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिए कि उन्हें दिन के सबसे गर्म समय में कम से कम परेशान किया जाए। गर्म समय में प्रकाश की तीव्रता को कम करें ताकि मुर्गियों की शारीरिक गतिविधि घटे और हीट स्ट्रेस कम हो। शेड के दोनों ओर छायादार वृक्षारोपण करें और छत को कृषि अपशिष्ट या सूखी नारियल की पत्तियों से ढकें जिससे तापमान कम किया जा सके। जल टंकी को शेड के अंदर स्थापित करना उचित होता है, यदि बाहर है तो इसे ढककर रखें ताकि पानी ठंडा रहे। शेड की जाली के किनारों पर गीले बोरे लगाकर आसपास के वातावरण को ठंडा किया जा सकता है। छत पर स्प्रिंकलर और शेड के अंदर फॉगर का उपयोग करें, लेकिन उच्च आर्द्रता के समय इनका सीमित प्रयोग करें। गर्मी बढ़ने से एक घंटा पहले पंखे और फॉगर चालू करें और पैंटिंग बंद होने के 30 मिनट बाद बंद करें; फॉगर को हर 20 मिनट में 2 मिनट के लिए चलाएँ। पेय जल प्रणाली में ड्रिंकरों को साफ करें, निप्पल प्रणाली को बार-बार फ्लश करें, और निप्पल की ऊँचाई, दबाव तथा जल प्रवाह को (>70 मि.ली./मिनट/निप्पल ड्रिंकर) उचित बनाए रखें। जल पाइपलाइन को गीले बोरे या कृषि अपशिष्ट से ढकें और यदि संभव हो तो इसे भूमिगत करें। मुर्गियों हेतु पर्याप्त स्थान सुनिश्चित करें ताकि भीड़भाड़ न हो, तथा ब्रोइलर में 30 दिनों के बाद 20 से 30% भारी वजन वाली मुर्गियों को हटा देने से हीट स्ट्रेस से होने वाली मृत्यु दर को कम किया जा सकता है।

पोल्ट्री में तापमान नियंत्रण हेतु शेडिंग तकनीक का उपयोग।

पोषण प्रबंधन

गर्मियों में मुर्गियों के चारा सेवन और उत्पादन क्षमता को बनाए रखने के लिए कई पोषण प्रबंधन रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं। चारा वितरण का समय सुबह जल्दी और शाम के ठंडे समय में रखें ताकि चारा सेवन बढ़े; सामान्यतः सुबह 1/3 भाग और शाम को 2/3 भाग चारा देना अंडे के खोल की गुणवत्ता बनाए रखने में सहायक होता है। चारे के प्रकार और स्वाद को बेहतर बनाने के लिए गीले मैश (wet mash), क्रम्बल या पेलेट चारा उपयोग करें, जिनमें वसा या गुड़ मिलाकर स्वाद बढ़ाया जा सकता है जिससे सेवन बढ़े। अत्यधिक गर्मी के समय ब्रोइलर में मैश चारा उपयोग करें, विशेषकर जब चारा हमेशा उपलब्ध हो और हटाना संभव न हो। उच्चतम तापमान के समय (सुबह 9 बजे से शाम 4:30 बजे तक) चारा हटाना भी हीट स्ट्रेस को कम करने में मदद करता है। दाने में पोषक तत्वों, विटामिन और खनिजों की मात्रा बढ़ाकर कम सेवन के बावजूद पोषण की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। संतृप्त वसीय अम्लों वाले वसा या तेल का उपयोग कर ऊर्जा की सांद्रता बढ़ाएं ताकि ऊर्जा की पूर्ति हो सके; लिनोलिक एसिड युक्त तेल अंडे के वजन और दाने की स्वादिष्टता बढ़ाता है तथा अन्य स्रोतों की तुलना में कम शरीर ऊष्मा उत्पन्न करता है। हीट स्ट्रेस के दौरान दाने में विटामिन C और E की मात्रा बढ़ाएं क्योंकि इनके एंटी-ऑक्सीडेंट गुण प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते हैं और हीट स्ट्रेस के प्रभाव को कम करते हैं।

निष्कर्ष

मुर्गी पालन में हीट स्ट्रेस एक गंभीर चुनौती है, जो पक्षियों के स्वास्थ्य और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इस समस्या से निपटने के लिए प्रभावी आवास प्रबंधन और पोषण प्रबंधन रणनीतियों का कार्यान्वयन आवश्यक है। इन उपायों से हीट स्ट्रेस को कम किया जा सकता है और मुर्गियों के प्रदर्शन में सुधार लाया जा सकता है। उचित प्रबंधन और देखभाल से, हीट स्ट्रेस के नकारात्मक प्रभावों को न्यूनतम किया जा सकता है, जिससे मुर्गी पालन अधिक सफल और लाभदायक बनता है।

02/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

रवि सिकरोडिया, दलजीत छाबरा
राखी गांगिल, जोयसी जोगी, राकेश शारदा
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

पशुओं में क्रिप्टोकोकस इन्फेक्शन एवं बचाव

पशुओं में पाई जाने वाली यह एक प्रमुख फंजाई होती है यह एक यीस्ट होती है वैसे तो क्रिप्टोकोकस की अनेक प्रजातियाँ होती है परन्तु क्रिप्टोकोकस नियोफोर्मस मुख्यतः संक्रमण में पाया जाता है इसका साइज़ 3.5 से 8 माइक्रोमीटर तक हो सकता है यह कुत्ते, बिल्ली, घोड़ों एवं गाय में इन्फेक्शन करती है सामान्यत यह एक बीमार पशु से दुसरे स्वस्थ पशु में पहुँच जाती है एवं बीमारी करती है

रोग का कारण

यह एक प्रकार का यीस्ट होती है यह एरोबिक, नॉन फेर्मेंटेटिब प्रकार की होती है इसकी कॉलोनी म्युकोइड प्रकार की होती है इनमें म्युकोपोलीसेकेराइड कैप्सूल पाया जाता है कैप्सूल के एंटीजन के अंतर के कारण इसके चार सीरोटाइप पाए जाते है जिनको ए, बी, सी एवं डी के रूप में जाना जाता है। क्रिप्टोकोकस नियोफोर्मस वर. नियोफोर्मस मुख्यतः कबूतर एवं अन्य पक्षियों की ड्रूपिंग्स में पाया जाता है क्योंकि इन ड्रूपिंग्स में क्रिएटिनिन पाया जाता है जिसको की यह फंजाई उपयोग करते है इसीलिए कबूतर जिनमे की यह फंगस का इन्फेक्शन हो लम्बे समय तक बिना किसी लक्षण के इस फंगस से वातावरण को दूषित कर सकते है

रोग का संचरण

यह फंजाई वातावरण में जैसे की मिटटी, सडती हुई लकड़ी, पेड़ों एवं पक्षियों की ड्रूपिंग्स में पाई जाती है पशु एवं मनुष्यों को इस फंगस का इन्फेक्शन इसके स्पोर्स के सांस में लेने के द्वारा हो सकता है अथवा घाव से भी इन्फेक्शन हो सकता है बॉडी में यह स्पोर यीस्ट में बदल जाते है एवं रक्त में पहुचकर पुरे शरीर में पहुँच सकते है

रोग के लक्षण

यह फंजाई अलग अलग पशुओं में अनेक प्रकार के लक्षण उत्पन्न करती है जैसे की बिल्लियों में यह सांस लेने से सम्बंधित समस्या, त्वचा, दिमाग एवं आँख से सम्बंधित समस्या उत्पन्न करती है कभी कभी नाक में ग्रेन्युलोमा भी बन जाता है कुत्तों में यह इन्फेक्शन बिल्लीयों से कम देखने को मिलता है परन्तु ज्यादातर आँख, श्वसन तंत्र, आँख त्वचा एवं दिमाग में लक्षण उत्पन्न कर सकता है घोड़ों में इस बीमारी में नाक में ग्रेन्युलोमा बन जाते है जबकि त्वचा अथवा फेंफडों में कम लीजन देखने को मिलते है

गाय में कभी मस्टाईटिस में इसका प्रभाव देखा गया है प्रभावित गाय कम खाना खाने लगती है, दूध का उत्पादन कम हो जाता है थन में सूजन, एवं थनों के पास के लिम्फ नोड्स में सूजन देखने को मिलती है धीरे धीरे

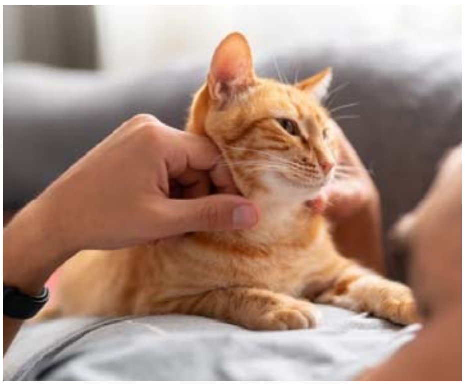

दूध मयूकोइड, वीसीड एवं वाट्री हो जाता है इस बीमारी का इन्क्यूबेशन काल 2 से 13 महीने का सकता है इसके लीजन भी में ग्रेन्युलोमा भी देखने को मिल सकते है हालांकि यह बीमारी मनुष्यों में हो सकती है परन्तु पशुओं से मनुष्यों में बिमारी होने की सम्भावना बहुत कम है अधिकतर कमजोर इम्यून सिस्टम वाले मनुष्यों में इस बिमारी के होने की सम्भावना अधिक होती है जो की स्पोर्स को सांस में लेने से हो सकती है मनुष्यों में खांसी में खून, बुखार, सीने में दर्द प्रमुख लक्षण है

निदान

इस बिमारी की डायग्नोसिस बीमारी की हिस्ट्री एवं लक्षणों के आधार पर करना चाहिए सैंपल को लेकर लैब में फंगस की डायग्नोसिस के लिए भेजना चाहिए सैंपल को सेबोरौड्स डेक्सट्रोज अगर पर लगाकर रोजाना ग्रोथ आने तक जांचना चाहिए क्रिप्टोकोकस यीस्ट की कॉलोनी मीडिया पर मयूकोइड होती है जो की कैप्सूल के बनने के कारण होती है और अधिक दिन की होने के साथ ड्राइ होती जाती है दिखने में कॉलोनी क्रीम अथवा पीले रंग की हो सकती है यह फंगस युरिएज टेस्ट के लिए पोजिटिब होती है कैप्सूल को देखने के लिए इंडिया इंक अथवा निग्रोसिन डाई का उपयोग किया जा सकता है ग्रोथ को लेक्टोफिनोल कॉटन ब्लू स्टेन से स्टैनिंग कर यीस्ट के लिए चेक करना चाहिए सीरोलोजिकल टेस्ट का उपयोग भी किया जा सकता है

रोग से बचाव

क्रिप्टोकोकस का इन्फेक्शन होने की अधिक सम्भावना पक्षियों एवं कबूतर की ड्रूपिंग्स और मल से होती है अतः जिन स्थानों पर कबूतर अधिक संख्या में रहते है यहाँ पर ध्यान रखना चाहिए।

12/2022-23

अमरुद के बागानों में गर्मियों के समय होने वाली क्रियाएं

डॉ. द्वारका सहायक प्रोफेसर(अतिथि), कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय लक्ष्मीपुर पन्ना (म.प्र.)

निशा चढ़ार एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़

गर्मियों के मौसम में अमरुद के बागानों की देखभाल अत्यंत आवश्यक होती है, क्योंकि इस समय उच्च तापमान और सूखे की स्थिति फसल की गुणवत्ता और उत्पादन को प्रभावित कर सकती है। मुख्य रूप से, इस दौरान नियमित सिंचाई, मल्चिंग, खरपतवार नियंत्रण और उचित पोषण प्रबंधन पर ध्यान दिया जाता है। गर्मी में कीट एवं रोगों का प्रकोप बढ़ सकता है, जिसके नियंत्रण हेतु जैविक और रासायनिक उपाय अपनाए जाते हैं। छंटाई एवं बाग की सफाई से पौधों की वृद्धि में सुधार होता है। इसके अतिरिक्त, मधुमक्खी पालन और अंत:फसल तकनीकों का प्रयोग बाग की उत्पादकता बढ़ाने में सहायक होता है। उचित देखभाल और वैज्ञानिक प्रबंधन द्वारा गर्मियों में अमरुद की फसल को सुरक्षित रखते हुए उच्च गुणवत्ता एवं अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

परिचय: अमरुद एक महत्वपूर्ण फलदार वृक्ष है, जिसे भारत में व्यापक रूप से उगाया जाता है। इसकी खेती विभिन्न जलवायु परिस्थितियों में की जा सकती है, लेकिन गर्मियों के मौसम में विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है। इस दौरान बढ़ते तापमान, कम नमी, कीट एवं रोगों के प्रकोप जैसी चुनौतियाँ सामने आती हैं, जो फसल की गुणवत्ता और उत्पादन को प्रभावित कर सकती हैं। गर्मियों में अमरुद के बागानों में नियमित सिंचाई, पोषण प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण, छंटाई, कीट एवं रोग प्रबंधन जैसे कार्य अत्यंत आवश्यक होते हैं। साथ ही, बाग को अत्यधिक गर्मी और लू से बचाने के लिए मल्चिंग और छायादार प्रबंधन तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इस लेख में, हम विस्तार से उन प्रमुख क्रियाओं पर चर्चा करेंगे, जो गर्मियों के मौसम में अमरुद के बागों की उचित देखभाल और उच्च उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक होती हैं। गर्मियों का मौसम अमरुद के बागानों के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है। इस समय पेड़ की वृद्धि, फूल बनने की प्रक्रिया, और फलों की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। यदि इस दौरान उचित देखभाल नहीं की गई, तो उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

गर्मियों के मौसम में अमरुद के बागानों की देखभाल के लिए निम्नलिखित कार्य आवश्यक होते हैं-

सिंचाई प्रबंधन- गर्मी के मौसम में तापमान अधिक होने के कारण मिट्टी में नमी की मात्रा तेजी से कम हो जाती है। इसलिए, सिंचाई का उचित प्रबंधन आवश्यक होता है।

नियमित सिंचाई- युवा पेड़ों को सप्ताह में 2-3 बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। बड़े और फल देने वाले पेड़ों हेतु 7-10 दिनों में एक बार सिंचाई पर्याप्त होती है। ड्रिप इरिगेशन पद्धति अपनाने से पानी की बचत होती है और नमी की उचित आपूर्ति बनी रहती है।

मल्चिंग का उपयोग-पेड़ों की जड़ों के चारों ओर जैविक मल्च (घास, भूसा, गन्ने की खोई आदि) डालने से मिट्टी में नमी बनी रहती है और खरपतवार का नियंत्रण होता है। इससे सिंचाई की आवश्यकता भी कम होती है।

खरपतवार नियंत्रण- गर्मियों में खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं और अमरुद के पेड़ों से पोषक तत्वों व पानी की प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसलिए नियमित रूप से खेत की गुड़ाई करनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन जुताई करने से हानिकारक कीटों और खरपतवारों का नियंत्रण होता है। खरपतवार नियंत्रण हेतु ग्लाइफोसेट जैसे हर्बिसाइड्स का सावधानीपूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

कीट एवं रोग नियंत्रण- गर्मियों के मौसम में अमरुद के बागानों में विभिन्न प्रकार के कीट और रोग सक्रिय हो जाते हैं। इनसे बचाव के लिए समय पर आवश्यक उपाय करने चाहिए।

प्रमुख कीट-

फल मक्खी - यह कीट अमरुद के फलों में अंडे देती है, जिससे फल खराब हो जाते हैं। गर्मियों में ट्रैप लगाकर कीटों की संख्या नियंत्रित की जा सकती है। प्रभावित फलों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए।

मिलीबग - यह कीट पेड़ों की शाखाओं और पत्तियों से रस चूसकर नुकसान पहुंचाती है। नियंत्रित करने के लिए नीम के तेल का छिड़काव करें या जैविक कीटनाशकों का उपयोग करें।

तना छेदक - यह कीट अमरुद के पेड़ की टहनियों और तने को नुकसान पहुंचाता है। प्रभावित शाखाओं को काटकर जला देना चाहिए। कीटनाशक जैसे क्लोरोपायरीफॉस 0.05 प्रतिशत का छिड़काव करें।

प्रमुख रोग

पत्तियों का झुलसा - गर्मी के मौसम में यह रोग तेजी से फैलता है। नियंत्रण के लिए बोर्डो मिक्सचर (1 प्रतिशत) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें।

जड़ गलन - अत्यधिक नमी और जलभराव से यह रोग हो सकता है। सिंचाई का सही प्रबंधन करें और कार्बेन्डाजिम या ट्राइकोडर्मा का उपयोग करें।

पोषण प्रबंधन- गर्मियों में पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करना बहुत आवश्यक होता है ताकि वे स्वस्थ रहें और अच्छी उपज दे सकें।

उर्वरक एवं खाद * 1-3 वर्ष के पौधों के लिए- 5-10 किलोग्राम गोबर खाद या वर्मी कम्पोस्ट प्रति पौधा; 100 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्रा. फॉस्फोरस, 50 ग्राम पोटाश। * 4-6 वर्ष के पौधों के लिए- 15-20 किलोग्राम गोबर खाद; 200 ग्राम नाइट्रोजन, 100 ग्रा. फॉस्फोरस, 100 ग्रा. पोटाश। * 7 वर्ष से अधिक उम्र के पौधों हेतु- 25-30 किलोग्राम गोबर खाद; 500 ग्रा. नाइट्रोजन, 250 ग्रा. फॉस्फोरस, 250 ग्रा. पोटाश।

फोलियर स्प्रे (पत्तियों पर छिड़काव)- सूक्ष्म पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए गर्मी के मौसम में जिंक सल्फेट (0.5 %) और बोरॉन (0.1%) का छिड़काव करें। अमीनो एसिड और ह्यूमिक एसिड आधारित जैविक स्प्रे का उपयोग भी किया जा सकता है।

ग्रीष्मकालीन छंटाई-गर्मियों में सही ढंग से छंटाई करने से पौधों की वृद्धि में सुधार होता है और नए, स्वस्थ शाखाएँ निकलती हैं।

छंटाई की प्रक्रिया-सूखी, रोगग्रस्त और कीटग्रस्त शाखाओं को काटकर हटा देना चाहिए। पुराने और कम उपज देने वाले हिस्सों को काटकर नया विकास प्रोत्साहित किया जाता है। छंटाई के बाद बोर्डो पेस्ट का घावों पर लेप लगाएं।

बाग का संरक्षण

तापमान नियंत्रण- अत्यधिक गर्मी से पौधों को बचाने के लिए शेड नेट या मल्चिंग का उपयोग करें। अधिक तापमान के कारण फूल गिरने की समस्या होती है, इसलिए एंटी-ट्रांसपिरेंट्स (केओलिन क्ले 5 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

हवा और तूफान से सुरक्षा- तेज हवा और आंधी से बचाव हेतु बाग के चारों ओर वायु अवरोधक पेड़ (जैसे शीशम, सागौन) लगाएं। पेड़ों को सहारा देने के लिए बांस या लकड़ी के खंभों का उपयोग करें।

बाग में मधुमक्खी पालन- मधुमक्खियाँ परागण में सहायता करती हैं और फल उत्पादन में वृद्धि करती हैं। गर्मियों में बाग में मधुमक्खी बॉक्स रखने से फलों की गुणवत्ता में सुधार होता है।

अंत:फसल - गर्मियों में खाली जगह में मूंग, उड़द, या लोबिया जैसी दलहनी फसलें उगाने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है। इससे अतिरिक्त आय भी प्राप्त होती है।

निष्कर्ष: गर्मी के मौसम में अमरुद के बागों की देखभाल के लिए उचित सिंचाई, खाद प्रबंधन, छंटाई, कीट एवं रोग नियंत्रण, और तापमान नियंत्रण जैसे कार्यों को सही ढंग से करना आवश्यक होता है। यदि इन उपायों को समय पर अपनाया जाए, तो अमरुद की फसल का उत्पादन और गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होगी।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता: पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

अभिषेक यादव, मनीषा पाठक,
रोहित कुमार यादव
(पीएचडी शोधार्थी उद्यानिकी विभाग,
राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि
विश्वविद्यालय ग्वालियर)

औषधीय गुणों और तत्वों से भरपूर सब्जियां

वर्तमान समय मे अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में 250-300 प्रकार की सब्जियाँ उपलब्ध रहती हैं। सब्जियाँ औषधीय गुणों का खजाना मानी जाती है क्योंकि इनमें प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, कैल्शियम, मैगनीशियम, फास्फोरस, लौह तत्व आदि पाया जाता है। वर्तमान अवधारणा में जितनी अधिक सब्जियों का उपभोग होगा उतना ही मानव स्वास्थ्य उत्तम होगा।

सोलेनेसियस वर्गीय सब्जियों के औषधीय गुण

टमाटर उच्च रक्त चाप एवं हृदय रोग में लाभदायक है। इसमें लाइकोपीन पाया जाता है, जो शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट के रूप में जाना जाता है। यह कोलेस्ट्रॉल को कम करने में सहायक है। इसका उपभोग आँखों में जलन को कम करता है तथा त्वचा को चमकदार बनाता है। इसका जूस यकृत संबंधित परेशानियों में लाभदायक है। टमाटर में क्लोरिन एवं गन्धक विषाक्त विरोधी तत्व पाये जाते हैं। क्लोरिन अवशिष्ट तत्वों को शरीर से बाहर निकालने में और गन्धक कुछ अवरोधों के विरूद्ध हृदय की सुरक्षा करने में सहायक है। मिर्च में विटामिन ए, बी व सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसमें कैप्सेसिन नामक तत्व गठिया जैसी समस्या को कम करने में सहायक होता है। मिर्च उच्च रक्त चाप, अनिद्रा एवं फ्लू जैसी बीमारियों में लाभदायक होता है। इसके समुचित उपभोग से अधिक वजन में तेजी से गिरावट होती है। कच्चे आलू का रस गठिया, पेट और आँतों के विकारों से मुक्त करता है। कच्चे आलू का रस धूप से जली त्वचा और मांसपेशियों व जोड़ों में सूजन के लिए भी मददगार होता है।

दलहनी वर्गीय सब्जियों के औषधीय गुण

मटर में विटामिन ए, बी व सी और खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। ये अल्सर के दर्द से राहत प्रदान करता है। हरी मटर का प्रयोग हृदय संबंधित बीमारियों को कम करने में प्रयोग किया जाता है। मीठी मटर में लौह तत्व और विटामिन सी प्रचुर मात्रा पाये जाने के कारण यह प्रतिरक्षा प्रणाली में सुधार करता है। सेम में उपलब्ध प्रोटीन उत्तम स्वास्थ्य हेतु अच्छा स्रोत होने के साथ-साथ इसमें किसी प्रकार का अनुपयोगी वसा नहीं पाया जाता है। इनकी फलियों में पर्याप्त मात्रा में एन्टीआक्सीडेंट पाया जाता है, जो आयु बढ़ाने में मदद करता है। सेम अस्वास्थ्य कर भोजन से होने वाली समस्याओं से उतकों की रक्षा करता है। लोबिया के बीजों में अनाज की तुलना में प्रोटीन घटकों जैसे-एमिनो एसिड, लाइसिन व ट्रिप्टोफेन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है और पशु प्रोटीन की तुलना में मिथायोनाइन और साइटिन भी कम पाये जाते हैं। लोबिया पशु प्रोटीन के लिए पूरक पोषण माना जाता है। बांकला को छत्तीसगढ़ में एक जड़ी बूटी की फसल की संज्ञा दी जाती है। यह सौन्दर्य साधनों को बनाने में भी उपयोग किया जाता है। बीज खाने से झुरिंया कम होती है।

गोभी वर्गीय सब्जियों के औषधीय गुण

सामान्यतः फूलगोभी मधुमेह रोगियों के लिए उपयोगी है क्योंकि इसमें विटामिन सी व फोलेट प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। फोलेट रक्त बनाने व एनीमिया की रोकथाम के लिए प्रभावी है। इसमें उपलब्ध विटामिन सी एक प्रभावी एंटीऑक्साइड माना जाता है और जब इसका संयोग विटामिन ई और बीटा कैरोटिन जैसे अन्य एंटीऑक्साइड से होता है तो यह प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूती प्रदान करता है। फूलगोभी को कच्चा खाने से शरीर को प्रचुर मात्रा में पोषण मिलता है और हल्की भाप में पकाकर प्रयोग करने से कैंसर से लड़ने में सहायता मिलती है। मध्य युग में इसे गरीबों का दवा कहा जाता था। इसमें उपलब्ध रसायन तत्व गर्भाशय और अण्डाशय के कैंसर को कम करते हैं। यह बीटा कैरोटिन का अच्छा स्रोत है। बीटा-कैरोटिन की उच्च मात्रा में उपलब्धता मोतियाबिंद के जोखिम को कम करता है। ताजी गोभी में फोलिक एसिड भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है जो हृदय रोग एवं हृदयाघात को कम करने में सहायक है व त्वचा की समस्या को कम करता है। गोभी आयोडीन के कम अवशोषण में सहायक है। एक सप्ताह में अगर 2-3 बार गोभी का उपभोग किया जाये तो आप निश्चित रूप से आयोडीन जनित विकारों से ग्रस्त नही होंगे।

पत्तीदार सब्जियों के औषधीय गुण

पालक में अनेकों बहुमूल्य खनिज लवणों जैसे-सोडियम, पोटैशियम, कैल्शियम फॉस्फोरस, गन्धक, लौह, जिंक, मैगनीशियम, मैग्नीज, आयोडिन और विटामिन सी, बी, बी6 और फोलिक एसिड अधिक मात्रा में पाया जाता है। पालक कब्ज और पेट के कैंसर व आँत में जीवित रहने वाले परजीवियों को समाप्त करने में मदद करता है। गठिया, हेपटाइटिस व ऑतों की बीमारी से ग्रस्त लोगों को पालक का प्रयोग नहीं करना चाहिए। मेथी पाचन में सहायक है। इसका उपभोग रक्त में शर्करा के स्तर को कम करता है व मधुमेह में इंसुलिन के साथ संयोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है। यह रक्त चाप को कम करने में उपयोगी है।

कद्दू वर्गीय सब्जियों के औषधीय गुण

लौकी मूत्र विकारों में बहुत लाभदायक है। लौकी का जूस, नींबू के रस के साथ मिलाकर लेने से पेशाब के जलन को कम करता है। अधिक मात्रा में वसा युक्त व तला हुआ भोजन करने से लगने वाली प्यास में बहुत महत्वपूर्ण दवा है। लौकी अत्यधिक दस्त व मधुमेह में उपयोगी है। सामान्यतः जूस में नमक मिलाकर प्रतिदिन उपभोग करने से अनेकों शारीरिक बीमारियों से बचा जा सकता है। लौकी के जूस और तिल के तेल का मिश्रण अनिद्रा, मिर्गी और तांत्रिका संबंधित रोगों के उपचार में सहायक है। फल का जूस गैस, अपच और अल्सर के उपचार में प्रयोग किया जाता है। करेला में विटामिन ए-1, बी-2, बी-3, सी, मैगनीशियम, फोलिक एसिड, जिंक, फॉस्फोरस व मैग्नीज प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसमें उपलब्ध खाद्य रेशा भोजन के पचाने में सहायक होता है। इसमें ब्रोकली की तुलना में दुगुनी मात्रा में बीटा कैरोटिन, पालक की दुगुनी मात्रा में कैल्शियम और केले की दुगुनी मात्रा में पोटैशियम पाया जाता है। करेला कफ और पीत नाशक होता है। मधुमेह रोगियों के लिये करेला रामबाण है। यह अग्नाशय व शरीर के सभी स्त्रावों को सही करने, मुख बढ़ानें व भोजन पचाने में मदद करता है। करेला कब्ज, बवासीर के लिए लाभदायक है व पाचक होने के साथ ही आँत के कीड़ों को नष्ट करता है। करेला खून को साफ करने व त्वचा सम्बंधी बीमारियों में मददगार है। पुराने बुखार व अस्थमा से पीड़ित व्यक्तियों के लिए करेला लाभदायक है।

शल्क कंदीय सब्जियों के औषधीय गुण

प्याज में बलगम को कम करने और इसके पुनः उत्पन्न न होने में सहायक होता है। प्राचीन काल में ङ्क सर्दी, जुकाम, फेफड़ों की सूजन और सर्दी से उत्पन्न ज्वर में जड़ी-बूटी के रूप में इनका प्रयोग किया जाता रहा है। इसके लिए सामान्यतः 3-4 चम्मच प्याज का रस और बराबर मात्रा में शहद को मिलाकर उपचार में प्रयोग करना चाहिए। प्याज खूनी बवासीर के लिए भी लाभदायक पाया गया है एवं हैजा के लिए उत्कृष्ट औषधि है। उपचार लाभ पाने के लिए लगभग 30 ग्राम प्याज और काली मिर्च को पीसकर मरीज को देना चाहिए। यह कुछ रोगोत्पादक जीवाणु या कीटाणु को नष्ट करने का गुण भी रखता है। इसके रस का इंजेक्शन जानवरों में क्षय रोगकारक के विकास को रोकता है। रूई के फाँयें को प्याज के रस में डुबोकर कान में रखने से सनसनाहट को दूर करने में सहायता मिलती है। प्याज के रस को गर्म करके कुछ बूंदें कान में डालने से दर्द में आराम मिलता है। मुँह के कीटाणुओं को मारने के लिए कच्चे प्याज को तीन मिनट तक चबाना अच्छा रहता है। क्षय रोग के शुरूआत की अवस्था में लहसुन की 5-6 कलियों के नियमित सेवन से इस रोग से मुक्ति मिलती है। - लहसुन को पीसकर दूध में मिला कर पीने से रक्त चाप (ब्लड प्रेशर) में आराम मिलता है। कोलेस्ट्रॉल जनित हृदय रोग में लहसुन के सेवन से कोलेस्ट्रॉल से मुक्ति मिलती है। एक चम्मच लहसुन का रस पीने से दस्त में तुरन्त आराम मिलता है। लहसुन की कलियों को सरसों की तेल में पकाकर कान में डालने से कान का दर्द ठीक हो जाता है। कान पक रहा है तो भी इस तेल के प्रयोग से लाभ होता है। लहसुन एक शक्तिशाली कीटाणुनाशक है। लहसुन के रस में बराबर मात्रा में पानी मिलाकर पीने से हैजा रोग के उपचार में मदद मिलती है। लहसुन में सल्फाईड आधारित तेल पाया जाता है। इसका प्रयोग श्वसन तंत्र के रोगों को दूर करने के लिए निरापद औषधि मानी जाती है। कच्चे लहसुन की 1-2 कलियों को छिलकर उसके किनारों को काटकर पानी से निगल जाने से गैस के रोगियों को काफी लाभ मिलता है। लहसुन की रस की कुछ बूंदे मुंह में डालने से मिर्गी का रोगी होश में आ जाता है। दाँत के दर्द एवं मसूड़े फूलने पर लहसुन को पीसकर उसकी धीरे-धीरे मालिश करनी चाहिए।

डॉ. मारिया खान जूनियर वेट्नेरी ऑफिसर, संवेदना डेवलपमेंट सोसायटी, बी.एफ.आई.एल. - सी.एस.आर, जिला रायसेन (म.प्र.)

डॉ. असद खान पी.एच.डी. शोधार्थी, पशु आनुवांशिकी एवं प्रजनन प्रभाग, भा.कृ.अनु.प. - राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, (हरियाणा)

बरसात के मौसम में पशुओं को होने वाले प्रमुख रोग एवं उनके नियंत्रण के उपाय

बरसात का मौसम जहाँ किसानों और पशुपालकों के लिए राहत लेकर आता है, वहीं यह पशुओं के लिए कई तरह की रोगों का कारण भी बन सकता है। इस मौसम में वातावरण में आद्रता (नमी) और गंदगी के कारण पशु कई संक्रामक और परजीवी जनित रोगों की चपेट में आ जाते हैं। आइए जानें कि बारिश के मौसम में पशुओं को कौन-कौन से प्रमुख रोग अक्सर होते हैं और उनके नियंत्रण के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं।

बरसात में होने वाली प्रमुख पशु रोग

1. **खुरपका एवं मुँहपका रोग (फुट एण्ड माउथ डिसीज):** यह विषाणुजनित एक अत्यंत संक्रामक रोग है जो गाय, भैंस, बकरी और भेड़ जैसे पशुओं में फैलता है। इसके लक्षणों में मुंह और खुरों में छालों के समान घाव, बुखार और दूध उत्पादन में गिरावट शामिल है।

2. **कृष्णजंघा (ब्लैक क्वार्टर):** इसे लंगड़ा बुखार, फड़सूजन, जहरबाद, काला बाय, एकटंगा एवं लंगड़िया आदि नामों से भी जाना जाता है। यह मिट्टी में पनपने वाला एक घातक जीवाणुजनित रोग है। यह खासकर गाय और भैंसों में शरीर की मांसपेशियों में गैस भरी हुई सूजन और दर्द के रूप में दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त पशुओं में लंगड़ापन या गतिहीनता, सूजन वाले स्थान पर दबाने पर कड़कड़ाहट जैसी आवाज, पशुओं का जमीन पर गिर जाना, मांसपेशियों पर काले धब्बे आदि इसके प्रमुख लक्षण हैं। सही समय पर उपचार न मिलने पर यह जानलेवा हो सकता है।

3. **एंथ्रेक्स:** यह भी एक जीवाणु जनित रोग है जो पशुओं में तेज बुखार, शरीर में सूजन एवं पशु के बाह्य शारीरिक छिद्रों से रक्तस्राव जैसे लक्षण पैदा करता है। यह रोग पशुओं से मनुष्यों एवं मनुष्यों से पशुओं में भी फैल सकता है।

4. **गलघोंटू (हैमरेजिक सेप्टिसीमिया):** यह रोग मुख्यतः गाय, भैंस और अन्य जुगाली करने वाले पशुओं को प्रभावित करता है। तेज बुखार, गले के निचले भाग में सूजन, सांस लेने में समस्या एवं दम घुटने के कारण अचानक मृत्यु इसके प्रमुख लक्षण हैं।

5 **लंगड़ापन:** बारिश के मौसम में कीचड़ और गीली जमीन के कारण पशुओं के खुरों में संक्रमण होने की संभावना बढ़ जाती है। जिसके फलस्वरूप उन्हें चलने में समस्या होती है एवं वे लंगड़ा कर चलने लगते हैं।

6. **थनैला रोग (मैस्टाइटिस):** गीली और गंदी जगहों पर रहने से दूध देने वाले पशुओं के थनों में सूजन और संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है, जिससे दूध की गुणवत्ता और मात्रा दोनों पर असर पड़ता है।

7. **परजीवी संक्रमण (किलनी, चिचड़ी एवं जूँ आदि):** बरसात में गीलापन परजीवियों जैसे किलनी, चिचड़ी, खटमल, मक्खी, मच्छर एवं जूँ आदि के लिए अनुकूल होता है। ये पशुओं की त्वचा पर खुजली, एनीमिया और कमजोरी जैसे लक्षण उत्पन्न करने के अतिरिक्त विभिन्न अन्य जीवाणु, विषाणु एवं प्रोटजोआ जनित रोगों के रोग वाहक भी होते हैं।

8. **श्वास संबंधी रोग:** नमी और ठंडक के कारण फेफड़ों एवं ऊपरी श्वास नाल में सूजन अथवा संक्रमण के फलस्वरूप निमोनिया और ब्रोंकाइटिस जैसे श्वास संबंधी रोग होने की संभावना भी बढ़ जाती है।

9. **पाचन संबंधी रोग:** दूषित एवं गुणवत्ताहीन पानी एवं चारे अथवा अत्यधिक हरे चारे के सेवन आदि कारणों से दस्त, अपच, अफरा, पेट फूलने एवं खाद्य विषाक्तता जैसी समस्याएँ होने की संभावना भी बढ़ जाती है।

10. **चर्म रोग:** लगातार गीलेपन के कारण त्वचा पर कवक संक्रमण, खुजली एवं घाव होने के संभावना भी बढ़ जाती है।

11. **कुकड़िया रोग (कोक्सिडियॉसिस):** यह प्रोटजोआ जनित, विशेषकर बछड़ों एवं मेमनों में पाया जाने वाला रोग है। इसके प्रमुख लक्षण दस्त एवं शारीरिक वृद्धि में रुकावट है।

12. **लेप्टोस्पायरोसिस:** यह एक जीवाणु जनित रोग है जो दूषित पानी और मिट्टी के संपर्क से फैलता है। दुधारू पशु में इसके प्रमुख लक्षण दूध की पैदावार में अचानक गिरावट, थन नरम और ढीला, कोलोस्ट्रम (खीस) जैसा या खून जैसा दूध आना आदि हैं। इसके अतिरिक्त बुखार, कम भूख, सुस्ती, अकड़ना, गर्भपात, समय से पहले और कमजोर बछड़े आदि भी इसके प्रमुख लक्षण हैं।

नियंत्रण के उपाय

टीकाकरण: खुरपका-मुँहपका, गलघोंटू एवं कृष्णजंघा जैसे रोगों के लिए समय पर टीकाकरण करवाना अत्यंत आवश्यक है।

स्वच्छ परिवेश: पशु आवास को सूखा और स्वच्छ रखें। कीचड़ व गंदगी को नियमित रूप से साफ करें।

स्वास्थ्य परीक्षण: नियमित रूप से पशुओं की जांच कराएं और किसी भी लक्षण पर तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

डीवॉर्मिंग (कृमिनाशन): नियमित अंतराल पर पशु चिकित्सक के परामर्श अनुसार कृमिनाशक दवाइयों का प्रयोग करें।

परजीवी एवं कीट नियंत्रण: किलनी, चिचड़ी, मक्खी, मच्छर, जूँ एवं अन्य परजीवियों को रोकने के लिए पशुचिकित्सक के परामर्श अनुसार कीटनाशक का प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त पशुशाला के पास पानी, गंदगी एवं गोबर को इकट्ठा न होने दें तथा नियमित समय अंतराल पर पशुशाला की चूने से पुताई करें।

पानी की गुणवत्ता: पशुओं को केवल साफ, ताजा और सुरक्षित पानी ही पिलाएं।

बासी या फफूंदी लगे चारे से बचाव: फफूंद लगे या सड़ा-गला चारा पशुओं को न दें। चारे को सूखे व हवादार स्थान पर संग्रह करें।

बरसात के मौसम में थोड़ी सी सावधानी और नियमित देखभाल से आप अपने पशुओं को कई गंभीर रोगों से बचा सकते हैं। समय पर टीकाकरण, स्वच्छता और पोषण युक्त आहार पशुओं को स्वस्थ रखने के सबसे प्रभावी उपाय हैं। इस वर्षा ऋतु में पशुपालन के साथ-साथ उनके स्वास्थ्य का भी पूरा ध्यान रखें। स्वस्थ पशु, समृद्ध किसान!

माधव पटेल दमोह (म.प्र.)

समृद्ध जैव विविधता की आवश्यकता

प्रकृति में हर जीव,हर पेड़ पौधे की अहमियत महत्वपूर्ण होती है सभी की उपस्थिति एक स्वस्थ और मजबूत प्राकृतिक तंत्र का निर्माण करती है आज जैव विविधता दिवस के अवसर पर हमें सोचने की आवश्यकता है कि हम विकास के नाम पर विभिन्न परियोजनाओं के नाम पर जिस प्रकार प्राकृतिक संसाधनों का नियोजित तरीके से उपयोग कर रहे हैं।

जैव विविधता का महत्व

उसका प्रभाव हमारे जैव विविधता पर प्रत्यक्ष रूप से पढ़ रहा है और यह प्रभाव एक न एक दिन निश्चित रूप से मानव जीवन को प्रभावित करेगा परंतु तब तक इस पर विचार करने या सुधार करने के लिए बहुत अधिक विलंब हो चुका होगा। जब मिलने प्रकृति द्वारा प्रदान किया गया अनुपम उपहार है जिस समृद्ध करते हुए हम विकसित समाज की संकल्पना को साकार कर सकते हैं परंतु विकास की तीव्रता संसाधनों के उपभोग का लालच हमें समायोजित विकास से भटका रहा है। वैसे देखें तो प्रारंभ से ही मानवीय प्रकृति लालची रही है शोध और विशेषज्ञों के अनुसार हमें प्रकृति से जो मिलना चाहिए हम उससे 70 प्रतिशत अधिक उपभोग कर रहें है।यू.एन. रिपोर्ट के अनुसार, मानव गतिविधियों के कारण दस लाख प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि किस प्रकार मानव ने उन प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट किया है जिन पर हमारा अस्तित्व निर्भर करता है।यदि रिपोर्ट के आंकड़े बताते हैं कि दक्षिणी गोलार्ध से फूलों वाले पौधों की 45 फीसदी आबादी खत्म होने की कगार पर आ पहुंची है। चिड़ियों की 14 प्रतिशत प्रजातियां धरती पर बने रहने के लिए अंतिम संघर्ष कर रही हैं। यदि ऐसे ही रह तो डॉल्फिन कहीं किताबों का हिस्सा बनकर ही न रह जाए। एक बात सत्य है कि हम जो अनियंत्रित और अनियोजित विकास कर रहे है वो कही न कही हमारे अस्तित्व के लिए ही संकट उत्पन्न कर रहा है।

जैव विविधता दिवस के अवसर पर यह आवश्यक हो जाता है कि हम उसकी आवश्यकता और महत्व पर सोचे समझे और संरक्षण के संबंध में आवश्यक कदम उठाने का प्रयास करें जैव-विविधता शब्द का प्रयोग सबसे पहले वाल्टर जी. रासन ने किया था। जैव विविधता को मुख्यतः तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है आनुवंशिक विविधता,प्रजातीय विविधता और पारितंत्र विविधता। किसी भी प्रजाति के मध्य पायी जाने वाली विविधिता को आनुवंशिक जैव विविधता के नाम से जाना जाता है। यह आनुवंशिक विविधता जीवों के विभिन्न आवासों में विभिन्न प्रकार के अनुकूलन का परिणाम होती है। विभिन्न प्रजातियों के बीच पायी जाने वाली विभिन्नता को प्रजातीय विविधता कहते है। किसी इकोसिस्टम के उचित कार्य के लिये प्रजातीय विविधता का होना अनिवार्य होता है। इकोसिस्टम विविधता पृथ्वी पर पायी जाने वाली पारितंत्रों में उन विभिन्नताओ को कहते हैं जिसमें प्रजातियों का निवास होता है। पारितंत्र विविधता विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है।

मानव जीवन को महत्वपूर्ण

जैव विविधता मानव जीवन के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण घटक है। क्योंकि हम सभी ने कोरोना कल के दौरान वृक्षों के और औषधीय पौधों के महत्व को निकट से जान पानी का अवसर प्राप्त किया है जिन क्षेत्रों में जैव विविधता समृद्ध रही है वहां पर मानव स्वास्थ्य औसत रूप से बेहतर रहता है इसलिए यदि अप्रत्यक्ष रूप से देखा जाए तो समृद्धि जैव विविधता स्वस्थ मानव जीवन का आधार है।

इसके साथ-साथ जैव विविधता मानव स्वास्थ्य में विविधतापूर्ण और पौष्टिक आहार प्रदान करके, साथ ही दवाओं और उपचारों के विकास में योगदान देकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हमारे लिए विभिन्न आवश्यक दवाएं प्रकृति से प्राप्त होती हैं।

जैव विविधता जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति संवेदनशील होती है एवं पारिस्थितिक तंत्र में लचीलेपन को बढ़ाती है, समृद्धि जैव विविधता होने से पारिस्थितिक तंत्र में कार्बन डाइऑक्साइड और विभिन्न हानिकारक गैसों की मात्रा संतुलित और नियंत्रित रहती है साथ-साथ स्वच्छ और समृद्ध ऑक्सीजन का प्रवाह निरंतर बना रहता है

जैव विविधता संस्कृतियों को समृद्ध करती है लोग विभिन्न प्राकृतिक स्थलों को देखने के लिए पर्यटन की दृष्टि पारिस्थितिकी पर्यटन जैसी गतिविधियों में आनंद लेने के लिए विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करते हैं जिससे लोगों में सांस्कृतिक मूल्यों का आदान-प्रदान होने के साथ-साथ सांस्कृतिक विरासत को सहेजने के साथ-साथ अगली पीढ़ी में हस्तांतरण में सहायता मिलती है।

जैव विविधता दुनिया भर की अर्थव्यवस्थाओं में महत्वपूर्ण योगदान देती है। कई उद्योग अपने उत्पादों और सेवाओं के लिए विविध जैविक संसाधनों पर निर्भर करते हैं।

हमारे मजबूत कृषि तंत्र में जैव विविधता की महत्वपूर्ण भूमिका है,जैव विविधता कृषि और खाद्य उत्पादन का आधार है। विविध पारिस्थितिकी तंत्र फसलों और पशुधन में आनुवंशिक विविधता में योगदान करते हैं, जो कीटों, बीमारियों और बदलती पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति नई किस्मों को विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण है। जैव विविधता की समृद्धता प्रभावित होने से हमारा कृषि उत्पादन भी स्वाभाविक रूप से प्रभावित होने की आशंका है।

सारकोसिस्टोसिस का प्रकोप: पशु स्वास्थ्य से मानव स्वास्थ्य तक

डॉ. सविता बिसेन, डॉ. सोनाली पृष्टि
(सहायक प्राध्यापक) पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

भारतवर्ष में पशुपालन केवल आजीविका नहीं, बल्कि संस्कृति का हिस्सा है। गाय, भैंस, बकरी, भेड़, सूकर जैसे पालतू जानवर, गांवों एवं कस्बों की जीवनरेखा है। इन पशुओं के स्वास्थ्य का सीधा असर ग्रामीण अर्थव्यवस्था, पोषण एवं जीवनशैली पर होता है। सारकोसिस्टोसिस, पशुओं एवं मनुष्यों का एक परजीवी रोग है जो न तो आम लोगों में चर्चित है और न ही तुरंत पहचान में आता है। यह रोग पशुओं में *सारकोसिस्टिस* नामक सूक्ष्मजीवी के कारण होता है जो कि चुपचाप पशु शरीर में प्रवेश करता है एवं धीरे-धीरे उनके मांसपेशी ऊतकों को प्रभावित करता है। यदि संक्रमित पशु का मांस सही तरीके से नहीं पकाया जाता है तो यह रोग मनुष्यों को प्रभावित कर सकता है। यह रोग, आर्थिक हानि के साथ-साथ, स्वास्थ्य के लिए भी चुनौती है।

सारकोसिस्टोसिस क्या है?: सारकोसिस्टोसिस, एक परजीवी जनित संक्रमण है जो कि *सारकोसिस्टिस* नामक सूक्ष्मजीव के कारण होता है। यह परजीवी, दो मेजबानों के माध्यम से जीवन चक्र पूरा करता है।

सारकोसिस्टिस का जीवन-चक्र * मध्यवर्ती मेजबान-जैसे गाय, भैंस, बकरी, भेड़, सूकर, घोड़े आदि में *सारकोसिस्ट* परजीवी के सिस्ट, मॉसपेशियों में विकसित होते हैं। * अंतिम मेजबान- कुत्ते (श्वान), बिल्ली, इंसान आदि के शरीर में यह परजीवी प्रजनन करता है और मल के माध्यम से इसके अंडे बाहर निकलते हैं।

संक्रमण कैसे फैलता है?: जब एक मध्यवर्ती मेज़बान पशु, *सारकोसिस्ट* के अंडों से दूषित चारा, पानी या मिट्टी खाता है, तो ये अंडे पाचन तंत्र से होते हुए रक्त-प्रवाह में पहुंचते हैं और फिर मांसपेशियों में सिस्ट बनाते हैं। यदि अंतिम मेजबान, संक्रमित पशु के मांस को कच्चा या अधपका खा लेता है, तो परजीवी का जीवन-चक्र पूरा हो जाता है।

पशु प्रजातियों के अनुसार- लक्षण एवं प्रभाव

*** गाय एवं भैंस**

सामान्य परजीवी प्रजाति: *सारकोसिस्टिस क्रूज़ी, सारकोसिस्टिस होमिनिस*

लक्षण * दुग्ध उत्पादन में अचानक कमी * मांसपेशियों में सूजन व दर्द * थकान, सुस्ती, भूख में कमी * पाचन तंत्र में खराबी * पशु कमज़ोर होकर गिर सकता है। * गर्भवती पशुओं में गर्भपात या मृत जन्म

अंदरूनी लक्षण * हृदय एवं मांसपेशियों में सिस्ट की उपस्थिति। * दूधिया सफेद धब्बों के रूप में सिस्ट, ऊतकों में दिखाई देते हैं। * बकरी एवं भेड़

सामान्य परीजीवी प्रजाति- *सारकोसिस्टिस टेनेला, सारकोसिस्टोसिस ऐरितीकैनिस*

लक्षण * अचानक कमज़ोरी, चलने में परेशानी* पेट में सूजन, दस्त * नवजात मेमनों में मौत * मांसपेशियों में ऐंठन और दर्द * प्रजनन में असफलता

मांसपेशी में सारकोसिस्ट

नोट:- बकरी और भेड़, इस रोग के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

सूकर-सामान्य परजीवी प्रजाति-*सारकोसिस्टिस सुइहोमिनिस*

लक्षण * धीमी गति से वजन बढ़ना * मांसपेशियों में अकड़न * बुखार आना एवं बेवजह चीखना * अत्यधिक संक्रमण से मृत्यु हो सकती है।

घोड़े

***सारकोसिस्टिस न्युरोना*-**यह घोड़ों में इक्वाइन प्रोटोज़ोअल माइलोऐनसिफेलाइटिस का कारण बनता है।

लक्षण: * संतुलन खोना, एक पैर घसीटना * सिर झुकना, मुंह टेढ़ा होना * मांसपेशियों का पतला होना * खाना छोड़ना, चिड़चिड़ापन * नसों की कमज़ोरी, दौरे

नोट:- यह एक गंभीर तंत्रिका तंत्र का रोग है एवं इसके निदान में देर जानलेवा सिद्ध हो सकती है।

मनुष्यों में सारकोसिस्टोसिस- इस परजीवी से इंसान, दो तरीकों से संक्रमित हो सकता है:

* **आंतों का रूप-** जब व्यक्ति संक्रमित मांस खाता है तो उसमें पेट दर्द, दस्त एवं मतली के लक्षण दिखाई देते हैं।

* **मांसपेशियों का रूप-** दूषित पानी के सेवन से परजीवी के अंडे, मनुष्य के शरीर में प्रवेश करते हैं जिस कारण उन्हे मांसपेशियों में दर्द, सूजन एवं थकान महसूस होती है।

विशेषकर खतरे में: * अधपका मांस खाने वाले * फास्ट फूड का सेवन करने वाले * कसाई खानों एवं खेतों में काम करने वाला व्यक्ति

पशुओं में रोग का निदान: * रोग के लक्षणों का अवलोकन

* **पोस्टमॉर्टम जांच-** संक्रमित पशु की मृत्यु के बाद, मांसपेशियों में दुधिया-सफेद सिस्ट देखे जा सकते है। मांसपेशी ऊतक को काटने पर छोटी-छोटी "चावल के दाने" जैसी संरचनाऐं दिखाई देती हैं।

* **सूक्ष्म-दर्शी यंत्र द्वारा जांच**-सिस्ट की पुष्टि हेतु, मांसपेशी ऊतकों की स्लाइड तैयार कर, सूक्ष्म-दर्शी यंत्र से जांच की जाती है।

* **पी.सी.आर. परीक्षण**-आधुनिक प्रयोगशालाओं में सारकोसिस्टिस का डीएनए का पता लगाने हेतु पी.सी.आर. परीक्षण किया जाता है। यह परीक्षण विधि अत्यधिक सटीक होती है और प्रारंभिक चरण में ही संक्रमण की पुष्टि कर सकती है

मनुष्यों में रोग का निदान

* आंतों का संक्रमण * संक्रमित मांस खाने के बाद, पेट में दस्त, मतली आदि के लक्षण दिखाई देते हैं। * मल की सूक्ष्म जांच से सारकोसिस्टिस के अंडे (स्पोरोसिस्ट) की उपस्थिति जॉची जाती है। * मांसपेशी संक्रमण * मांसपेशियों में दर्द, सूजन, थकान और बुखार जैसे लक्षण प्रकट होते हैं। * मांसपेशी बायोप्सी में परजीवी की सिस्ट देखी जा सकती है। * इक्यूनोलॉजीकल परीक्षण से शरीर में सारकोसिस्टिस के प्रति एंटीबाडी की पहचान की जाती है।

रोकथाम: चूंकि सारकोसिस्टोसिस, एक ऐसा रोग है जो कि दवा से आसानी से ठीक नहीं किया जा सकता है अतः रोग की रोकथाम एवं नियंत्रण सबसे प्रभावी उपाय है।

* सभी प्रकार के मांस को कम से कम 70°C या उससे अधिक तापमान पर पकाएं चूंकि अधपका मांस खाने से मनुष्यों में संक्रमण का खतरा अत्यधिक बढ़ जाता है। * पालतू जानवर जैसे कुत्ते-बिल्लियों को कच्चा मांस खाने के लिए न दें। * पालतू जानवरों के मल को नियमित रूप से निपटाना चाहिए। * चूंकि दूषित पानी और मलयुक्त चारे द्वारा मध्यवर्ती मेजबान संक्रमित होते हैं अतः नदियों, पोखरों एवं टैंको को मल और मृत पशु अपशिष्ट से दूर रखें। * ग्रामीण क्षेत्रों में पशुपालकों को प्रशिक्षण देकर तथा जागरूकता कैम्प, पोस्टर एवं रेडियो द्वारा इस रोग के बारे में जनजागरण को सूचित करना चाहिए। * पशुओं में रोग के लक्षण दिखने पर, उन्हें अलग रखें और पशु चिकित्सक से परामर्श लेवें। * अनाधिकृत या अस्वच्छ बूचड़खानों पर रोक लगानी चाहिए।* पोस्टमॉर्टम जांच अनिवार्य हो, ताकि संक्रमित मांस बाजार में न पहुंचे। * फूड सेफ्टी विभाग और पशुपालन विभाग द्वारा मांसपेशियों में सिस्ट की पहचान हेतु नियमित निरीक्षण करना चाहिए। * संक्रमित मांस को खुले में फेंकना नहीं चाहिए, उसे जलाकर या गड्ढे में दफनाकर नष्ट किया जाना चाहिए। * चूंकि सारकोसिस्टोसिस एक छिपा हुआ परजीवी रोग है जो कि अधिकांशतः लक्षणहीन रहता है लेकिन जानवरों के स्वास्थ्य एवं इंसानों की सुरक्षा दोनों के लिए जोखिम बन जाता है। इस रोग का कोई स्पष्ट इलाज नहीं है लेकिन पशुओं का नियमित परीक्षण, जागरूकता एवं सुरक्षित मांस सेवन से इस रोग से पूरी तरह बचा जा सकता है।

✍ **रोमा वर्मा** शाक सब्जी विभाग, महात्मा गाँधी उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सांकरा, दुर्ग (छ.ग.)

प्रसन्नता, स्वास्थ्य और शान्ति का अद्भुत श्रोत- बागवानी

आज हमारे आपा–धापी भरे जीवन में तनाव और शांति ने अपना घर बना लिया है। सुख और शांति की खोज में भटकते मन के लिए प्रकृति एक अद्भुत शरणस्थली की भांति कार्य करती है। वृक्षों की छाया हो या रंग–बिरंगे पुष्पों का सौंदर्य ये सभी मन को मोहने के साथ ही हमें तनाव मुक्त भी करते हैं। मनुष्य अपना सब कुछ भूलकर प्रकृति की गोद में प्रसन्नता और शांति का अनुभव करता है। इसलिए प्राचीन समय से ही हमारे देष में वृक्षों बाग–बगीचों और वनों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

वृक्षों की पूजा की गई। इसकी एक वजह शायद यह भी थी कि आबो-हवा को साफ-सुथरी बनायें रखने में वृक्षों की महत्वपूर्ण भूमिका है। ये वृक्ष ही हैं, जो वातावरण को प्राण-वायु प्रदान करते हैं और गैसों का संतुलन बनाये रखते हैं। धरती की जलवायु को संतुलित बनाये रखने में भी वृक्षों की अहम भूमिका है। कुछ वृक्ष और वनस्पतियां ऐसी भी हैं जो हवा में मौजूद हानिकारक गैसों/पदार्थों को अपने में सोखकर हवा को साफ रखने का काम करती है। इसलिए वनों को धरती के फेफड़े भी कहा जाता है।

हाल के वर्षों में वृक्ष, विशेष रूप से फलदार वृक्ष, पोषण के साथ ही आमदनी बढ़ाने के प्रमुख स्त्रोत के रूप में भी सामने आए हैं। आजकल फल वृक्षों को एक आर्थिक साधन के रूप में देखा जाने लगा है क्योंकि फलों तथा इनसे बनने वाले उत्पादों की मांग बाजार में काफी बढ़ गई है। हमारे देश में बागवानी को बढ़ावा देने के लिए एक महत्वाकांक्षी राष्ट्रीय बागवानी मिशन चला था, जो बागवानों को सहायता तथा सुविधाएं उपलब्ध कराकर बागवानी अपनाने के लिए प्रेरित करता है तथा बढ़ावा देता है। फलों के साथ-साथ फूलों की खेती भी बागवानी का एक अहम हिस्सा है। फूलों की मांग न केवल हमारे देश के बाजारों में बढ़ी है बल्कि विदेशों में भी इनकी अच्छी मांग है। इसलिए आज फूलों का निर्यात जोर पकड़ रहा है। इसके साथ ही औषधीय व सुगंधीय पौधों की खेती तथा मसालों की खेती भी बागवानी का एक अहम हिस्सा बनकर आय का प्रमुख साधन बन गये हैं।

बागवानी से भरपूर पोषण

पर्यावरण सुरक्षा के साथ-साथ फल वृक्षों की बागवानी से आम आदमी की पोषण सुरक्षा को एक निश्चित आयाम दिया जा सकता है। चूंकि ज्यादातर ताजे फलों में प्रमुख तत्वों के साथ विटामिन्स, खनिज लवण तथा एन्टी आक्सीडेन्ट की प्रचुरता होती है, जिसका प्रभाव आम नागरिकों में होने वाली बीमारियों से सुरक्षा

प्रदान करना होता है तथा इसके साथ ही भविष्य में होने वाली बीमारियों से लड़ने की क्षमता विकसित की जा सकती हैं। ताजे फलों में पीला, लाल और बैंगनी रंगों के फलों में विटामिन-ए एवं कैरोटीन काफी मात्रा में पायी जाती है। आंवला में विटामिन सी की मात्रा ज्यादा होती है। गांवों में रहने वाली महिलाओं एवं बच्चों में ज्यादातर बीमारियां कुपोषण से होती हैं। चूंकि उनके दिन-प्रतिदिन के खान-पान में महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की कमी होती है और इसकी भरपाई फलों से की जा सकती है।

बागवानी अर्थात् सालोभर रोजगार

बागवानी एक ऐसी विधा है, जिसमें रोजगार का काफी सृजन होता है। चूंकि एक आदर्श बाग को स्थापित करने के लिए पौधों की तैयारी, गड्ढों की खुदाई, भराई, पौध रोपण और रख-रखाव में काफी लोगों को रोजगार दिया जा सकता है, जिससे आम आदमी का जीवन-स्तर एवं आर्थिक दृष्टिकोण भी काफी उपयोगी सिद्ध हो सकता है। वैसे भी आज के भौगोलिकरण युग में, जहां पर रोजगार की काफी समस्या हो रही है, उस स्थिति में बागवानी को पर्यावरण मित्र के रूप में अपनाकर आसपास ग्रामीण नवयुवकों को रोजगार का अवसर प्रदान किया जा सकता है तथा समाज में होने वाली कुरीतियों से बचाया जा सकता है। बागवानी को दृष्टिगत रखते हुए पौधशाला व्यवसाय में भी व्यापक स्तर पर रोजगार का काफी सृजन होता है।

बागवानी-विदेशी मुद्रा का श्रोत

सन् 2022-23 में भारत में 1635.95 मिलियन डालर का ताजा फल, सब्जियां और इनसे बने पदार्थों का निर्यात विश्व के विभिन्न देशों को किया था। परन्तु इसी वर्ष में मसालें तथा उससे बने पदार्थों का भारत 3952.60 मिलियन डालर का निर्यात किया था। परन्तु फूलों के निर्यात से हमें केवल 86.63 मिलियन डालर ही प्राप्त किये थे।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार

खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335

01/2023-24

सोयाबीन की उन्नत खेती

डॉ. थानेश्वर कुमार कृषि विज्ञान केन्द्र, मुंगेली
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

सामान्य परिचयः सोयाबीन एक दलहनी फसल है, सोयाबीन की खेती में भारत देश विश्व में पाचवे स्थान में आता है. भारत मे सोयाबीन की खेती मुख्य रूप से मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, कर्नाटक, तेलांगना, गुजरात, छत्तीसगढ़, बिहार, उत्तरप्रदेश और नागालैंड मे की जाति है. सोयाबीन शाकाहारियो के लिए मांस भी कहा जाता है, क्यों की इसमें बहुत अधिक मात्रा में प्रोटीन होता हैण् सोयाबीन एक महत्वपूर्ण खाद्य स्त्रोत है, इसके मुख्य घटक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा होते हैं। सोयाबीन मे 42% प्रोटीन, 22% तेल, 21% कार्बोहाइड्रेट, 12% नमी तथा 5% भस्म होता है आधुनिक जमाने मे सोयाबीन का इस्तेमाल तेल के नही हो रहा बल्कि इससे कई अन्य उत्पाद जैसे सोया दूध, सोया पनीर इत्यादि बनाये और इस्तेमाल किये जा रहे है जो की स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक माने जा रहे हैण् सोयाबीन की उन्नत खेती कर कृषक अधिक लाभ कमा सकता हैण्

मिट्टीः सोयाबीन की खेती के लिए दोमट मिट्टी उपयुक्त होता है लेकिन इसे उचित जल निकास एवम पर्याप्त जलधारण छमता वाली भूमि मे भी आसानी से उगाया जा सकता है. भारी मिट्टी मे जल निकास सुधारकर एवम हल्की मिट्टी मे पर्याप्त मात्रा मे गोबर खाद डालकर सोयाबीन की भरपूर उपज ली जा सकती है. मिट्टी मे वायु संचार ठीक तरह से हो इसलिए गर्मी मे मिट्टी पलटने वाले हल से मिट्टी की गहरी जुताई 3 वर्ष मे कम कम से एक बार अवश्य करनी चाहिए. डिस्क हैरो या बखर एवम पाटा चलाकर खेत को भुरभुरा एवम समतल कर ही बुआई हेतु तैयार करना चाहिए. सोयाबीन के लिए सबसे अछी कन्हार भरी पाई गयी है.

प्रजाति का चयनः सोयाबीन मे प्रजाति का चयन एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहलु है, प्रजाति का चयन करते समय मृदा का प्रकार, मानसून, बुआई का समय एवं प्रक्षेत्र पर उपलब्ध सिचाई की सुविधाओ को ध्यान मे रखकर करना चाहिए.सोयाबीन का जे,एस.-20-16 आर.एस.सी.11-07 (97-102 दिन), आर.एस.सी.10-52 (101 दिन), आर.एस.सी.10-46 (102-104 दिन), सी.जी. सोया-1(95-100 दिन), सी.जी. सोया-11-15 (101 दिन) एवम सी.जी. सोया-10-71(107 दिन) ये अछी प्रजातिया है जिसे कृषक खेती करके अछी उपज प्राप्त कर सकता है.

बीजदरः बीजदर के निर्धारण मे प्रजाति एवम मृदा के प्रकार का ध्यान रखना आवश्यक है.बड़े दानो वाली सोयाबीन की प्रजातियो मे सामान्यतः अंकुरण का प्रतिशत कम होता है अतः बीज दर भी अधिक होता है. सामान्यतः 75-100 कि.ग्रा./हेक्टर बीज की आवश्यकता होती है.

बीज उपचारः सोयाबीन को बोने से पहले सभी बीज एवम भूमिजन्य रोगों से बचाव हेतु ट्राईकोडर्मा विरिडी कल्चर की 5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से डालकर उपचारित करना चाहिए या रसायन कार्बेन्डाजिम की 2 ग्राम दवा को प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार करे एवम फफूंदनाशक दवा से उपचार करने के बाद इसे राइजोबियम कल्चर व पी.एस.बी. से उपचारित करे. तरल जैव उर्वरक के प्रत्येक की 1 मिली.मात्रा 0.2 प्रतिशत शक्कर गुड़ के घोल से पतला कर प्रति किलोग्राम बीज को उपचारित करे.

भूमि उपचारः गर्मी में गहरी जुताई कर भूमि को सूर्यताप से उपचारित करे साथ ही यथासंभव फसल चक्र अपनाकर भूमजन्य रोगो के प्रभाव को कम कर सकते है. खेत तैयार करते या बोनी करते समय 2.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर ट्राईकोडर्मा विरिडी कल्चर

को पर्याप्त मात्रा मे गोबर की खाद या केचुवा खाद मे मिलाकर पर्याप्त नमी की अवस्था मे खेत मे मिलाये. ट्राईकोडर्मा कल्चर भूमि मे उपस्थित रोग जनको को प्रतिबंधित करता है.

बुवाई की विधिःसीडड्रिल की सहायता से कतार से कतार बुवाई करे. कतार से कतार की दुरी 45 से.मी. तथा पौध से पौध की दूरी 8-12 से. मी. रखे.बोनी करते समय मेड नाली पद्धति (Ridge and Furrow) को अपनाये. इस विधि मे सोयाबीन की बोनी मेड (Ridge) पर की जाती है एवं तो कतारों के बीच नाली (Furrow) बनाई जाती है. इस कार्य के ब्राड बेड फर्रो नामक कृषि यंत्र का उपयोग कर सकते है. सोयाबीन की बुवाई इस विधि से करने से 20-25 प्रतिशत तक अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। यह विधि जलमग्नता एवम सुखा दोनो स्थिति मे लाभकारी है। इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर छ.ग. द्वारा विकसित इंदिरा सोया सीडड्रिल द्वारा ऊँची क्यारी बनाकर बीजो की बोनी की जाति है। इस पद्धति से बोनी करने पर सोयाबीन के बीज सड़ने की दर कम हो जाता है तथा पौधों की वृद्धि व सोयाबीन का उत्पादन भी अधिक होता है.

पोषक तत्वों की मात्राः सोयाबीन मे संतुलित मात्रा मे उर्वरक उपयोग करना चाहिए.रबी फसलो की कटाई के बाद मृदा परिछण अनिवार्य रूप से कराना चाहिए, तत्पशात तकनीकी विशेषज्ञों के सलाह से संतुलित उर्वरको की मात्रा निर्धारित करे.संतुलित मात्रा मे उर्वरको का प्रयोग मृदा मे उपलब्ध सभी पोषक तत्वों के कुशलतापूर्वक उपयोग मे साहयक होता है साथ ही किट और रोग के प्रति फसलो की प्रतिरोधकता को भी बढाता है.सामान्य रूप से सोयाबीन मे 20-25 कि.ग्रा. नत्रजन, 60-80 कि.ग्रा. स्फुर, 30-40 कि.ग्रा. पोटाश के साथ 20-25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति है. आवश्यकता होती है.

बुवाई का समयः जून के दुसरे सप्ताह के पश्चात पर्याप्त नमी होने पर खेत तैयार कर बुवाई करे.मानसून देर से आने पर कम अवधि वाले प्रजाति का चयन करे.जुलाई के प्रथम सप्ताह के पश्चात् द्वितीय सप्ताह मे 10 प्रतिशत अधिक बीज दर के साथ बुवाई करे.जुलाई के द्वितीय सप्ताह के बाद सोयाबीन के फसल को बुवाई करना लाभकारी नही है.

पौध सरक्षणः सामान्यतः असंतुलित उर्वरको,घनी फसलो (ज्यादा पौध संख्या),त्रुटिपूर्ण फसल पधत्ति, त्रुटिपूर्ण रसायनों के चयन एवं प्रयोग के कारण फसल में कीट एवं व्याधियो का प्रकोप होता है.

प्रमुख हानिकारक किट एवम उसका प्रबंधनः पत्तिभक्षक किट ब्लू बीटल (नीला भृंग), चने की इल्ली,तम्बाकू की इल्ली, कम्बल किट,हरी अर्धकुन्डलक इल्ली आदि.

प्रबंधनः उपरोक्त श्रेणी के कीटो का प्रबंधन एक साथ करें

1.प्रतिदिन शाम को सूर्यास्त के बाद 2 घंटे तक प्रकाश प्रपंच का प्रयोग करे.2.पछियो के बैठने हेतु टी आकार की 50 खुटिया प्रति है. लगाये. 3.चने की इल्ली एवम तम्बाकू की इल्ली के लिए 8-10 फेरोमेनं प्रपंच प्रति है. लगाएं. 4.कीटग्रस्त पोधे या पौधे के भाग को एकत्र कर खेत से बाहर कर देवें. 5.बी.टी.कल्चर 1 की.ग्रा. या बिवेरिया बेसियाना 1 की.ग्रा. प्रति है. की दर से छिडकाव करे. 6. अंतिम विकल्प के रूप मे लेम्डासायहेलोथ्रिन+थयोमेथाक्जाम 150 ग्रा. इमिड़ाकलोरपीड बीतासायफलुथ्रिन 350 मिली दवाई 350 से 400 ली. पानी मे घोलकर प्रति है. की दर से छिड़काव करें।

रसचूसक कीटः इस समूह मे हरा माहू, भूरा माहू, फुदका, थ्रिप्स एवं सफेद मक्खी प्रमुख है.घनी फसल तथा असंतुलित उर्वरक इन कीटो को बढ़ाते है

प्रबंधनः उपरोक्त श्रेणी के कीटो के प्रबंधन हेतु निम्न उपाय करें

1.अनुसंशित बीज दर एवम संतुलित उर्वरको का प्रयोग करें 2. एकीकृत प्रबंधन उपाय उपरोक्तानुसार अपनाये एवम एवम अंतिम विकल्प के रूप मे इमिड़ाकलोरपीड 17.8 एस.एल. 150 मि.ली. हैक्टेयर का प्रयोग कर सकते है.

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान
हमारे यहां सभी प्रकार के खाद
बीज एवं कीटनाशक दवाईयां
उचित रेट पर मिलती है
प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094
भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
10/2023-24

डॉ. अभिषेक राजपूत शिक्षण सहयोगी,पशु शरीर रचना विभाग, डी.एस.वी.सी.के.वी., दुर्ग (छ.ग.)

डॉ. कशिश आफरीन आलम पशु चिकित्सक, मोबाइल पशु चिकित्सा इकाई, जगदलपुर (छ.ग.)

डॉ.आबशार आलम एम.वी.एससी.पशु चिकित्सा सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, डी.एस.वी.सी.के.वी.,दुर्ग (छ.ग.)

बिल्लियों की संरचनात्मक बायोडायनामिक्स: उनकी फुर्ती और लचीलापन का रहस्य

बिल्लियां अपनी असाधारण फुर्ती, संतुलन और सुंदर चाल के लिए जानी जाती हैं। ऊँचाई पर चढ़ना, हवा में घूमना या बहुत ही सटीक तरीके से छलांग लगाना- ये सभी उनकी अनूठी शारीरिक रचना और गतिशीलता का परिणाम हैं। इस लेख में हम जानेंगे कि बिल्लियों का शरीर किस तरह से बना है और कैसे उनकी हड्डियाँ, मांसपेशियाँ और तंत्रिका तंत्र एक साथ मिलकर उनके लचीले और कुशल मूवमेंट्स में मदद करते हैं।

संरचनात्मक बायोडायनामिक्स क्या है?

संरचनात्मक बायोडायनामिक्स का मतलब है शरीर की संरचना (जैसे हड्डियाँ, मांसपेशियाँ और जोड़) और उनके साथ जुड़ी हुई गतियों और ताकतों का अध्ययन। बिल्लियों में यह अध्ययन हमें यह समझने में मदद करता है कि वे इतनी आसानी और तेजी से कैसे हिलती-डुलती हैं।

बिल्ली का कंकाल: लचीलेपन की नींव

बिल्लियों का कंकाल विशेष रूप से फुर्तीली गतिविधियों के लिए अनुकूलित है:

रीढ़ की लचक: बिल्लियों की रीढ़ (स्पाइन) बहुत ही लचीली होती है, जिससे वे झुकने, मुड़ने और हवा में घूमने जैसे मूवमेंट्स आसानी से कर पाती हैं।

फ्री-फ्लोटिंग कॉलर बोन (क्लेविकल): बिल्लियों की कॉलर बोन सीने से जुड़ी नहीं होती, जिससे उनके कंधे अधिक हिल सकते हैं और वे आसानी से तंग जगहों से निकल सकती हैं।

पूंछ का संतुलन: चलने, दौड़ने और ऊँचाई से कूदते समय पूंछ उनका संतुलन बनाए रखती है।

मांसपेशियों की ताकत और नियंत्रण

बिल्लियों की मांसपेशियाँ तेज़ी और नियंत्रण दोनों में माहिर होती हैं:

तेज गति वाली मांसपेशियाँ: उनके शरीर में "फास्ट-ट्विच" मांसपेशियाँ ज्यादा होती हैं, जो उन्हें तेज़ी से दौड़ने और छलांग लगाने में मदद करती हैं।

पैरों की रचना: पिछले पैर लंबे और ताकतवर होते हैं, जो उन्हें ऊँचाई तक छलांग लगाने की शक्ति देते हैं।

पंजे और नाखून: मुलायम पंजे ज़मीन से झटकों को कम करते हैं और तेज़ नाखून पकड़ और चढ़ने में मदद करते हैं।

तंत्रिका नियंत्रण: हर चाल में सटीकता

बिल्लियों का दिमाग और तंत्रिका तंत्र उनकी हरकतों को बारीकी से नियंत्रित करता है:

प्रोप्रियोसेप्शन: यह एक विशेष संवेदना है जिससे उन्हें अपने शरीर के हर हिस्से की स्थिति का अहसास होता है। इससे वे संतुलन बनाए रखती हैं।

राइटिंग रिफ्लेक्स: जब बिल्ली गिरती है, तो वह हवा में ही अपने शरीर को घुमा लेती है और अपने पैरों के बल उतरती है। यह उनकी रीढ़ की लचीलापन और तेज़ तंत्रिका प्रतिक्रिया के कारण संभव होता है।

चलने और दौड़ने के तरीके

बिल्लियाँ अलग-अलग गति से अलग ढंग से चलती हैं:

धीरे चलना (Walk): चारों पैरों से बारी-बारी से चलती हैं, जिससे संतुलन बना रहता है।

दौड़ना (Trot): एक समय में विपरीत दिशा के दो पैर साथ में चलते हैं।

तेज़ दौड़ (Gallop): पूरी गति से दौड़ते समय उनके सभी पैर एक पल के लिए हवा में होते हैं।

कूदना और उतरना: बिल्लियाँ अपनी लंबाई से कई गुना दूर छलांग लगा सकती हैं। उतरते समय उनके पंजे झटका कम करते हैं और रीढ़ की हड्डी लचीलापन बनाए रखती है।

विकास के अनुसार बनी रचना

बिल्लियों का शरीर केवल सुंदर नहीं, बल्कि विकास के अनुसार बहुत उपयोगी बना है:

शिकार की कला: उनकी नाखून, नजर, और चुपचाप चलने की कला उन्हें बेहतरीन शिकारी बनाती है।

जीवन रक्षा: ऊंचाई पर चढ़ना, दौड़ना, और छोटे स्थानों से निकलना उन्हें खतरे से बचाता है।

पशु चिकित्सा में महत्व

पशु चिकित्सक और पालतू पशु पालकों के लिए यह जानकारी बहुत उपयोगी है:

चोट से बचावः यह समझना जरूरी है कि बिल्ली की शारीरिक सीमाएं क्या हैं, जिससे उन्हें ऊँचाई से गिरने या चोट लगने से बचाया जा सकता है।

उपचार और पुनर्वास: यदि किसी मांसपेशी या जोड़ में चोट होती है, तो उसकी रिकवरी के लिए यह समझना जरूरी है कि बिल्ली किस तरह से अपने शरीर का उपयोग करती है।

व्यवहार संबंधी संकेत: यदि बिल्ली की चाल में बदलाव आता है, तो यह किसी बीमारी या दर्द का संकेत हो सकता है।

निष्कर्ष

बिल्लियों का शरीर एक अद्भुत रचना है जो उन्हें फुर्ती, ताकत, और सुंदर चाल देता है। उनकी संरचनात्मक बायोडायनामिक्स का अध्ययन करके हम न केवल उनके व्यवहार को समझ सकते हैं, बल्कि उन्हें बेहतर देखभाल और सुरक्षा भी दे सकते हैं।

जैन बीज भण्डार एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

डॉ. नेहा भगत, डॉ. आर.एफ. कुजूर
डॉ. डी.के. जोल्हे डॉ. आर. सी. घोष
डॉ. पी. सिंह, डॉ. पावन सिदार
डॉ. कलेशवरी कंवर
(छत्तीसगढ़)

गोजातीय तपेदिक (बोवाइन ट्यूबरकुलोसिस) (टीबी, क्षय रोग)

परिचय

- गोजातीय तपेदिक एक गंभीर संक्रामक रोग है जो पालतू और जंगली जानवरों की एक विस्तृत श्रृंखला को प्रभावित करता है, जिससे गंभीर आर्थिक और सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौतियाँ पैदा होती हैं।
- ट्यूबरकल्स के रूप में जाने जाने वाले ग्रैनुलोमैटस नोड्यूल्स का विकास, जो गोजातीय तपेदिक का संकेत है, काफी हद तक संक्रमण के मार्ग पर निर्भर करता है।
- यह एक वैश्विक बीमारी है जो मवेशी उत्पादन उद्योग को आर्थिक रूप से बहुत प्रभावित करती है।

रोग का कारक

- माइकोबैक्टीरियम बोविस गोजातीय तपेदिक हेतु एटियलॉजिकल एजेंट के रूप में काम करता है।
- मनुष्य भी अतिसंवेदनशील होते हैं, आमतौर पर संक्रमित दूध के सेवन से संक्रमण प्राप्त करते हैं।

रोग का संचरण

- संक्रमित मवेशी अन्य मवेशियों के लिए संक्रमण का मुख्य स्रोत हैं।
- जीवों को हवा में, थूक, मल, दूध, मूत्र और योनि और गर्भाशय स्राव के माध्यम से उत्सर्जित किया जाता है।
- घर में रखे गए मवेशियों में साँस लेना प्रवेश का सबसे आम मार्ग है।
- चरागाह में मल के कारण चारा और आम पीने के पानी और चारा कुंड में संक्रमण होने की संभावना अधिक होती है।

रोग के नैदानिक लक्षण

- गोजातीय तपेदिक से पीड़ित मवेशी लगातार, अपंग करने वाली बीमारी से पीड़ित हो सकते हैं।
- रोग के शुरुआती चरणों में, कोई लक्षण नहीं होते हैं।
- कमज़ोरी, कम तापमान जो उतार-चढ़ाव करता रहता है, धीरे-धीरे क्षीणता और भूख में कमी।
- फेफड़ों में संक्रमण होने पर सांस की तकलीफ, गीली खांसी या ट्रेकिप्निया (तीव्र श्वसन संकट) हो सकता है।
- बाहरी भाग पर फर खुरदरा हो सकता है।
- सूजे हुए लिम्फ नोड्स।
- सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए खतरे और बछड़ों में बीमारी फैलने के कारण तपेदिक स्तनदाह बहुत महत्वपूर्ण है।

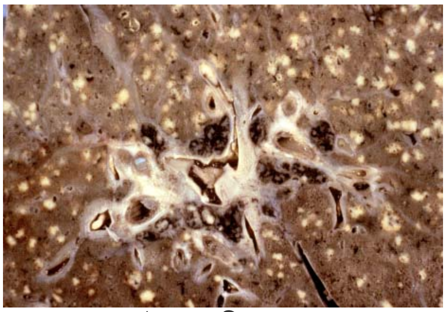

रोग का निदान

- गोजातीय तपेदिक से पीड़ित मवेशियों में नैदानिक लक्षण दिखने में आम तौर पर महीनों लग जाते हैं।
- इसके अतिरिक्त, संक्रमण बुढ़ापे में या तनावपूर्ण स्थिति के दौरान फिर से उभरने से पहले वर्षों तक छिपा रह सकता है।
- पोस्टमॉर्टम जांच के दौरान शरीर के ऊतकों और विभिन्न अंगों (फेफड़े, यकृत, तिल्ली) पर ग्रैनुलोमा नामक ट्यूबरकल की उपस्थिति पाई जाती है। ये ग्रैनुलोमा पीले, केसियस या कैल्सीफाइड होते हैं, अक्सर कैप्सुलेटेड होते हैं और काटने पर एक किरकिरापन और घिसने की आवाज़ कैल्केरियस पदार्थों की उपस्थिति को इंगित करती है। ट्यूबरकुलिन त्वचा परीक्षण (Tuberculin skin test)

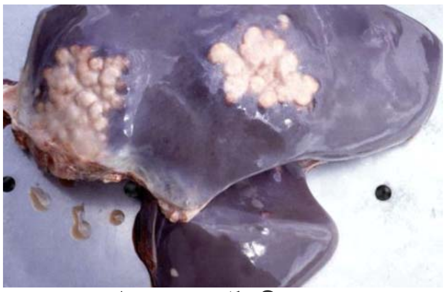

रोकथाम और नियंत्रण

- स्वस्थ और प्रभावित जानवरों को अलग-अलग बाड़ों में रखा जाता है।
- स्वच्छता और कीटाणुशोधन, बंद करने के बजाय खुली हवा में आवास और भीड़ से बचने से झुंड के भीतर तपेदिक के प्रसार को कम किया जा सकता है।
- संक्रमित झुंडों से गैर-संक्रमित झुंडों में जानवरों की आवाजाही को सीमित करना। स्थानिक क्षेत्रों में, पशु चिकित्सा अस्पतालों में बैरियर नर्सिंग सावधानियों पर विचार किया जाना चाहिए जब जानवरों में तपेदिक के अनुरूप लक्षण दिखाई दें।
- एम. बोविस के बैसिलस कैलमेट ग्यूरिन (BCG) स्ट्रेन वाले कुछ टीकों सहित, पशुओं में संभावित उपयोग और तपेदिक को नियंत्रित करने में सहायता के रूप में मूल्यांकन किया जा रहा है।

12/2022-23

कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा की स्थिति एवं कानूनी प्रावधान

शिखा मौर्या पी.एच.डी. (शोध छात्रा), मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, सामुदायिक महाविद्यालय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर

निर्विकार शाही पी.एच.डी. (शोध छात्र)

डॉ. सुमेधा चौधरी (सहायक अध्यापिका), मानव विकास एवं पारिवारिक अध्ययन विभाग, सामुदायिक महाविद्यालय, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि. कानपुर (उ.प्र.)

कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा एक महत्वपूर्ण विषय है जिस पर ध्यान देना आवश्यक है। एक सुरक्षित और सहायक कार्य वातावरण न केवल महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करता है बल्कि उनकी उत्पादकता और समग्र कल्याण को भी बढ़ावा देता है।

पिछले कुछ वर्षों में महिलाओं का योगदान देश के विभिन्न क्षेत्रों जैसे- बैंक, वित्तीय संस्थान, सॉफ्टवेयर कंपनी, मार्केटिंग एजेंसी, कॉलेज इत्यादि विभिन्न कार्यस्थलों पर रहा है। ये वही कार्यस्थल हैं, जो किसी भी व्यक्ति के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होता है, न केवल आर्थिक उन्नति का केंद्र है बल्कि व्यक्तिगत विकास और सामाजिक संपर्क का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। हालांकि, कामकाजी महिलाओं की भागीदारी जितनी बढ़ी है पिछले कई वर्षों में उतना ही उनको चुनौतियों और असुरक्षाओं का भी सामना करना पड़ रहा है। कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा एक बहुआयामी मुद्दा है जिसमें शारीरिक सुरक्षा, यौन उत्पीड़न से मुक्ति, समान अवसर, और एक सम्मानजनक कार्य वातावरण शामिल है। सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय (MoSPI) द्वारा, 2024 में आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (PLFS) जारी किया गया। यह सर्वे ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में भारत के उभरते श्रम बाजार की गतिशीलता के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। NSO ने अप्रैल 2017 में रोजगार और बेरोजगारी सर्वेक्षण (EUS) की जगह PLFS शुरू किया। इस सर्वेक्षण के अनुसार 15 वर्ष और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए श्रम बल भागीदारी दर (LFPR) में महिलाएँ 23.3% से बढ़कर 41.7% हो गई हैं एवं 15 वर्ष और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए श्रमिक जनसंख्या अनुपात (WPR) में महिलाएँ 22.0% से बढ़कर 40.3% हो गई हैं। यह आंकड़ा बताता है कि कार्यरत्त महिलाओं की भागीदारी पिछले वर्षों के मुकाबले दिन प्रतिदिन बढ़ रही है।

श्रम बल भागीदारी दर (Labour Force Participation Rate- LFPR): कुल जनसंख्या में श्रम बल (रोजगार में लगे या रोजगार की तलाश में) में शामिल व्यक्तियों का प्रतिशत।

श्रमिक जनसंख्या अनुपात (Worker Population Ratio-WPR): शारीरिक सुरक्षाः कुल जनसंख्या में कार्यरत व्यक्तियों का प्रतिशत।

कार्यस्थल पर महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक यौन उत्पीड़न है। यह न केवल महिलाओं की गरिमा और आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाता है बल्कि उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव डालता है। यौन उत्पीड़न में अवांछित यौन टिप्पणियां, इशारे, शारीरिक संपर्क, यौन संबंध बनाने के लिए दबाव, या यौन प्रकृति की कोई भी अन्य आपत्तिजनक व्यवहार शामिल हो सकता है। भारत के कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की शिकायतों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। POSH एक्ट के अनुसार शिकायतों की कुल संख्या वित्त वर्ष 22-23 में 1,807 से बढ़कर वित्त वर्ष 23-24 में 2,325 हो गई, जो साल-दर-साल 29% की वृद्धि है। वहीं महिलाओं की शारीरिक सुरक्षा भी चिंता का विषय है, इसमें कार्यस्थल की भौतिक संरचना से लेकर परिवहन की व्यवस्था, अच्छी तरह से रोशनी वाले परिसर महिलाओं को सुरक्षित महसूस कराने के लिए महत्वपूर्ण हैं। देर रात या विषम समय की शिफ्टों में काम करने वाली महिलाओं के लिए सुरक्षित परिवहन की व्यवस्था सुनिश्चित करना नियोक्ता की जिम्मेदारी है।

देश में कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा के लिए कानूनी प्रावधान एवं सरकारी योजना-

महिलाओं के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन: कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न लैंगिक भेदभाव का एक रूप है। यह संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 के तहत महिलाओं के समानता के अधिकार और अनुच्छेद 21 के तहत सम्मान के साथ जीने के अधिकार का उल्लंघन करता है।

फैक्ट्री कानून, 1948: भारत में महिलाओं के लिए फैक्ट्री कानून अधिनियम में महिलाओं के स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण की रक्षा के उद्देश्य से कई प्रावधान शामिल है इसमें धारा 66(1)(बी)- आम तौर पर, महिलाओं को शाम 7 बजे से सुबह 6 बजे के बीच कारखानों में काम करने के लिए मजबूर या अनुमति नहीं दी जा सकती है, धारा 22(2)- महिलाओं को चलती हुई मशीनरी पर या उसके पास सफाई या समायोजन में संलग्न करना कानूनन अपराध की श्रेणी में आता है, धारा 34- महिलाएं अतिरिक्त उच्च जोखिम वाली मशीनें नहीं चला सकती हैं या अत्यधिक वजन नहीं उठा सकती हैं, धारा 48(1)-अगर कारखाने में 30 से ज्यादा महिला कामगार हों तो क्रेश की सुविधा का प्रावधान होना चाहिए, धारा 59(1)- महिला कर्मचारी को कारखाने में 9 घंटे से ज्यादा काम कराने की इजाजत नहीं है।

कर्मचारी राज्य बीमा कानून, 1948: यह अधिनियम बीमारी, मातृत्व, विकलांगता और रोजगार से संबंधित चोटों के मामले में कर्मचारियों को लाभ प्रदान करता है। इसमें धारा 46 के अंतर्गत काम की वजह से होने वाली चोट/बीमारी के लिए महिला कामगार को पर्याप्त चिकित्सा सुविधा और बीमा कवरेज की उपलब्धता जरूरी होगी एवं प्रसूति के दौरान सवैतनिक अवकाश (26 सप्ताह तक) दिया जाएगा।

ठेका मजदूर कानून, 1970: जिसे ठेका श्रम (विनियमन और उत्सादन) अधिनियम, 1970 के नाम से जाना जाता है, भारत में ठेका पर काम करने वाले मजदूरों के हितों की रक्षा और कुछ परिस्थितियों में ठेका श्रम को समाप्त करने के लिए बनाया गया एक महत्वपूर्ण कानून है। इसमें धारा 18 के अनुसार आराम करने की व्यवस्था का प्रावधान हो जो महिलाओं की गोपनीयता एवं सुरक्षा को ध्यान में रखकर किया गया हो।

यौन उत्पीड़न (निवारण, निषेध और प्रतितोष) अधिनियम POSH, 2013: POSH अधिनियम से पहले, विशाखा दिशानिर्देश भारत में कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से निपटने की दिशा में पहला महत्वपूर्ण कदम थे। कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम सभी महिलाओं पर लागू होता है, चाहे उनकी उम्र, नौकरी का प्रकार या कार्य क्षेत्र कुछ भी हो। यह नियोक्ताओं को 10 से अधिक कर्मचारियों वाले कार्यस्थलों में एक आंतरिक समिति (आईसी) बनाने का आदेश देता है, जबकि उपयुक्त सरकार छोटे संगठनों या नियोक्ताओं के खिलाफ मामलों हेतु स्थानीय समितियां (एलसी) स्थापित करती है। महिला और बाल विकास मंत्रालय कार्यान्वयन और जागरूकता की देखरेख करता है। शिकायत डेटा को केंद्रीकृत करने के लिए मंत्रालय ने मामलों की रिपोर्टिंग और ट्रैकिंग हेतु एक पोर्टल शी-बॉक्स को लॉन्च किया गया। इस अधिनियम के तहत जांच 90 दिनों के भीतर पूरी होनी चाहिए।

यौन उत्पीड़न इलेक्ट्रॉनिक-बॉक्स (शी-बॉक्स): केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा 24 जुलाई 2017 को कार्यस्थल पर होने वाले यौन शोषण से संबंधित शिकायतों को दर्ज करने के लिये यौन उत्पीड़न इलेक्ट्रॉनिक बॉक्स (Sexual Harassment electronic–Box- SHe-Box) नामक एक ऑनलाइन शिकायत तंत्र आरंभ किया गया है। यह पोर्टल केंद्र सरकार के किसी भी कार्यालय में काम करने वाली या वहाँ जाने वाली महिलाओं को उक्त अधिनियम के अंतर्गत कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न संबंधी शिकायतें दर्ज कराने के लिये एक मंच उपलब्ध कराएगा।

निर्भया फंड: महिला एवं बाल विकास मंत्रालय हर जगह महिलाओं की सुरक्षा के लिए सक्रिय है। महिलाओं के खिलाफ बढ़ते अपराधों को देखते हुए मंत्रालय ने देश भर में सुरक्षा परियोजनाओं का वित्तपोषण करने के लिए निर्भया फंड नामक एक अलग कोष की स्थापना की है। वित्तीय वर्ष 2024-25 तक इस कोष को 7712.85 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं, जिसमें से 5846.08 करोड़ रु. का उपयोग हुआ है, जो कुल आवंटन का लगभग 76% है। यह कोष वन स्टॉप सेंटर, इमरजेंसी रिस्पांस सपोर्ट सिस्टम, महिला हेल्पलाइन, फास्ट ट्रैक स्पेशल कोर्ट जैसे कई परियोजनाओं और योजनाओं का समर्थन करता है।

आपातकालीन प्रतिक्रिया सहायता प्रणाली (ईआरएसएस- 112): यह भारत सरकार द्वारा शुरू की गई एक एकीकृत आपातकालीन सेवा है, जिसमें सभी प्रकार की आपात स्थितियों से निपटने हेतु एक ही आपातकालीन नंबर-112 है।

वन स्टॉप सेंटर (ओएससी): निर्भया फंड के तहत स्थापित, ओएससी हिंसा से प्रभावित महिलाओं को सहायता प्रदान करते हैं। ये केंद्र चिकित्सा सहायता, कानूनी सहायता, मनोवैज्ञानिक परामर्श और अस्थायी आश्रय प्रदान करते हैं जिससे महिलाओं के खिलाफ विभिन्न प्रकार की हिंसा हेतु प्रतिक्रिया की सुविधा मिलती है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार, वर्तमान में देश भर में 812 चालू ओएससी हैं।

24×7 महिला हेल्पलाइन (181): महिला हेल्पलाइन नंबर 181, निजी और सार्वजनिक दोनों जगहों पर हिंसा का सामना करने वाली महिलाओं को 24 घंटे 7 दिनों तक आपातकालीन और सहायता सेवाएं प्रदान करता है। यूनिवर्सलाइजेशन ऑफ वूमेन हेल्पलाइन योजना के तहत 3 दिसंबर, 2018 को शुरू की गई यह योजना पुलिस, अस्पताल, कानूनी सहायता और वन स्टॉप सेंटर के लिए रेफरल प्रदान करती है।

भारतीय न्याय संहिता 2023: इस अधिनियम के अंतर्गत यौन अपराधों के लिए कठोर दंड की व्यवस्था की गई है, जिसमें 18 वर्ष से कम उम्र की लड़कियों के साथ बलात्कार के लिए मृत्युदंड का प्रावधान शामिल है। इसमें बलात्कार के लिए न्यूनतम सजा में भी वृद्धि की गई है, महिलाओं और बच्चों के लिए अधिक व्यापक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए यौन अपराधों की परिभाषा का विस्तार किया गया है।

कार्यस्थल पर सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु कुछ महत्वपूर्ण पहल-

- कार्यस्थलों को महिलाओं के लिए सुरक्षित और सुलभ होना चाहिए। इसमें अच्छी रोशनी, सुरक्षित परिवहन व्यवस्था (विशेषकर देर रात की शिफ्टों के लिए), और आवश्यकतानुसार अलग शौचालय और विश्राम कक्ष जैसी सुविधाएं शामिल हैं।
- कर्मचारियों को उनके अधिकारों और कार्यस्थल पर शिकायत निवारण तंत्र के बारे में जागरूक किया जाना चाहिए।
- कंपनियों को स्पष्ट और सुसंगत नीतियां बनानी चाहिए, जो कार्यस्थल पर सुरक्षा और सम्मान को बढ़ावा दें।
- प्रशासनिक अधिकारियों को नियमित निगरानी और महिला सुरक्षा उपायों पर अमल के लिए जोर देना चाहिए।
- कार्यस्थलों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके आईटी सिस्टम सुरक्षित हैं और कर्मचारियों को साइबर सुरक्षा के बारे में शिक्षित किया जाता है।

निष्कर्ष: कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा एक जटिल और बहुआयामी मुद्दा है, जिसके लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता है। शारीरिक सुरक्षा सुनिश्चित करने, यौन उत्पीड़न को रोकने, समान अवसर प्रदान करने, और एक सम्मानजनक कार्य वातावरण बनाने के लिए नियोक्ताओं, कर्मचारियों, सरकार और नागरिक समाज सभी को मिलकर काम करना होगा। एक सुरक्षित और समावेशी कार्यस्थल न केवल महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करता है बल्कि एक अधिक न्यायसंगत और समृद्ध समाज के निर्माण में भी योगदान देता है।

धन्य कुमार (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड वि.वि. झांसी

आरती (शोध छात्रा) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड वि.वि. झांसी उ.प्र.

डॉ. महजबी हाशमी (शिक्षण सहायक) पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड वि.वि. झांसी

खरीफ सब्जी फसलों में होने वाले प्रमुख रोग एवं उनका प्रबन्धन

सब्जियां उनकें पोषक तत्वों जैसे विटामिन, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, अमीनो अम्ल एवं खनिज पदार्थ आदि की धनी स्रोत होने के कारण मनुष्य के भोजन का आवश्यक अंग है।इंडियन कॉन्सिल ऑफ मेडिकल रिसर्च, नई दिल्ली एवं राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद के द्वारा संस्तुत भारत में सब्जी की प्रति व्यक्ति मांग 300 ग्राम के विपरीत केवल 130 ग्राम प्रति व्यक्ति उपलब्ध है।

भारत के उत्तरी पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों जैसे दिल्ली, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश एवं पंजाब आदि में सामान्यतः किसान फसल चक्र के सिद्धान्तों का पालन नही करते है जिसके कारण रोगों को फलने-फूलने के लिए अनुकूल दशाऐं मिल जाती है परिणामस्वरूप फसलों में भारी क्षति होती है।

आर्द्रपतन रोग (डेम्पिंग ऑफ)

यह रोग खीरा, लौकी, काशीफल, आदि को प्रभावित करता है। यह रोग मृदा जनित है एवं पीथियमस्पेशीज, फाइटोफ्थोरा स्पेशीज एवं राइजोक्टोनिया स्पेशीज द्वारा होता है परन्तु पीथियम अफेनीडर्मेटम प्रमुख रोगकारक है।

रोग लक्षण

आर्द्रपतन नई पौध या बीजांकुरों का सामान्य रोग है। यह उन सभी स्थानों पर पाया जाता है जहां पर नमी की अधिकता तथा खेतों में जल निकास का उचित साधन नही होता है। यह रोग लगभग सभी शाक सब्जियों को भारी क्षति पहुंचाता है।

बीज गल जाता है अथवा बीजांकुर नये मूलांकुर (रेडिकल) एवं प्रांकुर (प्लूमूल) की गलन के कारण मर जाते है। अंकुरण पश्चात अवस्था संक्रमित बीजांकुरो के भूमि से निकलने पर किसी भी समय भूमि पर धराशायी होने से पहचानी जाती है। रोगी बीजांकुर पीले हरे होते है एवं उन पर कॉलर क्षेत्र पर मृदा सतह के पास एक भूरा विक्षत या धब्बा पाया जाता है। संक्रमित उत्तक सड़ जाते है और बीजांकुर नष्ट होकर धराशायी हो जाते है।

रोग प्रबन्धन

1. नर्सरी के लिये उभरी हुई बीज शैय्या तैयार करनी चाहिये जिससे जल निकास आसानी से हो सके। नर्सरी की मृदा हल्की बलुई होनी चाहिए।
2. बुवाई से पहले कैप्टान अथवा थाइराम से 2.5-3.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीज का उपचार करना चाहिए। बीज को ट्राइकोडर्माविरिडीके कवक संवर्ध से 4 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करने पर अंकुरण पूर्व आर्द्रपतन का प्रभावशाली नियन्त्रण हुआ है।

3. भारी संक्रमण होने पर मृदा की कैप्टान अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड से 2.0 ग्राम प्रति लीटर जल की दर से ड्रेन्चिंग करनी चाहिये।
4. मृदा का कवकनाशी रसायन (0.2% कैप्टान या 0.2% कॉपर सल्फेट या 0.2% फॉर्मेलिन) से उपचार करना चाहिए। फॉर्मेलिन के प्रयोग के बाद बीज बुवाई से पहले रसायन की गन्ध निकल जानी चाहिये।

शुष्क म्लानि और जड़ गलनरोग (विल्ट व रूट रोट)

यह रोग लगभग सभी कद्दुवर्गीय फसलों को प्रभावित करता है। यह रोग मृदा जनित है एवं फ्यूजेरियम प्रजाति एवं वर्टिसिलियम प्रजाति के द्वारा होता है।

रोग लक्षण

* यह जमीन में उपस्थित कवक से फैलता है। इस रोग से फसल किसी भी अवस्था में ग्रसित हो सकती है। रोग के प्रथम लक्षण शिराओं एवं सहायक शिराओं का सुस्पष्टन, पत्तियों की हरिमाहीनता एवं पर्ण वृन्तों का मुरझाकर झुकना अथवा क्लांतिनत होना है। शुरूआत में पौधें पीले दिखाई देते है।
* परपोषी की जड़ो और स्तंभ का निचला भाग शुष्क विलगन से नष्ट हो जाता है। रोगग्रस्त भाग पर काले बिन्दु समान स्क्लेरोशियम मिलते है। यदि तने के आधार का छिलका हटाकर देखें तो उत्तक भूरे रंग के दिखते है।
* यह भूरा रंग नीचे से ऊपर की ओर बढ़ता है। तरूण पौधें अकस्मात सूखकर नष्ट हो जाते है। जड़े काली पड़कर सड़ जाती है जिससे पौधा जल्दी सूखने लगता है। पौधों के अवशेष पर गुलाबी रंग का कवकजाल देखा जा सकता है।
* नई छोटी पत्तियां एक के बाद एक करके मर सकती है और पूरा पौधा म्लानि होकर कुछ ही दिनों में मर सकता है। शीघ्र ही पर्णवृन्त एवं पत्तियां म्लानि होकर गिर जाती है। खेत में निचली पत्तियां पहले पीली पड़ जाती है और तब ग्रसित पत्रक मुरझाकर मर जाता है।
* लक्षण बाद की पत्तियों पर भी जारी रहते हैं। बाद की अवस्था में संवहन तंत्र भूरा बादामी हो जाता है। पौधें बौने रह जाते है और अन्ततः मर जाते है।

रोग प्रबन्धन

* खेत की सफाई रखें। रोगी पौधों को उखाड़कर जला दें।
* सब्जियों की रोग रोधी प्रजातियां उगाए।
* गैर परपोषी पौधों जैसे धान्य फसलों के साथ लंबा फसल चक्र अपनाए। फसल चक्र का प्रयोग करके इस रोग को काफी हद तक रोका जा सकता है।
* गर्मियों में गहरी जुताई करें।
* बीज को 0.3 प्रतिशत थायराम या कैप्टान 2.5 ग्राम प्रति किग्रा की दर से उपचारित करके बुवाई करना चाहिये।
* कार्बेन्डाजिम से 1.5 ग्राम प्रति लीटर जल की दर से ड्रेन्चिंग करनी चाहिये।
* बरसात में फसल में जल निकास का उचित प्रबन्ध करना चाहिए
* गर्मी की फसल को समय से सिंचाई करते रहना चाहिये।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

पंकज कुमार, सूरज पासवान
एम. एल. मीणा उद्यानिकी विभाग, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर वि.वि. , लखनऊ (उ.प्र.)

प्याज की वैज्ञानिक खेती, लाभ एवं कीट, रोग प्रबंधन

(वानस्पतिक नाम- Allium cepa L.), (कुल-Liliaceae) या Alliceae

प्याज का मूल स्थान एशिया महाद्वीप है। इसमें विटामिन अधिक मात्रा में नहीं पाये जाते। प्रोटीन की इसमें कमी होती है। इसमें खनिज तत्व पर्याप्त मात्रा में होते हैं। प्याज शाक-भाजी के अतिरिक्त मसाले के रूप में भी प्रयोग होती है और औषधि के रूप में भी प्रयोग की जाती है। प्याज के लोकप्रिय होने का कारण यह है कि इसमें बहुत से पौष्टिक तत्व होने के अतिरिक्त कई रोगों का निवारण करने के गुण भी होते हैं। प्याज एक प्रकार का भूमिगत तना है जो कि पत्तियों की अनेक परतों से युक्त होता है। इन पत्तियों के रस में एक गन्धयुक्त योगिक होता है, जिसके कारण इसमें बदबू आती है। लेकिन इसमें कुछ ऐसे गुण होते हैं कि बदबू की उपेक्षा करके लोग प्याज का खूब प्रयोग करते हैं। प्याज हैजे और लू से बचाती है। यह रक्तशोधक और रक्तवर्धक औषधि भी है। प्याज का तीखापन एलाइल प्रोपाइल डाइसल्फाइड नामक पदार्थ के कारण होता है।

भूमि भूमि की तैयारी: प्याज हर प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है परन्तु बलुई दोमट या दोमट भूमि में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। दोमट भूमि में प्याज की पैदावार सर्वोत्तम होती है। भारी भूमि में प्याज की खेती नहीं करनी चाहिये क्योंकि ऐसी भूमि में प्याज के कन्द की वृद्धि अच्छी नहीं होती।

प्याज के लिये भूमि की गहरी जुताई की आवश्यकतां नहीं होती क्योंकि इसकी जड़ें बहुत गहरी नहीं जातीं। लगभग 4- 5 बार की जुताई पर्याप्त है। प्रत्येक जुताई के बाद खेत में पटेला देना चाहिये जिससे मिट्टी भुरभुरी और देले रहित हो जाये। खेत की तैयारी के समय ही उसमें पर्याप्त मात्रा में गोबर का सड़ा हुआ खाद भी डालना चाहिये।

उन्नत किस्में

खरीफ उन्नत किस्में-N–53, एग्रीफाउंड डार्क रेड, N–241, आर्का कल्याण

रबी उन्नत किस्में: पूसा रेड, एग्रीफाउंड लाइट रेड, उदयपुर 101, 103

खरीफ और रबी की उन्नत किस्मेंः आर्का प्रगति, आर्का निकेतन, आर्का लालिमा, आर्का कीर्तिमान

निर्यात की जाने वाली किस्में: बेलरी रेड, पटना रेड, पूसा रेड, पूसा माधवी, आर्का निकेतन, एग्रीफाउंड डार्क रेड, N – 53, N -241

बीज की मात्रा एवं बुवाई का समय: मैदानी क्षेत्र मैदानी क्षेत्रों में बीज को नर्सरी में अक्टूबर के अन्त से नवम्बर के मध्य तक बोना चाहिए, खरीफ फसल की बुवाई जून में करते हैं। एक हैक्टेयर क्षेत्रफल में रोपाई करने के लिये 8-10 किलोग्राम बीज की नर्सरी पर्याप्त रहती है। कन्द 10-12 क्विंटल है।

पौध तैयार करना: साधारणतः एक हेक्टेयर की रोपाई करने के लिये 500 वर्गमीटर क्षेत्र में तैयार की गई पौध पर्याप्त रहती है। पौधशाला (नर्सरी) किसी ऐसे स्थान पर बनानी चाहिये जहाँ पर सिंचाई और पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध हो। भूमि समतल और उपजाऊ (जीवांशयुक्त) होनी चाहिये। जिस भूमि में पौध तैयार करनी हो उसकी अच्छी प्रकार जुताई करके मिट्टी को अच्छी प्रकार भुरभुरा बना लेना चाहिये। जब इस भूमि में पौध तैयार करने के लिये 5 मीटर लम्बी तथा । मीटर चौड़ी क्यारियाँ भूमि से लगभग 15-20 सेमी0 ऊँची बना लेनी चाहियें। प्रत्येक क्यारी में 10-15 किलोग्राम गोबर की सड़ी खाद तथा 10-15 ग्राम दानेदार फ्यूराडान अच्छी प्रकार मिट्टी में मिला दें। इसके बाद क्यारियों को समतल बना लेना चाहिये। क्यारियाँ तैयार करने के बाद बीज को फफूंदीनाशक दवा जैसे केप्टान, थायरम आदि से 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर लें। इस प्रकार उपचारित बीज को तैयार क्यारियों में सूखी राख या मिट्टी में मिलाकर समान रूप से बखेर दें और मिट्टी तथा गोबर की सड़ी खाद का मिश्रण क्यारियों में बुरक कर बीज को अच्छी प्रकार से ढक दें। अच्छा तो यह रहेगा कि क्यारियों में 8-10 सेमी0 की दूरी पर लाइनें खींचकर बीज को लगभग डेढ़ सेन्टीमीटर की गहराई पर बोकर मिट्टी से ढक दें। बीज

बोने के बाद हजारे से हल्की सिंचाई कर दें। क्यारियों को सूखी घास की हल्की परत से ढंक दें। एक दिन के अन्तर से सिंचाई करते रहना चाहिये। जब बीज का जमाव हो जाए तो पास की पर्त को हटा देना चाहिये।

पौध की रोपाई: तैयार खेत में पौध की रोपाई से पूर्व सिंचाई के साधन के अनुसार क्यारियों और सिंचाई की नालियों बना लेनी चाहिए। क्यारियों में पौध की रोपाई के लिये रस्सी की सहायता से 15 सेंमी. की 0 की दूरी पर कतारें बना लें। इन कतारों में पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंमी. रखते हुए 2 से 2.5 सेंमी. गहराई पर पौध की रोपाई करें। एक स्थान पर एक से अधिक पौध नहीं लगानी चाहिये। पौध की रोपाई, जहाँ तक संभव हो, दोपहर बाद ही करनी चाहिये। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिये। मैदानी क्षेत्रों में रोपाई मध्य दिसम्बर से मध्य जनवरी तक अवश्य कर देनी चाहिये। फरवरी माह में भी प्याज की रोपाई करते हैं। रोपाई करने से पहले पौधे के ऊपरी भाग को काट देना चाहिये जिससे पौधों को स्थापित होने में मदद मिलती है।

खाद और उर्वरक: रोपाई से 3-4 सप्ताह पहले खेत की तैयारी के समय 200-250 क्विं. प्रति हे. की दर से गोबर की सड़ी हुई खाद भूमि में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिये। उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी की जांच के अनुसार करना चाहिये। यदि मिट्टी की जाँच सम्भव न हो सके तो बलुई-दोमट भूमि में 100 किलो नाइट्रोजन, 50 किलो फॉस्फोरस, 100 किलो पोटाश तथा 25 किग्रा सल्फर प्रति हे. की दर से देना चाहिये। नाइट्रोजन की आधी मात्रा, फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा को आखिरी जुताई के समय खेत में अच्छी प्रकार से मिला देना चाहिये।

सिंचाई एवं जल-निकास: साधारणतः प्याज को 10-12 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। जाड़े के दिनों में 12-15 दिन के अन्तर पर तथा गर्मियों में 7-8 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये। सिंचाई पूरे खेत में एक समान और हल्की करनी चाहिये।

खरपतवार नियन्त्रण: प्याज की फसल में मुख्य रूप से बथुआ, खरतुआ, मोरेला, प्याजी, मोचा, चिरायता, मकड़ा, दूब, जंगली चौलाई, सत्यानाशी (कटेली) आदि खरपतवार उगते हैं जिनको खेत से बाहर निकालना जरूरी होता है प्याज की फसल में पंक्ति से पंक्ति तथा पौधे से पौधे की दरी इतनी कम होती है कि हाथ से निराई-गुड़ाई करना कठिन हो जाता है। कि खरपतवारों को उगने से रोकने के लिये खरपतवारनाशी दवाओं का प्रयोग किया जाये। टोक ई-25 की 6 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई के बाद छिड़?काव करने से खरपतवार नहीं उग पाते हैं। बेसालिन को (1 किग्रा0 सक्रिय अवयव) भी प्याज रोपने से पहले खेत में छिटक कर मिट्टी में हैरो से अच्छी प्रकार मिला देने पर भी खरपतवार नहीं उगते हैं।

रोग नियन्त्रण

बैंगनी धब्बा: यह रोग फफूंदी के कारण होता है। यह रोग पतियों, बीज स्तम्भों और प्याज की गाँठों पर लगता है। रोगग्रस्त भाग पर छोटे, सफेद पैसे हुये धब्बे बनते हैं, जिनका मध्य भाग बैंगनी रंग का होता है। इन धब्बों की सीमायें लाल या बैंगनी रंग को होती हैं और उनके चारों ओर कुछ दूरी पर फैला एक पीला क्षेत्र पाया जाता है। रोग के प्रभाव से पत्तियाँ और तने सूखकर गिर जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में कन्द भी गलने लगते हैं।

रोकथाम : 1.बीज को थायरम नामक दवा से 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिये। 2. इण्डोफिल एम-45 की 2.5 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से 8-10 दिन अन्तर पर छिड़काव करें। लगभग 4-5 छिड़काव करें। 3. जिस खेत में यह रोग लगा हो उसमें आगामी 2-3 वर्ष तक प्याज या लहसुन न उगायें।

मृदु रोमिल आसिता: यह रोग भी फफूंदी से होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों पर धब्बों के रूप में होते हैं। ये धब्बे आकार में अंडाकार से लेकर आयताकार तक होते हैं। इनका रंग पीला होता है, जिसके कारण पत्तियों में हरे पदार्थ की कमी के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रोग के प्रभाव से पतियों का रोग-ग्रस्त भाग सूख जाता है। रोगी पौधे से प्राप्त कन्द आकार में छोटे होते हैं और साथ ही इनकी भण्डारण क्षमता भी कम हो जाती है।

रोकथाम : 1.इंडोफिल एम-45 की 2.5 किलोग्राम मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टेयर की दर से रोग के लक्षण दिखाई देते ही छिड़काव करें। इसके बाद 7-8 दिन के अन्तर से छिड़काव करें। 2.खेत में जल-निकास का उचित प्रबन्ध करें।

जीवाणु मृदु विगलन : यह रोग एक जीवाणु द्वारा होता है। खोदने पर ऐसे पौधों को सूखी पत्तियाँ ही उखड़ जाती है और कन्द भूमि में ही रह जाते हैं। खोदने पर ऐसे कन्द चिपचिपे, सड़े-गले निकलते हैं। सामान प्रकोप होने पर इस रोग का लक्षण भंडारघर में रखे कन्दों पर ही प्रकट होता है। प्रकोप से कन्दों के ऊपरी एक-दो छिलके हा जाते हैं और सड़े भाग से बुरी बदबू आती है। बाद में सड़न और अधिक बढ़ जाती है।

रोकथाम : 1.कन्दों को अच्छी प्रकार सुखाकर, उनके ऊपरी छिलकों की कटाई करके रखना चाहिये। 2.कन्दों को हवादार तथा कम पानी वाले भण्डार गृहों में रखना चाहिये।

ग्रीवा विगलन: यह रोग बोट्राइटिस (Botrytis) नामक फफूंदी की कई जातियों द्वारा होता है। इस रोग के कारण प्याज के शल्क- पत्र सड़कर जलयुक्त धब्बे पैदा करते हैं। कंदो के ऊतक (tissues) मुलायम होकर सिकुड़ जाते हैं जो देखने में परिपक्व से लगते हैं। कंद के ऊतक के सूख जाने से कंद सूखे से लगते हैं।

रोकथाम : 1.प्याज के कन्दों को उखाड़ते समय चोट से बचाना चाहिये। भण्डारण करते समय कन्दों के शीर्षों को पूर्णरूप से सुखा लेना चाहिये। 2.वैज्ञानिकों का मत है कि प्याज की सफेद किस्मों में यह रोग जल्दी लगता है इसलिये जहाँ तक सम्भव हो रंगीन किस्मों की ही खेती की जाये।

प्याज का कंड (Smut) रोग: यह रोग भी फफूंदी के द्वारा होता है। इस रोग के प्रथम लक्षण बीज अंकुरण के शीघ्र बाद बीज-पत्र पर दिखाई पड़ते हैं। रोगी पत्ती तथा बीज-पत्रों पर काले रंग के स्पॉट बनते हैं। इन स्पोटों के फट जाने पर उनमें से असंख्य बीजाणु काले चूर्ण के रूप में निकलते हैं। यह रोग एक पत्ती से दूसरी पत्ती पर फैलता हुआ पौधे के अन्दर ही अन्दर कन्द की तरफ बढ़ जाता है। रोगी पौधे 3-4 सप्ताह के बाद मर जाते हैं।

रोकथाम : (1)बीज को बोने से पूर्व थायरम अथवा कैप्टान 2.5 ग्राम दवा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिये। 2) मृदा को मेथिल ब्रोमाइड (1 किग्रा. प्रति 25 वर्ग मीटर) के घोल से पौध रोपण से पूर्व उपचारित कर लेना चाहिये। उपरोक्त प्रमुख रोगों के अतिरिक्त प्याज किट्ट (rust), स्मट, मूल विगलन, आद्रपतन, पौध अंगमारी, श्वेत विगलन आदि रोग भी लगते है।

कीट नियन्त्रण: प्याज की फसल को थ्रिप्स और मैगट काफी नुकसान पहुंचाते हैं। इनके अलावा तम्बाकू की सुंडी व रिजका की सूंड़ी भी हानि पहुंचाती है। इन कीटों की पहचान, नुकसान पहुंचाने के तरीकों ओर इनकी रोकथाम की जानकारी निम्नलिखित प्रकार दी जा रही है-

थ्रिप्स (चुरदा) या भुनगा: प्रौढ़ व शिशु दोनों ही प्याज की फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। इनके खरोंचने व चूसने वाले मुखांग होते हैं। ये पत्तियों की बाहरी परत पर खुरचने पर निकले हुये रस को चूसते हैं। कीटग्रसित पत्तियों पर चमकीले सफेद धब्बे दिखाई देते हैं। जब इनका प्रकोप अधिक होता है तो पत्तियों की नोकें कत्थई रंग की हो जाती है तथा सूखी हुई सी प्रतीत होती हैं। बाद में पूरा पौधा पीला या भूरा हो जाता है और सूखकर जमीन पर गिर जाता है। गोफ व मांसल पतियों के बीच में ये कीड़े सबसे अधिक संख्या में पाये जाते हैं। इन कीड़ों द्वारा नुकसान के कारण प्याज की गाठे विकृत हो जाती हैं और छोटी रह जाती है।

अंशू यादव (शोध छात्रा) जनता कॉलेज बकेवर, इटावा, (उ.प्र.)

सचिन जायसवाल (शोध छात्र), जनता कॉलेज बकेवर, इटावा, (उ.प्र.)

हल्दी के उपयोग और औषधीय गुण

परिचय: हल्दी (Curcuma longa) भारतीय परंपरा, संस्कृति और चिकित्सा का एक अनमोल हिस्सा रही है। यह एक ऐसी औषधीय वनस्पति है जिसका उपयोग हजारों वर्षों से भारतीय घरों में किया जा रहा है। हल्दी न केवल एक मसाले के रूप में भोजन का स्वाद और रंग बढ़ाती है, बल्कि इसका औषधीय और धार्मिक महत्व भी अत्यंत गहरा है। आयुर्वेद में इसे एक %संजीवनी बूटी% की तरह देखा गया है, जो अनेक बीमारियों से रक्षा करती है।

इतिहास और सांस्कृतिक महत्व

भारतीय संस्कृति में हल्दी को शुभता का प्रतीक माना गया है। विवाह जैसे शुभ कार्यों में %हल्दी की रस्म% निभाई जाती है, जिसका उद्देश्य न केवल सांस्कृतिक है, बल्कि यह वर-वधू की त्वचा को साफ करने और उन्हें ऊर्जावान बनाने के लिए भी की जाती है। प्राचीन काल में हल्दी का उपयोग धार्मिक कार्यों में तिलक लगाने, पूजा-पाठ में और रंग-निर्माण के लिए किया जाता था।

खाद्य उपयोग

भारतीय रसोई में हल्दी का प्रमुख स्थान है। यह लगभग हर दाल, सब्ज़ी और करी में डाली जाती है। हल्दी भोजन को न केवल स्वादिष्ट और रंगीन बनाती है, बल्कि यह जीवाणुरोधी गुणों से युक्त होती है, जिससे भोजन को लंबे समय तक खराब होने से बचाया जा सकता है। यह पाचन क्रिया को सुचारु रखने में भी मदद करती है।

सौंदर्य और त्वचा संबंधी लाभ

हल्दी का उपयोग सौंदर्य उपचारों में भी वर्षों से किया जा रहा है। हल्दी और बेसन का फेसपैक त्वचा की रंगत को निखारने, मुंहासों को दूर करने और झाइयों को कम करने में कारगर होता है। हल्दी में पाए जाने वाले एंटीसेप्टिक और एंटी-इंफ्लेमेटरी गुण त्वचा को संक्रमण से बचाते हैं और सूजन को कम करते हैं।

औषधीय गुण

1.एंटीसेप्टिक और एंटीबायोटिक: हल्दी में प्राकृतिक एंटीसेप्टिक गुण होते हैं, जो घाव भरने में मदद करते हैं। चोट लगने पर हल्दी का पेस्ट लगाने से घाव जल्दी भरता है और संक्रमण नहीं होता।

2.प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाना: हल्दी का नियमित सेवन रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। हल्दी वाले दूध का सेवन सर्दी-खांसी और मौसमी संक्रमण से सुरक्षा देता है।

3.सूजन और दर्द से राहत: गठिया, जोड़ों के दर्द और मांसपेशियों की सूजन में हल्दी अत्यंत लाभकारी है। करक्यूमिन नामक तत्व इन रोगों को प्राकृतिक रूप से नियंत्रित करता है।

4.पाचन क्रिया में सहायक: हल्दी पाचन तंत्र को सक्रिय करती है, जिससे गैस, अपच, पेट दर्द आदि समस्याओं से राहत मिलती है।

5.मधुमेह और कैंसर में लाभकारी: हल्दी रक्त शर्करा के स्तर को संतुलित करने में मदद करती है। इसके अतिरिक्त करक्यूमिन कैंसर कोशिकाओं के विकास को रोक सकता है।

आधुनिक विज्ञान का दृष्टिकोण: आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने भी हल्दी के लाभों को स्वीकार किया है। वैज्ञानिक शोधों के अनुसार हल्दी में पाया जाने वाला करक्यूमिन अत्यंत शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट है जो शरीर में मौजूद हानिकारक मुक्त कणों को निष्क्रिय करता है। इससे न केवल रोगों से रक्षा होती है, बल्कि उम्र बढ़ने की प्रक्रिया भी धीमी होती है। इसके अलावा करक्यूमिन मस्तिष्क की कार्यक्षमता को बेहतर बनाता है और अवसाद जैसी मानसिक समस्याओं से भी राहत दिला सकता है।

प्राकृतिक घरेलू उपचार: 1.हल्दी वाला दूध (गोल्डन मिल्क) यह शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है और सर्दी, खांसी, थकावट में लाभदायक होता है।

2.हल्दी का लेप: त्वचा पर किसी प्रकार की चोट, जलन या संक्रमण होने पर हल्दी और पानी का पेस्ट लगाना लाभकारी होता है।

3.हल्दी की चाय: यह शरीर को डिटॉक्स करती है और आंतरिक सफाई में सहायक होती है।

4.कच्ची हल्दी का सेवन: विशेषकर सर्दियों में कच्ची हल्दी का सेवन शरीर को गर्म रखने और रोगों से लड़ने की क्षमता बढ़ाता है।

संभावित दुष्प्रभाव और सावधानियां

हल्दी सामान्यतः सुरक्षित मानी जाती है, परंतु कुछ स्थितियों में इसका अधिक सेवन समस्याजनक हो सकता है- * अत्यधिक मात्रा में लेने पर यह पेट में जलन, गैस और अपच का कारण बन सकती है। * ऑपरेशन से पहले हल्दी का सेवन बंद कर देना चाहिए क्योंकि यह रक्त को पतला करती है। * गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली महिलाओं को हल्दी का सेवन चिकित्सकीय सलाह से करना चाहिए।

हल्दी का उपयोग विभिन्न रोगों में

फंगल संक्रमण: हल्दी पाउडर और नारियल तेल मिलाकर लगाने से फंगल इन्फेक्शन में राहत मिलती है।

दंत रोग: हल्दी और नमक को मिलाकर मसूड़ों पर लगाने से सूजन और दर्द में राहत मिलती है।

आंखों के रोग: आयुर्वेद में हल्दी को नेत्र रोगों में भी उपयोग किया जाता है (विशेष पद्धति से)।

वजन घटाने: हल्दी मेटाबॉलिज्म को बढ़ाती है, जिससे वजन घटाने में मदद मिलती है।

निष्कर्ष

हल्दी केवल एक मसाला नहीं, बल्कि एक सम्पूर्ण प्राकृतिक औषधि है। इसका उपयोग हमें न केवल स्वास्थ्य लाभ देता है, बल्कि यह हमारी संस्कृति, परंपरा और जीवनशैली का अभिन्न हिस्सा है। हल्दी में मौजूद करक्यूमिन जैसे यौगिकों ने इसे आधुनिक विज्ञान में भी मान्यता दिलाई है। यदि इसका उपयोग संतुलित मात्रा में और सही विधियों के साथ किया जाए, तो यह शरीर को रोगमुक्त और स्वस्थ बनाए रखने में अत्यंत सहायक सिद्ध होती है।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

दीपचन्द निषाद (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग
कार्तिकेय श्रीवास्तव, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ.प्र.)
अंकुर वर्मा, शिवम् श्रीवास्तव डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या

'एकीकृत कृषि प्रणाली: समन्वित खेती के माध्यम से किसान की आय वृद्धि'

1. **प्रस्तावना:** भारत की कृषि प्रणाली विविधतापूर्ण है, जिसमें आज भी अधिकांश किसान छोटे, सीमांत और संसाधन-सीमित हैं। केवल फसल उत्पादन पर आधारित कृषि प्रणाली अब किसानों की आय बढ़ाने में सक्षम नहीं है। ऐसे में "एकीकृत कृषि प्रणाली (Integrated Farming System - IFS)" एक व्यवहारिक समाधान बनकर उभरी है। इसमें फसल उत्पादन को पशुपालन, मत्स्य पालन, मुर्गी पालन, बागवानी, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन आदि से जोड़ा जाता है। इससे किसानों को विविध आय स्रोत मिलते हैं, संसाधनों का पुनर्चक्रण होता है, और सतत कृषि को बढ़ावा मिलता है। जहां किसान अपनी भूमि का अधिकतम उपयोग करते हुए विविध स्रोतों से आय प्राप्त करते हैं। एकीकृत कृषि प्रणाली (IFS) वह प्रणाली है जिसमें एक ही भूमि पर फसल, पशु, मत्स्य, पक्षी, और अन्य कृषि गतिविधियों को आपस में जोड़कर चलाया जाता है। इसका उद्देश्य है: आय में विविधता लाना और जोखिम कम करना, संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना, स्थानीय पोषण सुरक्षा उपलब्ध कराना, पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त करना।

1. **एकीकृत कृषि प्रणाली:** अवधारणा, महत्व और विकास
2. **अनाज+डेयरी मॉडल: संरचना, प्रबंधन और आय विश्लेषण**
3. **अनाज + मछली पालन मॉडल:** तालाब प्रबंधन, समेकित उत्पादन एवं लाभ विश्लेषण

एकीकृत कृषि प्रणाली- अवधारणा, महत्व और विकास:भारतीय कृषि प्रणाली सदियों से विविध और बहुआयामी रही है। लेकिन 21वीं सदी में बढ़ती जनसंख्या, घटती जोत का आकार, पर्यावरणीय असंतुलन, और किसानों की आय में ठहराव जैसी समस्याओं ने हमें वैकल्पिक व स्थायी कृषि रणनीतियों की ओर सोचने पर विवश किया है। ऐसे में "एकीकृत कृषि प्रणाली" (Integrated Farming System - IFS) एक व्यवहारिक और लाभकारी विकल्प के रूप में उभरकर सामने आई है। IFS वह कृषि मॉडल है जिसमें एक ही इकाई में फसल उत्पादन, पशुपालन, मछली पालन, बागवानी, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, जैविक खाद निर्माण आदि घटकों को समाविष्ट किया जाता है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि हो, संसाधनों का पूर्ण उपयोग हो और पर्यावरणीय स्थिरता बनी रहे।

एकीकृत कृषि प्रणाली की परिभाषा: एकीकृत कृषि प्रणाली वह प्रणाली है जिसमें खेत, पशुशाला, बाग-बगीचे, तालाब, जैविक खाद इकाई और अन्य कृषि से संबंधित घटकों को एक साथ समन्वित कर इस प्रकार से प्रबंधित किया जाता है कि एक घटक दूसरे की पूर्ति कर सके और सम्पूर्ण प्रणाली से अधिकतम लाभ प्राप्त हो।

IFS की आवश्यकता क्यों?

प्रमुख कारण:

किसानों की घटती आमदनी: केवल पारंपरिक फसलें पर्याप्त आमदनी नहीं दे पा रही हैं।

मौसमीय जोखिम: सूखा, अतिवृष्टि, ओलावृष्टि जैसी घटनाएं किसानों की फसल को बार-बार नुकसान पहुँचाती हैं।

बेरोजगारी: खेती में वर्ष भर कार्य न होने से ग्रामीण युवाओं में बेरोजगारी बढ़ती जा रही है।

प्राकृतिक संसाधनों का ह्रास: अत्यधिक रासायनिक उपयोग और एकल फसली प्रणाली से मृदा और जल की गुणवत्ता गिर रही है। IFS इन सभी समस्याओं का समग्र समाधान प्रदान करता है।

IFS का महत्व

क्षेत्र	लाभ
आर्थिक	आय के विविध स्रोत, नकद प्रवाह में वृद्धि
पर्यावरणीय	जैविक खाद, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण
सामाजिक	ग्रामीण रोजगार में वृद्धि, महिला भागीदारी
पोषण संबंधी	दुग्ध, मछली, अंडा, फल, सब्जी की उपलब्धता
शैक्षिक	किसानों में तकनीकी जागरूकता, नवाचार की ओर प्रवृत्ति

IFS का ऐतिहासिक विकास: भारत में मिश्रित कृषि की परंपरा बहुत पुरानी रही है। लेकिन इसे व्यवस्थित तरीके से लागू करने की दिशा में संस्थागत प्रयास 1980 के बाद आरंभ हुए।

प्रमुख पड़ाव

1980: ICAR द्वारा IFS पर अनुसंधान की शुरुआत।

1990: राज्य कृषि विश्वविद्यालयों में मॉडल इकाइयों की स्थापना।

2005: राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के अंतर्गत IFS को प्रोत्साहन।

2015: "किसान की आय दोगुनी" लक्ष्य के तहत इसे नीति का हिस्सा बनाया गया।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य: IFS केवल भारत ही नहीं, बल्कि चीन, फिलीपींस, वियतनाम, केन्या और इथियोपिया जैसे देशों में भी कृषि सुधार और आजीविका के सशक्त मॉडल के रूप में स्थापित है। इन देशों में संसाधन सीमित होते हुए भी बहु-घटक कृषि मॉडल से बड़ी संख्या में परिवार लाभान्वित हुए हैं।

अनाज + डेयरी मॉडल : संरचना, प्रबंधन और आय विश्लेषण: भारत के अधिकांश किसानों के पास 1 से 3 हे. तक की भूमि होती है। ऐसे सीमांत किसानों के लिए अनाज के साथ डेयरी को एकीकृत करना आय और पोषण सुरक्षा का एक व्यवहारिक समाधान है। इस मॉडल में खेत पर उगाए गए चारे और फसल अवशेषों से दुधारू पशुओं का पालन किया जाता है, और प्राप्त गोबर व अन्य उत्पादों से खेत की उर्वरता को बढ़ाया जाता है।

संरचना व संसाधन

घटक	आवश्यक संसाधन
भूमि	1:2 हेक्टेयर
अनाज	धान, गेहूं, मक्का, ज्वार
डेयरी पशु	2:4 दुधारू गाय/भैंस
चारा	बरसीम, नेपियर, ज्वार चारा
अन्य	जल स्रोत, पशुशाला, चारा कटाई यंत्र

डेयरी प्रबंधन तकनीक

1.**पशु आवास:** स्वच्छ, हवादार, फर्श ढलानदार और जल निकासी युक्त।

2.**चारा प्रबंधन:** हरा चारा, सूखा भूसा, दाना मिश्रण और खनिज मिश्रण।

3.**स्वास्थ्य देखभाल:** टीकाकरण, कृमिनाशक, नियमित जांच।

4.**दूध प्रबंधन:** सफाई, संग्रहण और बाजार तक विक्रय की व्यवस्था।

आय और लाभ विश्लेषण (प्रति वर्ष अनुमानित)

मद	मात्रा	वार्षिक आय (Rs.)
गेहूं/धान (1.5 हे.)	40 क्विं.	80,000
चारा बिक्री/उपयोग	-	15,000
दूध उत्पादन (4 पशु)	8 ली./दैनिक/पशु	3,50,000
गोबर/गौमूत्र (खाद हेतु)	-	10,000
कुल आय		4,55,000

लागत (बीज, खाद, पशु आहार, श्रम आदि): Rs. 2,20,000

शुद्ध लाभ: Rs. 2,35,000 प्रति वर्ष

मुख्य बातें: * गोबर से वर्मी कम्पोस्ट तैयार करते हैं। * दूध को पास के दुग्ध संघ को बेचते हैं। * औसत वार्षिक लाभ Rs. 2.10 लाख तक पहुँच गया है। * अनाज + मछली पालन मॉडल : तालाब प्रबंधन, समेकित उत्पादन एवं लाभ विश्लेषण

मछली पालन एक लाभकारी कृषि गतिविधि है, जिसे अनाज उत्पादन के साथ जोड़ा जा सकता है। मछली पालन न केवल किसानों के लिए अतिरिक्त आय का स्रोत बन सकता है, बल्कि यह भूमि के जलाशयों का बेहतर उपयोग करने का एक तरीका भी है। विशेष रूप से, पूर्वी उत्तर प्रदेश में जहां जल स्रोत प्रचुर मात्रा में हैं, मछली पालन अनाज आधारित कृषि प्रणालियों में एक उत्कृष्ट संयोजन बन सकता है। इस अध्याय में, हम अनाज + मछली पालन मॉडल के तहत तालाब प्रबंधन, समेकित उत्पादन, और आर्थिक लाभ पर चर्चा करेंगे।

तालाब प्रबंधन

तालाब निर्माण और रख-रखाव: मछली पालन के लिए तालाब का निर्माण बेहद महत्वपूर्ण है। एक अच्छा तालाब वह है, जो पानी के स्तर को नियंत्रित करता है और मछलियों के विकास हेतु उपयुक्त वातावरण प्रदान करता है। **तालाब के निर्माण के दौरान निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखना चाहिए:**

1.**भूमि चयन:** तालाब के लिए चिकनी, बिना गड्ढे वाली भूमि चुनें, जो वर्ष भर जल भराव बनाए रख सके।

2.**तालाब का आकार और गहराई:** तालाब का आकार सामान्यतः 0.5:1 हे. होता है, और गहराई 1.5:2 मीटर तक होनी चाहिए।

3.**जल निकासी:** तालाब में पानी की उचित निकासी व्यवस्था होनी चाहिए ताकि अधिक पानी निकल सके और जलस्तर नियंत्रित रहे।

4.**पानी की गुणवत्ता:** तालाब के पानी में ऑक्सीजन का स्तर और pH संतुलित रखना अत्यंत आवश्यक है।

जल शुद्धिकरण: तालाब में जल की गुणवत्ता बनाए रखना महत्वपूर्ण है, क्योंकि खराब जल गुणवत्ता मछलियों के विकास को प्रभावित कर सकती है। इसके लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं:

1.**हवा का संचार:** पानी में ऑक्सीजन के स्तर को बनाए रखने के लिए पंप और एयरेटर का उपयोग किया जा सकता है।

2.**फिल्टर और जल परिवर्तन:** तालाब के पानी की नियमित सफाई और जल परिवर्तन से मछलियों की वृद्धि में मदद मिलती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

एकीकृत कृषि प्रणाली

शिवानी शुक्ला (कृषि छात्रा) यूनाइटेड विश्वविद्यालय, झलवा, प्रयागराज (उ.प्र.)

परिचय: एकीकृत कृषि प्रणाली एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसमें विभिन्न कृषि घटकों जैसे फसल उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन, कुक्कुट पालन, बागवानी, वानिकी आदि को एकीकृत रूप से अपनाया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य सीमित संसाधनों का अधिकतम और कुशल उपयोग करना है ताकि कृषि को अधिक टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण अनुकूल बनाया जा सके। इस प्रणाली में एक घटक से उत्पन्न अपशिष्ट दूसरे घटक का संसाधन बनता है, जिससे लागत घटती है और उत्पादन बढ़ता है। यह प्रणाली किसानों को विविध आय स्रोत प्रदान करती है, जिससे मौसम या बाजार से जुड़ी जोखिमों को कम किया जा सकता है। एकीकृत कृषि प्रणाली विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए फायदेमंद होती है क्योंकि यह कम भूमि में अधिक आय की संभावना देती है। यह रोजगार सृजन में भी सहायक होती है और ग्रामीण विकास को बढ़ावा देती है। इसके अंतर्गत जैविक खाद, वर्मी कंपोस्ट, और रीसाइक्लिंग जैसे तकनीकों का उपयोग किया जाता है। यह प्रणाली प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और पोषण में भी सहायक होती है।

कृषि प्रणाली दृष्टिकोण : कृषि प्रणाली उपागम में सभी घटक और गतिविधियाँ जुड़ी हुई हैं, वे एक दूसरे को प्रभावित करती हैं। कृषि में, प्रबंधन प्रथाओं को आमतौर पर व्यक्तिगत कॉर्प के लिए तैयार किया गया था। हालांकि, किसान एक विशेष मौसम, घरेलू जरूरतों और लाभप्रदता के लिए अपनी अनुकूलन क्षमता के आधार पर विभिन्न मौसमों में विभिन्न फसलों की खेती कर रहे हैं।

- यह कृषि उत्पादकता बढ़ाने में प्रमुख बाधाओं की पहचान करने में सक्षम बनाता है।
- भौतिक और सामाजिक आर्थिक वातावरण को समझने के लिए जिसके भीतर कृषि उत्पादन होता है।
- किसान को उसके कौशल, बाधाओं, वरीयताओं के संदर्भ में समझने के लिए और आकांक्षाएँ।
- मौजूदा महत्वपूर्ण कृषि प्रणालियों के प्रदर्शन को समझने और उसका मूल्यांकन करने के लिए।

कृषि में प्रमुख चुनौतियाँ और मुद्दे

- प्राकृतिक आपदाओं का होना (लगातार बाढ़, सूखा और ओलावृष्टि आदि)। •कम उत्पादकता • उच्च लागत और संकर बीजों/HYV की कम उपलब्धता। • संकर और उच्च उपज वाली किस्मों का कम प्रसार। • धान की परती भूमि का कम उपयोग। • फसलों की बुवाई में देरी। • रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का असंतुलन या अत्यधिक उपयोग। • उच्च उत्पादन लागत। • कृषि मशीनीकरण का निम्न स्तर। • ऑन और ऑफ सीजन में बाजार मूल्य में उतार-चढ़ाव।
- विपणन और परिवहन अवसंरचना, प्राथमिक प्रसंस्करण सुविधा का अभाव। •भंडारण और प्रसंस्करण सुविधाओं की कम और कम क्षमता।

कृषि प्रणाली और इसके घटक: कृषि प्रणाली मिट्टी, पौधों, जानवरों के कार्यान्वयन, बिजली, श्रम, पूंजी और अन्य आदानों का एक जटिल अंतर-संबंधित मैट्रिक्स है जो कि किसान परिवारों द्वारा नियंत्रित किया जाता है और राजनीतिक, आर्थिक, संस्थागत और सामाजिक ताकतों की अलग-अलग डिग्री से प्रभावित होता है जो कई स्तरों पर काम करते हैं। . यह संसाधन आधार को संरक्षित करते हुए और पर्यावरणीय गुणवत्ता के उच्च स्तर को बनाए रखते हुए कृषि परिवारों की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आर्थिक और निरंतर उत्पादन प्राप्त करने के लिए एक संसाधन प्रबंधन रणनीति है। यह किसान के लिए समृद्धि लाने वाले संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए फसल प्रणाली, पशुपालन, मत्स्य पालन, वानिकी, रेशम उत्पादन, मुर्गी पालन आदि जैसे कृषि उद्यमों के एकीकरण का प्रतिनिधित्व करता है। कृषि प्रणाली का मुख्य उद्देश्य स्थिरता है जहां, उत्पादन प्रक्रिया को पर्यावरण की गुणवत्ता का उल्लंघन किए बिना इनपुट के कुशल उपयोग के माध्यम से अनुकूलित किया जाता है जिसके साथ यह एक ओर परस्पर क्रिया करता है और दूसरी ओर राष्ट्रीय लक्ष्यों को पूरा करने का प्रयास करता है, कृषि प्रणाली की अवधारणा विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए फसल के साथ एक या एक से अधिक उद्यमों का संयोजन है।

किसानों की आय दोगुनी करने की रणनीति

- फसलों की उत्पादकता में वृद्धि करके • मौसम से पहले अच्छी गुणवत्ता वाले बीजों की समय पर आपूर्ति • अच्छी कृषि पद्धतियों को अपनाना • अच्छी गुणवत्ता वाले इनपुट की समय पर उपलब्धता
- कम अवधि और अधिक उपज देने वाली किस्में प्रदान करना • कृषि मशीनीकरण को बढ़ावा देना • एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का अनुकूलन • एकीकृत कीट प्रबंधन का उपयोग• सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि • शस्य सघनता में वृद्धि करके

उच्च मूल्य वाली फसलों के साथ कृषि प्रणाली का विविधीकरण: फसल विविधीकरण में कम उत्पादकता, स्थिरता, मिट्टी के स्वास्थ्य, कम आय आदि की समस्या को कम करने में बहुत सारे वादे शामिल हैं, बुनियादी जरूरतों को पूरा करने और कृषि आय को विनियमित करने के साथ-साथ मौसम में उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करना, मूल्य में उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करना, संतुलित खाद्य आपूर्ति सुनिश्चित करना, प्राकृतिक संरक्षण करना। संसाधन, रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक भार को कम करना, पर्यावरण सुरक्षा और रोजगार के अवसर पैदा करना

उत्पादन लागत को कम करके

- फार्म इनपुट, मशीनीकरण लागत और डीजल पर सब्सिडी का प्रावधान
- HYV/हाइब्रिड बीजों पर सब्सिडी का प्रावधान
- उर्वरक की संतुलित मात्रा का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना
- हरी खाद का उपयोग उदा. ढैंचा, मूंग, लोबिया, भांग आदि।
- **जैव उर्वरकों का उपयोग**

उदाहरण: राइजोबियम, पीएसबी, एजोटोबैक्टर, अजोला, नील हरित शैवाल, माइकोराइजा आदि।

- परिवहन पर सब्सिडी। • नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग ले. सौर ऊर्जा। गोबर / बायो गैस आदि • डीएस आर/जीरो टिलेज तकनीक का प्रचार • कस्टम हायरिंग सिस्टम का प्रचार।
- **एकीकृत कृषि प्रणाली को बढ़ावा देना:** नियमित आय प्रदान करने के लिए फसलों/बागवानी, डेयरी, मत्स्य पालन और कुक्कुट के सम्मिश्रण को सक्रिय करें।
- **सूक्ष्म सिंचाई से फलों, सब्जियों और फूलों की संरक्षित खेती:** सूक्ष्म सिंचाई के साथ उच्च मूल्य वाले फलों, सब्जियों और फूलों की संरक्षित खेती से किसान की आय को दोगुना या अधिक करने की काफी संभावना है। ये प्रौद्योगिकियां छोटे भूमिधारक उत्पादकों के लिए बहुत उपयोगी हैं जो आर्थिक प्रासंगिकता को बढ़ावा देने और सामाजिक स्थिरता को बनाए रखने के लिए उनके उत्पादकता स्तर को अधिकतम करने में मदद करती हैं।

निष्कर्ष: निम्न और अत्यधिक उतार-चढ़ाव वाली कृषि उत्पादकता और कृषि आय कृषि संकट के प्रमुख स्रोत हैं। हालाँकि, बाढ़ और सूखे जैसी लगातार प्राकृतिक आपदाओं के कारण भारत में कृषि विकास बेहद अस्थिर रहा है। सिंचाई, उर्वरक, गुणवत्तापूर्ण बीज और कृषि मशीनीकरण जैसे निवेशों में वृद्धि के साथ प्रमुख फसलों की उत्पादकता में वृद्धि हुई है। मौजूदा और पहले हासिल की गई विकास दर में तेजी से तेजी लाने की जरूरत है। निष्कर्ष निकाला कि कृषि में वर्तमान समय की चुनौतियों का सामना करने के लिए संबद्ध नवीन दृष्टिकोणों के साथ मिलकर कृषि प्रणाली के दृष्टिकोण को अपनाना एक महत्वपूर्ण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उच्च मूल्य वाली फसलों, कृषि आजीविका के साथ विविधीकरण का समर्थन करने वाली सेवाओं के विविध सेट प्रदान करने के लिए इसे बदलने की आवश्यकता है और प्रासंगिक तकनीकों की पेशकश की जाती है जो उचित क्रेडिट समर्थन स्मार्ट खेती के साथ-साथ एमएसपी सुधार के साथ नीतियों के कार्यान्वयन के साथ एकीकृत हैं। दूसरा किसानों की आय को दोगुना करने के लिए एक पर्यावरण-अनुकूल दृष्टिकोण भी है जिसमें एक उद्यम की अपशिष्ट सामग्री दूसरे उद्यम का इनपुट बन जाती है, इस प्रकार यह कृषि संसाधनों का कुशल और टिकाऊ उपयोग करता है।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885

अमित राय
मैं. माँ उर्वरक केन्द्र
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पता: भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

कीट–विष और उनके उपचार

अंकित सिंह, संदीप सिंह
अंकित कुमार मिश्रा, राजू कुमार वर्मा
(शोध छात्र) कीट विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

कीट-विषों के घातक प्रभाव से बचने के लिये आवश्यक है कि उन पर लिखे निर्देशों का पालन सही प्रकार से किया जाये तथा उसमें किसी प्रकार की लापरवाही न बरती जाए क्योंकि जरा-सी भी असावधानी होने पर जान से हाथ धोना पड़ सकता है। इन दवाओं को सुरक्षित ढंग से प्रयोग में लाने के लिये कुछ निर्देश नीचे दिये जा रहे हैं जिनका ढंग से पालन करना चाहिये।

कीटनाशियां काम में लेने से पहले सावधानियां: 1.कीट को पहचाने या कीट विशेषज्ञ से पहचान करायें व पता लगाएँ कि वास्तव में फसल को कितना नुकसान हो गया है। 2.कीटनाशी का तब ही प्रयोग करें जब आवश्यक हो। 3.कीट को मारने का सही उपाय कीट विशेषज्ञ से पता करें। 4.सिफारिश की गई कीटनाशी ही काम में लें। कीटनाशियों की विषाक्ता हेतु तिकोनें आकार में हरा या नीला या पीला या लाल रंग का निशान होता है। कई कीटनाशियाँ उपलब्ध हों तो लाल निशान वाली कीटनाशी न लें। क्योंकि ये स्तनधारियों को सबसे ज्यादा नुकसान करती हैं। लाल रंग वाली से कम नुकसान, पीले वाली से तथा उससे भी कम नुकसान, नीले रंग के तिकोने निशान वाली कीटनाशी करती है। सबसे कम नुकसान उन कीटनाशियों से होता है, जिनके डिब्बों पर हरा रंग का तिकोना निशान होता है। 5.कीटनाशी खरीदते समय उसके बनने व काम में लेने की अन्तिम तारीख जरूर पढ़ें ताकि पुरानी कीटनाशी से बचा जा सके। डिब्बों के ऊपर लेबिल और साथ में समाचार पत्रक आता है। उसे भी पढ़ लें व दी गई चेतावनी का पालन करें। 6.भंडार में कीटनाशियाँ सूखी व साफ सुथरी जगह में रखिये। 7.ऐसी कीटनाशी काम में न लें, जिससे पत्तों में रासायनिक अम्ल के कारण वे झुलस जाएँ।

कीटनाशियां काम में लेते समय सावधानियाँ

1.ठीक प्रकार से शरीर को बचाने वाले कपड़े पहनें व यदि उनमें कीटनाशी लग जायें तो दूसरे साफ कपड़े पहन लें तथा हाथों में रबड़ के दस्तानें पहनें। 2.कीटनाशी छिड़कने वाला प्रशिक्षण प्राप्त किया हुआ स्वस्थ व्यक्ति हो व उसके लिये ठीक प्रकार के कपड़े व अन्य सामान हों। उसके शरीर पर किसी प्रकार का घाव न हो। 3.कीटनाशी छिड़कने का काम करने वाले समय-समय पर खून में 'कोलीनएस्ट्रेज' की जाँच करवाते रहें। 4.बहुत जहरीली कीटनाशी को काम में लेते समय अकेले न रहें। 5.कीटनाशी को पानी में डालते समय किसी बच्चे या अन्य आदमी को पास में न रहने दें व मिलाने के लिये लकड़ी या लोहे का लोटा काम में लें। 6.लेबिल व समाचार पत्रों को दुबारा से पढ़े व उनमें दिये गये अनुदेश का पालन अवश्य करें। 7.कीटनाशी छिड़कने वाले पम्प की जाँच कर लें कि कहीं से खराब न हो। 8.त्वचा साफ करके मुह व घावों का कीटनाशी से बचाव करें। 9.द्रव रूप वाली कीटनाशियों को सावधानी से पम्प में डालें। चूर्ण रूप वाली कीटनाशियों के कण भदि मुंह के अन्दर न जायें व गलती से ऐसा हो जाये तो तुरन्त पानी से बार-बार धोये। 10. हमेशा हाथ पाँव व कपड़े आदि धोने के लिये पानी की काफी मात्रा पास में रखे। 11.कीटनाशी मिलाते या छिड़कते समय खाना पीना और धुम्रपान करना मना है। 12.कीटनाशी मिलाते समय जिधर से हवा आये उस तरफ से खड़े हो 13.रसायन का धुआँ श्वसन क्रिया द्वारा अन्दर न जाने दें। 14.हवा के विरुद्ध दशा में छिड़काव या बुरकाव न करें। 15.मुँह से लगाकर बंद हुए नोजल आदि को सफाई न करें। 16.एक बार में जरूरत हो उतनी ही कीटनाशी साथ में ले जाये इसे दूसरे बर्तन में विशेषकर विदर या सोफ्ट ड्रिन्क की बोतल में डालकर न ले जाए। 17.छिड़काव के लिये सुबह या सायंकाल हवा की गति 7 किलोमीटर प्रति घण्टे से कम तथा तापमान 21 सेंटीग्रेड के आस-पास हो ऐसे हालात अच्छे रहते है। 18.फुहार के लिये सुबह या सायंकाल हवा की गति 10 किमी प्रति घण्टे से ज्यादा न हो तापमान 32 सेंटीग्रेड से ज्यादा न हो, ऐसे हालात अच्छे रहते हैं। 19.फूल आने पर फसलों पर बहुत कम छिड़काव करें तथा सायंकाल ही करें ताकि मधुमक्खियों को बचाया जा सके। 20.कभी भी कीटनाशियों को खेत में न छोड़े। 21.कीटनाशी काम में लेते समय जहर का प्रभाव शरीर पर होते ही तुरन्त डॉक्टर के पास कीटनाशी का डिब्बा या नाम लेकर जाये। 22.अगर खून में 'कोलीन एस्ट्रेस' सामान्य से कम हो तो कीटनाशी छिड़कने का काम न करें। 23.कभी भी कीटनाशी छिड़कने वाले को उत्साहित न करें कि ज्यादा समय तक या ज्यादा फसल पर छिड़केगा तो अधिक रुपये या इनाम मिलेगा।

कीटनाशियां काम में लेने के बाद सावधानियां

1.बची हुई कीटनाशी भण्डारों पर रख दें। 2.कभी भी कीटनाशी को घोल पम्प में न छोड़ें। पम्प को ठीक से साफ करके ही भण्डार में रखें। 3.खाली डिब्बे को दूसरे काम में न लें व इकट्ठ होने पर तोड़कर करीब दो फीट गहरी मिट्टी में दबा दें। कागज व प्लास्टिक आदि के डिब्बों को यदि जलायें तो धूएँ के पास खड़े न हो। 4.काम में लिये गये कपड़ों व अन्य सामग्री को ठीक प्रकार से धो ले। 5.कीटनाशी से काम करने के बाद ठीक से स्नान करके साफ कपड़े पहन लें। 6.जो भी कीटनाशियाँ फसलों पर छिड़कें उनका ब्यौरा लिखे। 7.कीटनाशी छिड़के खेत में कुछ समय के लिये किसी अन्य आदमी को न घूमने दें। 8.इस बात का ध्यान रखें कि कीटनाशी छिड़की हुई फसल को कोई जानवर न खाए। 9.कीटनाशी छिड़कने के बाद कम से कम 6 घटे तक वर्षा न हो तो ठीक है वरना दुबारा से दवा छिड़कनी चाहिए। 10. अंतिम छिड़काव व फसल काटने में बताये गये समयान्तर का ध्यान आवश्यक रखें।

प्राथमिक चिकित्सा पेटी-इसमें निम्नलिखित निजीकरण वस्तुएं रखनी चाहिए- 1.एक सिरिंज 5 सी.सी.। 2.फिनबार विटोल, एमाइल नाइट्राइट पर्ल्स, एट्रोपीन सल्फेट, कैफीन व एपोमोफोन के कैप्सूल्स। 3.अमोनियम कार्बोनेट, पिसी हुई सरसों, साधारण नमक, टैनिक एसिड, पोटेशियम परमेगनेट, बिनेगर, मिल्क ऑफ मैगनिशियम, 50 कोज और चारकोल इत्यादि। 4.पेट साफ करने के लिए नली।

विषोपचार- सभी सावधानियां रखने पर भी यदि कोई कार्यकर्ता गलती से कीट-विषों का शिकार हो जाये तो तुरंत ही निम्नलिखित उपाय ध्यान में रखने चाहिए।

1.रोगी के शरीर से विष को शीघ्रातिशीघ्र निकालने के लिये प्रयत्न करना चाहिये। 2.विषमार दवा का प्रयोग करना चाहिये। 3.रोगी ने जो भी मल-पदार्थ निकाले हों उन्हें जाँच के लिए एकत्रित कर लेना चाहिये। 4.रोगी को तुरन्त कहीं पास के अस्पताल में डाक्टर के पास ले जाने का प्रबन्ध करना चाहिये।

जहर खा लेने पर- जहर खा लेने पर रोगी को उल्टी कराने का प्रबन्ध करना चाहिये तथा आमाशय नली द्वारा आमाशय को धो डालें। उल्टी कराने के लिये निम्न पदार्थों का प्रयोग कर सकते हैं–1.एक गिलास गुनगुने पानी में 2 चम्मच साधारण नमक मिलाकर पिलाने पर उल्टी हो सकती है। 2.गुनगुने पानी में साबुन घोलकर देने से। 3.एक गिलास गुनगुने पानी में 1 ग्राम जिंक सल्फेट देने से। 4.एपोमारफीन हाइड्रोक्लोराइड का 1/10 ग्रेन इंजेक्शन देने से।

• यदि जहर निगल लिया जाए तो आंत की सफाई के लिए मैग्नीशियम साइट्रेट या सल्फेट या अरंडी के तेल का उपयोग किया जाता है • यदि रोगी बेहोश हो, उसे दौरे पड़ रहे हैं या उसने पैट्रोलियम पदार्थ, सान्द्र अम्ल कास्टिक सोडा आदि पी लिया है तो उल्टी नहीं करवाना चाहिये। इसके पेट की सफाई नली द्वारा डाक्टर से ही करवाना अच्छा रहता है। उ सर्वोपयोगी विषमार (Universal antidote) का प्रयोग ठीक रहता है क्योंकि इसे किसी भी प्रकार के विष को नष्ट करने के लिये दिया जा सकता है। सर्वोपयोगी विषमार दवा में निम्न पदार्थ होते हैं-

1.पिसी हुई जली डबल रोटरी	- 2 भाग
2.सान्द्र चाय	- 1 भाग
3.मिल्क ऑफ मैगनिशिया	- 1 भाग

इसे एक बड़ी चम्मच में पानी के साथ मिलाकर पिलाना चाहिए। कुछ अन्य प्रयोग किये जाने वाले उपयोगी विषमार (Antidote) निम्न है- * सार्वभौमिक मारक है 2 भाग सक्रिय चारकोल, 1 भाग MgO + 1 भाग टैनिक एसिड + ½ गिलास गर्म पानी। * आर्सेनिक और पारा विषाक्तता के लिए मारक डाइमरकैप्टोप्रोपेनॉल (BAL) है। * बी.एच.सी. विषाक्तता के लिए मारक बार्बिटुरेट्स है। * ऑर्गेनोक्लोरीन के लिए मारक डायजेपाम और एपिनेफ्रीन है। * निकोटिनिक प्रभाव मारक क्यूरारे, 2 पीएएम है। * कार्बामेट्स के लिए मारक एट्रोपीन सल्फेट (Atropine sulphate) का उपयोग मारक के रूप में किया जाता है।

विष को सूंघ लेने पर- निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिए- 1.रोगी को शीघ्र ही खुले स्थान में ताजी हवा में लाए। 2.यदि बन्द जगह पर हो तो मकान के सभी दरवाजे और खिड़की खोल देनी चाहियें। 3.शरीर के कपड़े ढीले कर दें। 4.रोगी को ठण्ड से बचायें उसे कम्बल आदि से लपेटकर रखें। 5.यदि रोगी को दौरे पड़ रहे हों तो अंधेरे स्थान में रखें। 6.यदि साँस लेने में कठिनाई हो रही हो तो उसे पेट के सहारे लिटाकर उसकी बाँहों को सामने की ओर फैला लें एवं स्वयं रोगी की पीठ को हल्के-हल्के सहलाते हुये दबाएं। 7. कृत्रिम श्वांस के लिए भी प्रबंध ठीक रखना चाहिए।

शरीर पर विष पड़ने पर- यदि शरीर के किसी भाग पर विष गिर गया है तो निम्न उपचार करने चाहिए- 1.उस भाग को तुरन्त ही साबुन से अच्छी प्रकार धोना चाहिये। 2.संबंधित भाग पर धीरे-धीरे पानी की धार गिरायें। 3.यदि जलन हो रही हो तो बरनोल आदि दवाओं का प्रयोग धोने के पश्चात् करें।

सोरघम के मानव जीवन में पोषण संबंधी लाभ

ज्ञानेन्द्र तिवारी कृषि जीव रसायन विज्ञान विभाग
अंकित कुमार तिवारी कृषि अर्थशास्त्र विभाग आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय

सोरघम एक प्राचीन अनाज है जिसे हजारों वर्षो से उगाया जाता रहा है और यह आज भी कई हिस्सों में मुख्य भोजन के रूप में उपयोग किया जाता है। यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है जहां जलवायु शुष्क और अर्ध-शुष्क होती है। यह कठोर पर्यावरणीय परिस्थितियों में भी विकसित हो सकता है और आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है जो मानव स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। यह लेख सोरघम के पोषण संबंधी लाभों और मानव स्वास्थ्य में इसकी भूमिका का अन्वेषण करेगा।

सोरघम की पोषण संरचना

सोरघम महत्वपूर्ण पोषक तत्वों से भरपूर होता है जो संतुलित आहार का हिस्सा बन सकते हैं। इसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, आहार फाइबर, विटामिन और खनिज प्रचुर मात्रा में होते हैं। इसके प्रमुख पोषण घटक निम्नलिखित हैं:

1.कार्बोहाइड्रेट: सोरघम जटिल कार्बोहाइड्रेट का एक उत्कृष्ट स्रोत है जो ऊर्जा प्रदान करता है और पाचन तंत्र को स्वस्थ रखता है।

2.प्रोटीन: इसमें पौध-आधारित प्रोटीन की अच्छी मात्रा होती है, जो मांसपेशियों के विकास और ऊतक मरम्मत के लिए आवश्यक है।

3.आहार फाइबर: इसका उच्च फाइबर स्तर पाचन को बढ़ावा देता है, आंतों के स्वास्थ्य में सुधार करता है और स्वस्थ वजन बनाए रखने में मदद करता है।

4.विटामिन और खनिज: सोरघम में बी विटामिन (नियासिन, थायमिन और राइबोफ्लेविन) होते हैं जो चयापचय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसमें आयरन, मैग्नीशियम, फास्फोरस और पोटैशियम जैसे खनिज भी होते हैं।

5.एंटीऑक्सीडेंट: इसमें फाइटोकेमिकल्स और एंटीऑक्सीडेंट होते हैं जो ऑक्सीडेटिव तनाव को कम करने और पुरानी बीमारियों से लड़ने में मदद करते हैं।

सोरघम के स्वास्थ्य लाभ

सोरघम का सेवन करने से कई स्वास्थ्य लाभ होते हैं क्योंकि इसमें कई आवश्यक पोषक तत्व मौजूद होते हैं। इसके प्रमुख स्वास्थ्य लाभ निम्नलिखित हैं:

1. पाचन स्वास्थ्य को समर्थन देता है

सोरघम फाइबर से भरपूर होता है, जिससे पाचन तंत्र स्वस्थ रहता है और कब्ज जैसी समस्याओं से राहत मिलती है। यह आंतों के माइक्रोबायोम को संतुलित करता है और पेट से संबंधित विकारों को रोकने में मदद करता है।

रक्त शर्करा स्तर को नियंत्रित करता है

सोरघम का ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है, जिससे यह मधुमेह रोगियों के लिए आदर्श अनाज बन जाता है। इसमें मौजूद जटिल कार्बोहाइड्रेट रक्त शर्करा के स्तर में अचानक वृद्धि को रोकते हैं और मधुमेह को नियंत्रित करने में मदद करते हैं।

हृदय स्वास्थ्य में सुधार करता है

सोरघम में एंटीऑक्सीडेंट और फाइबर होते हैं, जो कोलेस्ट्रॉल स्तर को कम करके हृदय रोगों के जोखिम को घटाते हैं। इसमें मौजूद पोटैशियम रक्तचाप को नियंत्रित करता है, जिससे हृदय स्वास्थ्य मजबूत होता है।

प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देता है

सोरघम में मौजूद आवश्यक विटामिन और खनिज प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते हैं। इसमें मौजूद जिंक और आयरन प्रतिरक्षा कार्य में सुधार करके संक्रमण और बीमारियों से बचाते हैं।

वजन प्रबंधन में मदद करता है

सोरघम एक उच्च फाइबर और ग्लूटेन-फ्री अनाज है, जिससे यह तृप्ति प्रदान करता है और वजन को नियंत्रित करने में मदद करता है। यह लंबे समय तक पेट भरा रखता है और अतिरिक्त कैलोरी की खपत को कम करता है।

पुरानी बीमारियों को रोकने में सहायक

सोरघम में पॉलीफेनोल्स और एंटीऑक्सीडेंट होते हैं जो ऑक्सीडेटिव तनाव को कम करके कैंसर, मधुमेह और न्यूरोडीजेनेरेटिव रोगों के जोखिम को घटाते हैं।

सोरघमः एक ग्लूटेन-फ्री विकल्प

जो लोग ग्लूटेन असहिष्णुता या सीलिएक रोग से पीड़ित हैं, उनके लिए सोरघम एक बेहतरीन विकल्प है। यह गेहूं और अन्य ग्लूटेन युक्त अनाजों का एक स्वस्थ विकल्प प्रदान करता है। सोरघम के आटे का उपयोग बेकिंग में किया जा सकता है, जिससे यह ग्लूटेन-मुक्त आहार के लिए एक बहुमुखी विकल्प बन जाता है।

सोरघम का पाक उपयोग

सोरघम को कई रूपों में खाया जा सकता है, जिससे यह एक बहुत ही उपयोगी अनाज बन जाता है। इसे आहार में शामिल करने के कुछ सामान्य तरीके निम्नलिखित हैं:

संपूर्ण अनाज सोरघम: इसे चावल की तरह पकाकर सलाद, सूप और स्टू में उपयोग किया जा सकता है।

सोरघम का आटा: इसे रोटी, ब्रेड, केक और अन्य ग्लूटेन-मुक्त उत्पादों के लिए उपयोग किया जाता है।

सोरघम दलिया: यह एक पौष्टिक नाश्ते का विकल्प है जो कई संस्कृतियों में लोकप्रिय है।

पॉप्ड सोरघम: यह पॉपकॉर्न की तरह एक स्वस्थ स्नैक होता है।

सोरघम सिरप: इसे प्राकृतिक मिठास के रूप में विभिन्न व्यंजनों में उपयोग किया जाता है।

निष्कर्ष

सोरघम एक पोषक तत्वों से भरपूर, ग्लूटेन-मुक्त अनाज है जो कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। इसकी समृद्ध पोषण संरचना पाचन स्वास्थ्य, हृदय कार्य, रक्त शर्करा नियंत्रण और प्रतिरक्षा प्रणाली को समर्थन देती है। इसके अलावा, यह एक स्थायी और बहुमुखी खाद्य स्रोत के रूप में कार्य करता है, जो व्यक्तिगत स्वास्थ्य और पर्यावरणीय स्थिरता दोनों को बढ़ावा देता है। जैसे-जैसे पोषण और पारिस्थितिक रूप से अनुकूल खाद्य पदार्थों की वैश्विक मांग बढ़ रही है, सोरघम एक मूल्यवान विकल्प के रूप में उभर रहा है।

दिनेश शिवहरे
Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com
08/2023-24

स्वर्णिमा तिवारी शोध छात्रा, वनस्पति विज्ञान विभाग
शची तिवारी शोध छात्रा, वनस्पति विज्ञान विभाग
अनिरुद्ध श्रीवास्तव सह-प्रोफेसर, रसायन विभाग,
स्वामी स्वामी विवेकानंद सुभारती यूनिवर्सिटी मेरठ (उ.प्र.)

प्राकृतिक बायोसर्फेक्टेंट्स का उपयोग करके धात्विक नैनोकणों की स्थिरीकरण के लिए उभरती रणनीतियां

परिचय: नैनोप्रौद्योगिकी उन विशिष्ट गुणों का लाभ उठाती है जो नैनोकणों (आमतौर पर 1 से 100 नैनोमीटर आकार के) में पाए जाते हैं, जो इन्हें सामान्य बल्क पदार्थों से अलग बनाते हैं और अनेक नवाचारपूर्ण अनुप्रयोगों के लिए सक्षम बनाते हैं। प्रारंभ में यह क्षेत्र औषधि वहन (drug delivery) और आणविक निदान (molecular diagnostics) पर केंद्रित था, लेकिन यह तेजी से विस्तृत हुआ है और अब यह कई क्षेत्रों में बहुउपयोगी समाधान प्रदान कर रहा है। इसे 21वीं सदी में सतत तकनीकी प्रगति के लिए एक प्रमुख प्रेरक शक्ति माना जाता है। नैनोकणों के अद्वितीय भौतिक और रासायनिक गुण विज्ञान और उद्योग के विभिन्न क्षेत्रों में क्रांतिकारी खोजों के द्वार खोलते हैं। हालांकि, उनकी उच्च सतह ऊर्जा के कारण ये आपस में जुड़ जाते हैं (aggregation), जिससे उनकी स्थिरता प्रभावित होती है। उनकी विस्तारित स्थिति और कार्यात्मक अखंडता बनाए रखने के लिए स्थिरीकरण तकनीकों की आवश्यकता होती है। इनमें पॉलिमर की परत से नैनोकणों को कोट करना, घोल के श्च्च को समायोजित करना जिससे सतही आवेश प्रभावित हो, और हवा व नमी के संपर्क को कम करना शामिल है जिससे सतह की गिरावट (degradation) रोकी जा सके।

सर्फैक्टेंट्स–जिनमें जलस्नेही (hydrophilic) और जलविफल (hydrophobic) दोनों घटक होते हैं–नैनोकणों के चारों ओर एक सुरक्षात्मक परत बनाकर उन्हें स्थिर बनाने में मदद करते हैं, जिससे कणों के आपसी संपर्क कम हो जाते हैं। अपने आवेश के आधार पर, सर्फैक्टेंट्स को आयनिक, गैर-आयनिक, या ज्विटरआयोनिक श्रेणियों में बांटा जा सकता है। सर्फेक्टेंट्स एम्फिफिलिक अणु होते हैं जो द्रव समाधानों में संदूषकों को घोलने और गतिशील बनाने में सहायता करते हैं, जिससे बैक्टीरिया उन्हें पुनः प्राप्त कर पुनः उपयोग कर सकते हैं। अपनी आयनिक प्रकृति, विषहीनता, उच्च इमल्सिफाइंग क्षमता, इंटरफेस गुणों और पर्यावरण-मित्रता के कारण, बायोसर्फेक्टेंट्स को विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए मूल्यवान माना जाता है।

बायोसर्फेक्टेंट (Bio surfactant)

पिछले एक दशक में बायोसर्फेक्टेंट्स पर अनुसंधान अध्ययनों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। यह रुचि मुख्यतः उद्योगों द्वारा पर्यावरण-अनुकूल प्रक्रियाओं और उत्पादों की बढ़ती मांग के कारण है। बायोसर्फेक्टेंट्स, जिन्हें जैविक सक्रिय रसायन, प्राकृतिक सर्फेक्टेंट्स और नवीकरणीय सर्फेक्टेंट्स के रूप में भी जाना जाता है, मुख्यतः पौधों और सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित होते हैं। इन्हें विभिन्न अनुप्रयोगों में सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है। बैक्टीरिया, यीस्ट और फाइलेमेंटस फंगी जैसे विभिन्न सूक्ष्मजीव बायोसर्फेक्टेंट उत्पादन में शामिल होते हैं, जो इनकी भिन्न-भिन्न संरचनाओं और गुणों में योगदान करते हैं। माइक्रोबियल बायोसर्फेक्टेंट पारंपरिक रासायनिक सर्फेक्टेंट्स के प्रभावी विकल्प के रूप में कार्य करते हैं। स्थलीय पर्यावरण के अतिरिक्त, ताजे पानी और तटीय पारिस्थितिक तंत्रों में भी माइक्रोबियल बायोसर्फेक्टेंट्स की खोज की गई है।

बायोसर्फेक्टेंट के प्रकार और विशेषताएं

कैटायोनिक और एनीऑनिक बायोसर्फेक्टेंट्स दो मुख्य प्रकार के सर्फेक्टेंट्स हैं जो अपने चार्ज गुणों में भिन्न होते हैं, और यही उनके गुणों और अनुप्रयोगों को प्रभावित करता है।

1.कैटायोनिक बायोसर्फेक्टेंट्स की हाइड्रोफिलिक हेड पर धनात्मक आवेश होता है, जिससे वे ऋणात्मक आवेश वाली सतहों (जैसे कि बैक्टीरियल झिल्ली) के साथ क्रिया कर सकते हैं और रोगाणुरोधी गुण प्रदर्शित करते हैं। इन्हें कीटाणुशोधन, रोगाणुरोधी एजेंट्स, शैंपू और कंडीशनर्स जैसे पर्सनल केयर उत्पादों में उपयोग किया जाता है, जहाँ ये स्टैटिक चार्ज नियंत्रित करने और बालों को कंडीशन करने में मदद करते हैं। इनकी पॉजिटिव चार्ज के कारण ये प्रदूषकों के साथ भी क्रिया कर सकते हैं, जिससे ये पर्यावरणीय सफाई प्रक्रियाओं में सहायक होते हैं।

2.एनीऑनिक बायोसर्फेक्टेंट्स की हाइड्रोफिलिक हेड पर ऋणात्मक आवेश होता है, जिससे ये हाइड्रोफोबिक पदार्थों को इमल्सीफाइ और डिस्पर्स करने में प्रभावी होते हैं। इन्हें डिटर्जेंट्स, इमल्सीफायर और क्लीनिंग एजेंट्स में प्रयोग किया जाता है क्योंकि ये तेल और चिकनाई को तोड़ने में अत्यंत सक्षम होते हैं। एनीऑनिक बायोसर्फेक्टेंट्स भूमि शोधन में भी बहुत प्रभावी होते हैं। दोनों प्रकार के बायोसर्फेक्टेंट्स जैवअपघटनीय, पर्यावरण-अनुकूल और विषहीन होते हैं, जिससे वे औद्योगिक और औषधीय अनुप्रयोगों में अत्यधिक उपयोगी हैं।

बायोसर्फेक्टेंट्स क्या हैं और क्यों जरूरी हैं?

बायोसर्फेक्टेंट्स वे पदार्थ होते हैं जो पौधों और सूक्ष्मजीवों (जैसे बैक्टीरिया, यीस्ट और फंगस) द्वारा उत्पन्न होते हैं। ये प्राकृतिक सर्फेक्टेंट्स होते हैं और इन्हें पारंपरिक रासायनिक सर्फेक्टेंट्स के सुरक्षित विकल्प के रूप में उपयोग किया जा सकता है।इनका प्रमुख गुण यह है कि ये एम्फिफिलिक होते हैं यानी इनमें जल-प्रेमी (hydrophilic) और जल-विरोधी (hydrophobic) दोनों भाग होते हैं। यही गुण इन्हें विभिन्न द्रवों और पदार्थों के साथ क्रिया करने योग्य बनाता है। उदाहरणः यदि कोई तेल और पानी मिश्रण है, तो बायोसर्फेक्टेंट उसे स्थिर करने में मदद करते हैं।

रोगाणुरोधी गुण (Antimicrobial Property)

सर्फेक्टिन, इटुरिन, रैमनोलिपिड्स और फेंगाइसिन जैसे कई बायोसर्फेक्टेंट्स अपने शक्तिशाली रोगाणुरोधी गुणों के लिए प्रसिद्ध हैं और जैवप्रौद्योगिकी व चिकित्सा क्षेत्रों में व्यापक रूप से उपयोग किए जाते हैं। ये बैक्टीरियल कोशिका झिल्ली को नष्ट कर कोशिका सामग्री के रिसाव का कारण बनते हैं, जिससे कोशिका मृत्यु होती है। बायोसर्फेक्टेंट्स की प्राकृतिक उत्पत्ति और पर्यावरणीय मित्रता उन्हें रासायनिक एंटीमाइक्रोबियल्स के टिकाऊ विकल्प के रूप में स्थापित करती है। इन्हें घाव भरने में भी प्रभावी पाया गया है, क्योंकि ये संक्रमण को रोकने और सूजन को कम करने में सहायक होते हैं। Lactobacillus जैसे सूक्ष्मजीवों से बड़े पैमाने पर कम लागत पर इनका उत्पादन भी किया जा रहा है, जिससे कृषि, खाद्य संरक्षण और औषधीय उद्योगों में इनकी उपयोगिता बढ़ती है। उदाहरण के लिए, Pseudomonas aeruginosa द्वारा उत्पादित रैमनोलिपिड्स ने ग्राम-पॉजिटिव और ग्राम-नेगेटिव दोनों प्रकार के बैक्टीरिया के विरुद्ध प्रभाव दिखाया है, जबकि सर्फैक्टिन ने शक्तिशाली एंटीफंगल गुण प्रदर्शित किए हैं।

नैनोकणों की स्थिरता में बायोसर्फेक्टेंट की भूमिका

बायोसर्फेक्टेंट्स नैनोकणों और अन्य कोलॉइडल प्रणालियों की स्थिरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनकी एम्फिफिलिक संरचना के कारण ये नैनोकणों की सतह पर अवशोषित होकर एक सुरक्षात्मक परत बना लेते हैं, जिससे अणुओं का एकत्रीकरण रुकता है और स्थिरता बनी रहती है। ये सतही तनाव को कम कर नैनोकणों को विलयन में समान रूप से वितरित रखते हैं, जो उनके कार्य और प्रदर्शन के लिए आवश्यक होता है। बायोसर्फेक्टेंट्स इमल्सन और माइक्रोइमल्सन को भी स्थिर करते हैं, जो सौंदर्य प्रसाधन, खाद्य प्रसंस्करण और औषधीय उद्योगों में आमतौर पर प्रयुक्त होते हैं। ये विभिन्न श्च्च और तापमान स्थितियों में नैनोकणों को स्थिर रखने में सक्षम होते हैं, जिससे इनका उपयोग विविध अनुप्रयोगों में संभव होता है। इसके अतिरिक्त, पर्यावरणीय सफाई में भी ये सहायक होते हैं क्योंकि ये हाइड्रोफोबिक प्रदूषकों को घोलने और गतिशील बनाने में मदद करते हैं।

निष्कर्ष और भविष्य की संभावनाएं

हाल ही में, धात्विक नैनोकणों को स्थिर करने के लिए बायोसर्फेक्टेंट्स के उपयोग को एक पर्यावरण-अनुकूल विधि के रूप में स्वीकार किया गया है। ये न केवल स्थिरीकरण में सहायक होते हैं, बल्कि नैनोप्रौद्योगिकी में रिड्यूसिंग एजेंट और स्टेबलाइजर के रूप में भी कार्य करते हैं। इनके विषहीन और जैव-अपघटनीय गुण पर्यावरणीय नुकसान को कम करते हैं। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि धात्विक नैनोकणों के स्थिरीकरण में बायोसर्फेक्टेंट्स की महत्वपूर्ण भूमिका है। हालांकि, इनका वाणिज्यिक उपयोग अभी भी उच्च उत्पादन लागत, विशेष रूप से डाउनस्ट्रीम प्रक्रियाओं, के कारण सीमित है। इसलिए, भविष्य के अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य नवीकरणीय उपस्रवों का उपयोग कर सस्ती उत्पादन तकनीकों का विकास करना होगा।

बायोसर्फेक्टेंट्स धातु नैनोकणों के लेप में सहायक होते हैं, एकत्रीकरण की समस्या को दूर करते हैं और कणों के गुणों को संरक्षित रखते हैं। हालांकि, बड़े पैमाने पर उत्पादन के दौरान इनकी शुद्धता और स्थिरता बनाए रखना चुनौतीपूर्ण होता है, विशेष रूप से अत्यधिक तापमान और pH में।

मिट्टी के नमूने लेने की विधि

✍ हरि शंकर सिंह (रिसर्च स्कॉलर) (मृदा विज्ञान विभाग), चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.)

✍ अनिल कुमार (प्रोफेसर) मृदा विज्ञान विभाग) चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगीकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

आज के समय मे मिट्टी की जाच कृषि कार्य के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्वों, जैविक तत्वों, नमी, पीएच (pH) इत्यादि का सही ज्ञात होने पर ही किसान उचित फसल का चुनाव और उर्वरक का सही प्रयोग करके आधिक लाभ प्राप्त कर सकता है।

इसके लिए आवश्यक है कि मिट्टी की जांच समय से करवाई जाए, और जांच के लिए सही तरीके से मिट्टी का नमूना लेना बहुत जरूरी होता है।

यदि नमूना ठीक से नहीं लिया गया, तो परीक्षण रिपोर्ट गलत हो सकता है, जिससे गलत उर्वरक और जल प्रबंधन किया जा सकता है। इसलिए इस प्रक्रिया का पालन सही तरीके से करना अत्यंत आवश्यक है।

मिट्टी के नमूने लेने के उद्देश्य

1. मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों की मात्रा जानना (NPK– नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम)।
2. मिट्टी की अम्लता या क्षारीयता (pH स्तर) की जानकारी प्राप्त करना।
3. सूक्ष्म पोषक तत्वों (जैसे- जिंक, आयरन, मैंगनीज, बोरॉन) की स्थिति का आंकलन करना।
4. फसल के लिए उचित उर्वरकों की मात्रा की जानकारी प्राप्त करना।
5. मृदा की भौतिक स्थिति (जैसे बनावट-बलुई, दोमट, चिकनी आदि) जानना।
6. मृदा में जैविक कार्बन और नमी की मात्रा का पता लगाना।
7. मिट्टी की उर्वरकता को बनाए रखने हेतु उर्वरक प्रबंधन की योजना बनाना।

मिट्टी के नमूने लेने की विधि

1. समय का चयन

* मिट्टी का नमूना तब लें जब खेत खाली हो या फसल बोने की तैयारी हो रही हो।
* वर्षा या सिंचाई के 2 से 3 दिन बाद नमूना न लें।
* प्रति 2-3 वर्षों में एक बार मिट्टी की जांच करवाना उपयुक्त रहता है।

2. आवश्यक उपकरण

* खुरपी या कुदाल
* साफ़ बाल्टी या टब
* मिट्टी काटने का यंत्र (Soil Auger– अगर उपलब्ध हो)
* प्लास्टिक की थैलियाँ या सैंपल बैग
* लेबल (नाम, स्थान, तिथि आदि लिखने के लिए)

3. नमूना लेने का तरीका

* खेत में "Z" या "W" के आकार में चलें और अलग-अलग स्थानों से 5-10 जगहों से नमूना लें।
* प्रत्येक स्थान से लगभग 0-15 सेंटीमीटर गहराई तक की मिट्टी निकालें। (यदि गहरी फसलों के लिए हो तो 15-30 सेमी तक लें)।
* खेत के कोने, मेंढ़, गोबर या खाद के ढेर के पास से नमूना न लें।
* सभी स्थानों से ली गई मिट्टी को एक साफ स्थान पर इकट्ठा करें और अच्छे से मिलाएं।
* मिश्रित मिट्टी में से लगभग 500 ग्राम मिट्टी निकालकर एक साफ थैली में रखें।
* मिट्टी के नमूने को तैयार करना व भेजना

4. सैंपल पर जानकारी लिखना

* किसान का नाम * गांव का नाम * खेत का नाम या संख्या (यदि हो) * नमूना लेने की तारीख
* गहराई (उदा-0:15 सेंमी)
* फसल का नाम (यदि बोई गई हो)

5. नमूना कहां भेजें

* नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र (KVK)
* सरकारी/निजी मृदा परीक्षण प्रयोगशाला (Soil Testing Lab)
* कृषि विश्वविद्यालय या राज्य कृषि विभाग की प्रयोगशालाएं

6. परिणाम प्राप्ति के बाद

* रिपोर्ट का अध्ययन करें।
* दिए गए सुझावों (उर्वरक मात्रा, pH सुधार आदि) को अपनाएं।
* अगली फसल के लिए मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने हेतु जैविक एवं रासायनिक उर्वरकों का संतुलित उपयोग करें।

निष्कर्ष

सही ढंग से मिट्टी का नमूना लेना एक महत्वपूर्ण कदम है, जो हमें भूमि की वास्तविक स्थिति की सही जानकारी मिलती है। यह किसानों को वैज्ञानिक खेती की ओर बढ़ने में मदद करता है। इससे उत्पादन में वृद्धि होती है, लागत घटती है और फसल के अनुसार सही मात्रा मे पोषक तत्वों की उपलब्धता मिल पाती है, और पर्यावरण संतुलन बना रहता है।

12/2022-23

डॉ. सतीश कुमार चक्रवर्ती (Farm Manager)
Krashi Vigyan Kendra, SANT KABIR NAGAR
Acharya Narendra Deva University of Agriculture and Technology, KUMARGANJ -AYODHYA (U.P.)

किसान सम्मान निधि योजना

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि भारत सरकार की महत्वपूर्ण योजनाओं में से एक योजना है जो छोटे और सीमान्त किसान जिनके पास 2 हेक्टेयर (4.9 एकड़) से कम भूमि है उनको आर्थिक सहायता प्रदान करती है इस योजना के तहत सभी किसानो को न्यूनतम आय सहायता के रूप में प्रति वर्ष 6 हजार रुपए मिल रहे हैं। यह योजना किसानो के लिए वरदान साबित हो रही है।

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना के तहत 6,000 रुपए प्रति वर्ष प्रत्येक पात्र किसान को तीन किश्तों में भुगतान किया जाता है और सहायता राशी सीधे उनके बैंक खातों में जमा हो जाती है. जिसमे प्रत्येक 4 माह के बाद किसान को 2 हजार की सहायता राशी दी जा रही है. योजना की शुरुआत वर्ष 2018 के रबी सीजन में की गई थी। छोटे किसानों के लिए यह योजना अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है. बुवाई से ठीक पहले नगदी संकट से जूझने वाले किसानों को इस नगदी से बीज, खाद और अन्य इनपुट की उपलब्धता में सहूलियत मिल रही है। इन छोटे किसानों में ज्यादातर सीमान्त हैं, जिनका खेती से पेट भरना मुश्किल हैं लेकिन इस योजना के आने के बाद किसान इसका लाभ ले कर काफी खुश है। इस योजना का लाभ दो हेक्टेयर खेती वाली जमीन से कम रकबा वाले किसानों को दिए जाने का प्रावधान है. राज्य सरकारें ऐसे किसानों की जोत के साथ उनके बैंक खाते और अन्य ब्यौरा केंद्र सरकार को मुहैया कराती है। उसकी पुष्टि के बाद केन्द्र सरकार ऐसे किसानों के बैंक खातों में सीधे धन जमा करती है. योजना की सफलता में डिजिटल प्रणाली की भूमिका अहम साबित हो रही है।

ऑनलाइन आवेदन के बाद मिलते हैं 6 हजार रुपए

पीएम किसान सम्मान निधि स्कीम द्वारा केंद्र सरकार किसानों को साल भर में तीन किस्तों के माध्यम से छह हजार रुपए की आर्थिक सहायता देती है। 6 हजार रुपए की राशि के लिए किसानों को ऑनलाइन अप्लाई करना होता है। फिर उस एप्लीकेशन को राज्य सरकार रेवेन्यू रिकॉर्ड, आधार नंबर और बैंक अकाउंट नंबर के जरिए वेरिफिकेशन करती है। राज्य सरकार जब तक आपके अकाउंट को वेरीफाई नहीं कर लेती तब तक पैसे नहीं आते। राज्य सरकार से पूरी जांच होने के बाद तुरंत FTO जनरेट हो जाता है। इसके बाद अकाउंट में आसानी ये सीधे पैसे ट्रांसफर कर दिए जाते हैं। पीएम किसान सम्मान निधि के तहत अब तक दो-दो हजार की छह किस्तों में 22,594.78 करोड़ रुपये राज्य के 2.35 करोड़ से ज्यादा किसानों के बैंक अकाउंट्स में ट्रांसफर किया जा चुके हैं। इस योजना के तहत केन्द्र सरकार का मकसद छोटे-मझोले किसानों की मदद करना है।

अगर आपको किश्त नहीं मिली है तो यहां करें शिकायत

अगर आपको किस्त मिलने में कोई परेशानी है या पात्र होने के बाद भी अब तक आपको कोई किस्त नहीं मिली है तो आप पीएम किसान सम्मान निधि योजना के हेल्पलाइन नंबर पर शिकायत दर्ज करा सकते हैं.

पीएम किसान टोल फ्री नंबर :18001155266

पीएम किसान हेल्पलाइन नंबर: 155261

पीएम किसान लैंडलाइन नंबर: 011-23381092, 23382401

पीएम किसान की नई हेल्पलाइन: 011-24300606

पीएम किसान की एक और हेल्पलाइन: 0120-6025109

ई-मेल pmkisan-ict@gov.in

किसान सम्मान निधि योजना ऑनलाइन आवेदन

आवेदन करने के लिए आपको अपने नजदीकी CSC सेंटर पर जाना होगा। वहां पर आपको अपना आधार कार्ड, बैंक पासबुक, और जमीं का रशीद ले कर जाना होगा. उसके बाद कुछ शुल्क देने के बाद आपका रजिस्ट्रेशन और आवेदन हो जाएगा। आवेदन की प्रक्रिया ऑनलाइन है इसलिए इसमें ज्यादा समय नहीं लगता है। मात्र 5 से 10 मिनट में आपका आवेदन पूरा हो जायेगा। आगे आपके द्वारा किया गया आवेदन सत्यापन के लिए आपके ब्लॉक में भेज दिया जाएगा। ब्लॉक में वेरीफाई होने के बाद आपका आवेदन जिला कल्याण विभाग को भेज दिया जाएगा। उसके बाद राज्य सरकार इसको सत्यापित करेगी और अंत में केन्द्र सरकार के पास आपका आवेदन ऑनलाइन ही सत्यापन के लिए पहुंच जायेगा।

उत्तर भारत में मार्च से जुलाई के दौरान हीटवेव और भीषण हीटवेव

✍ **कुलदीप सिंह** (पीएचडी रिसर्च स्कॉलर) सस्य विज्ञान विभाग, सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज, प्रयागराज (उ.प्र.)

✍ **श्रद्धा रावत** सहायक प्रोफेसर (वरिष्ठ स्तर) सस्य विज्ञान विभाग, सैम हिगिनबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर, टेक्नोलॉजी एंड साइंसेज, प्रयागराज (उ.प्र.)

परिचय

उत्तर भारत में मार्च से जुलाई के महीनों के दौरान हीटवेव और भीषण हीटवेव की घटनाएं लगातार बढ़ रही हैं। 2025 में यह स्थिति और गंभीर हो जाएगी है, जब मार्च के अंत में ही तापमान 40°C के पार पहुँच गया और भारतीय मौसम विभाग (IMD) ने पूरे उत्तर भारत हेतु हीटवेव अलर्ट जारी कर दिया। इस वर्ष, मार्च से मई तक हेतु रिकॉर्ड तोड़ गर्मी की भविष्यवाणी की गई है, जो पिछले वर्षों के सारे रिकॉर्ड तोड़ सकती है।

2025 की हीटवेव उत्तर भारत में अपनी अभूतपूर्व तीव्रता और लंबी अवधि हेतु खास रही। भारतीय मौसम विभाग (IMD) और कई जलवायु विशेषज्ञों के अनुसार, 2025 में हीटवेव की शुरुआत अब तक की सबसे जल्दी हुई। फरवरी 2025 को 1901 के बाद का सबसे गर्म फरवरी महीना दर्ज किया गया, और पहली बार गोवा व महाराष्ट्र जैसे क्षेत्रों में सर्दियों के दौरान भी हीटवेव देखी गई। इस जल्दी शुरुआत के कारण हीटवेव का मौसम लंबा खिंच गया, जो फरवरी के अंत से शुरू होकर सामान्यतः चरम गर्मी के महीनों अप्रैल से जून तक जारी रहने की संभावना है।

हीटवेव और भीषण हीटवेव की वर्तमान स्थिति

- **मार्च 2025:** दिल्ली, जयपुर, चंडीगढ़, अमृतसर, और लखनऊ जैसे शहरों में दिन का तापमान 38-40°C तक पहुँच गया, जो सामान्य से 6-7 डिग्री अधिक है।
- **अप्रैल-जून:** राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, पंजाब, मध्य प्रदेश सहित उत्तर भारत के कई राज्यों में तापमान 40°C से ऊपर दर्ज किया गया। पश्चिमी राजस्थान में सबसे अधिक असर देखा गया।
- **रात का तापमान:** रात में भी तापमान सामान्य से अधिक बना रहा, जिससे प्राकृतिक ठंडक का समय कम हो गया और राहत नहीं मिल पाई।

हीटवेव के कारण

- **जलवायु परिवर्तन:** वैश्विक तापमान में वृद्धि और जलवायु परिवर्तन के कारण उत्तर भारत में गर्मी का आगमन जल्दी और अधिक तीव्र हो गया है।
- **कमज़ोर पश्चिमी विक्षोभ:** ठंडे पश्चिमी विक्षोभों की आवृत्ति और ताकत में कमी के कारण तापमान तेजी से बढ़ता है।
- **शहरीकरण:** महानगरों में शहरीकरण और कंक्रीट संरचनाओं के कारण गर्मी अधिक समय तक बनी रहती है।
- **कम बारिश:** पश्चिमी विक्षोभ की कमी और कम बारिश से मिट्टी में नमी घट जाती है, जिससे गर्मी और बढ़ जाती है।

हीटवेव और भीषण हीटवेव के प्रभाव

तीव्रता (Intensity)

- 2025 में तापमान कई जगहों पर पुराने रिकॉर्ड तोड़ते हुए सामान्य से 4–7°C तक ऊपर चला गया।
- IMD और जलवायु वैज्ञानिकों के अनुसार, न सिर्फ दिन का तापमान बढ़ा बल्कि रात का तापमान भी असामान्य रूप से ऊँचा रहा, जिससे गर्मी का प्रभाव और भी गंभीर हो गया। • हीटवेव वाले दिनों की संख्या में भी वृद्धि हुई है, और अनुमान है कि इस सदी के अंत तक ऐसे इवेंट्स तीन से छह गुना तक बढ़ सकते हैं।

अवधि (Duration)

• अत्यधिक गर्मी की अवधि में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। 2024 में भारत ने अब तक की सबसे लंबी हीटवेव झेली थी, जिसमें विभिन्न स्थानों पर कुल 536 हीटवेव दिन दर्ज किए गए थे। 2025 के शुरुआती आंकड़े और अनुमान बताते हैं कि यह साल भी उस रिकॉर्ड को पार कर सकता है, क्योंकि हीटवेव जल्दी आ गई और लंबे समय तक बनी हुई है। • 'स्टेट ऑफ इंडिया एनवायरनमेंट 2025' रिपोर्ट के अनुसार, ट्रैक किए गए 274 दिनों में से 255 दिन (93%) में देश के किसी न किसी हिस्से में अत्यधिक मौसम की घटनाएँ दर्ज की गई, जो 2023 के 235 और 2022 के 241 दिनों से अधिक है।

कृषि पर प्रभाव

• गेहूं, चना, सरसों जैसी रबी फसलें हीटवेव के दौरान दाने भरने के समय पर प्रभावित होती हैं, जिससे दाने सिकुड़ जाते हैं, समय से पहले पक जाते हैं और उत्पादन में 15-25% तक की गिरावट आ सकती है। • बागवानी फसलों (जैसे आम, नींबू, अनार) में फूल झड़ना, फल न लगना, और सन बर्न जैसी समस्याएँ बढ़ जाती हैं। • पशुओं में दूध उत्पादन घटता है और मुर्गी पालन में अंडा उत्पादन कम हो जाता है। • सिंचाई की आवश्यकता बढ़ जाती है, जिससे जल संसाधनों पर दबाव पड़ता है।

जन स्वास्थ्य पर प्रभाव

- हीट स्ट्रोक, डिहाइड्रेशन और अन्य गर्मी से जुड़ी बीमारियाँ बढ़ जाती हैं, खासकर बच्चों, बुजुर्गों और बीमार लोगों में।
- बिजली की मांग बढ़ जाती है जिससे पावर ग्रिड पर दबाव पड़ता है।

सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

- फसल उत्पादन घटने से किसानों की आय कम होती है और खाद्य सुरक्षा पर खतरा बढ़ता है। • शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में जल संकट और महंगाई की समस्या गहराती है।

हीटवेव से निपटने के उपाय

• IMD द्वारा समय-समय पर हीटवेव अलर्ट जारी किया जाता है, जिससे लोग और किसान सतर्क रह सकें। • कृषि अनुसंधान संस्थानों द्वारा हीट-रेजिस्टेंट फसल किस्मों का विकास और प्रचार किया जा रहा है। • किसानों को सिंचाई, मल्चिंग और छायादार संरचनाओं जैसी तकनीकों को अपनाने की सलाह दी जाती है। • सरकार द्वारा पेयजल आपूर्ति, स्वास्थ्य सेवाएँ और बिजली आपूर्ति को मजबूत किया जा रहा है।

निष्कर्ष

विशेषज्ञों की राय स्पष्ट है: 2025 की हीटवेव पहले से कहीं अधिक तीव्र और लंबी रही है - इसकी शुरुआत जल्दी हुई, तापमान चरम पर रहा और चरम स्थितियाँ लगातार बनी रहीं। इसका मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन, शहरीकरण और असामान्य रूप से शुष्क सर्दी मानी जा रही है, जिससे भारत के लिए ऐसी गंभीर हीटवेव अब नई सामान्य स्थिति बनती जा रही है। उत्तर भारत में मार्च से जुलाई के बीच हीटवेव और भीषण हीटवेव की घटनाएं अब आम होती जा रही हैं, जिनका असर कृषि, स्वास्थ्य और अर्थव्यवस्था पर गहरा पड़ रहा है। जलवायु परिवर्तन, कम बारिश, और शहरीकरण जैसी चुनौतियों के बीच, सतर्कता, तकनीकी नवाचार और सरकारी हस्तक्षेप के ज़रिए ही इन प्रभावों को कम किया जा सकता है। भविष्य में इन चुनौतियों से निपटने के लिए दीर्घकालिक रणनीति और सामूहिक प्रयास आवश्यक हैं।

01/2023-24

मिट्टी परीक्षण के फायदे

डॉ. सतीश कुमार चक्रवर्ती (Farm Manager)
Krashi Vigyan Kendra, SANT KABIR NAGAR
Acharya Narendra Deva University of Agriculture and Technology, KUMARGANJ -AYODHYA (U.P.)

मिट्टी को टिकाऊ एवं लाभप्रद बनाने के लिए मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण एवं सुधार आवश्यक है। पौधों की संतुलित वृद्धि के लिए 16 प्रमुख तत्वों की जरूरत होती है। इनमें से 03 पोषक तत्व कार्बन, हाईड्रोजन तथा ऑक्सीजन पौधे वायुमण्डल एवं जल से ग्रहण करते हैं। शेष 13 पोषक तत्व जैसे नत्रजन, स्फुर, पोटाश, कैल्शियम, मैग्निशियम, सल्फर एवं सूक्ष्म तत्व-जिंक, आयरन, कॉपर, मैग्नीज, बोरान, मॉलीब्डेनम एवं क्लोरीन पौधे भूमि से ग्रहण करते हैं। इसमें से किसी भी तत्व की कमी या अधिकता होने पर फसल की बढ़वार एवं उत्पादकता प्रभावित होती है। एक तत्व की कमी या अधिकता दूसरे तत्व के अवशोषण को भी प्रभावित करती है। इनके अलावा मिट्टी की अम्लीयता या क्षारीयता तथा घुलनशील लवणों की मात्रा भी पौधों के विकास को प्रभावित करती है। जैसे अम्लीय भूमि में स्फुर, बोरॉन, मॉलीब्डेनम की उपलब्धता कम हो जाती है जबकि आयरन, मैगनीज, एल्युमिनियम की उपलबधता विषैले स्तर तक पहुंच जाती है।

लगातार एक ही प्रकार की फसल लेने एवं फसल चक्र में दलहनी फसल को शामिल न करने से भूमि की उर्वरता घट रही है। असंतुलित मात्रा में उर्वरकों के उपयोग से भूमि और जल प्रदूषित हो रहा है। जैविक खाद के उपयोग न करने से मिट्टी की संरचना, जलधारण क्षमता तथा स्वास्थ्य में विपरीत प्रभाव पड़ा है। उर्वरकों की खपत एवंकास्त लागत बढ़ने के बावजूद उत्पादकता में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो रही है। अत: खेतों की मिट्टी का परीक्षण कराकर संतुलित एवं समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन अतिआवश्यक है।

मिट्टी नमूना कब लें: सघन कृषि में एक फसल चक्र के पूरा होने पर प्रतिवर्ष अन्यथा दो वर्ष में एक बार मिट्टी परीक्षण अवश्य कराएं। फसल की बुआई/रोपाई के पहले सूखे खेत से मिट्टी नमूना एकत्र करें।

नमूना कैसे लें

- चयनित ग्राम के नक्शे में भूमि के प्रकार के अनुसार कृषि क्षेत्र का ग्रिड बनाएं। सिंचित भूमि में लगभग 2.5 हेक्टेयर तथा असिंचित भूमि में 10 हेक्टेयर का ग्रिड बनाएं।
- जी.पी.एस. मशीन से ग्रिड का अक्षांश-देशांश नोट करें। प्रत्येक ग्रिड से एक नमूना तैयार करें। एक ग्रिड से 15 से 20 स्थान चुनकर सतह से कचरा पत्थर आदि साफ कर लें। इसके बाद खुरपी से 'V' आकार का 6 इंच गहरा गड्ढा करें। इसकी एक सतह से आधा इंच मिट्टी की परत खुरचकर एक करें।

- सभी गड्ढों से प्राप्त मिट्टी को आपस में मिलाकर छाया में सुखाएं। फिर ढेलों को फोड़कर बारिक करके अच्छी तरह से मिला लें।
- मिट्टी की मात्रा आधा किलो से अधिक हो तो इसे साफ कपड़े पर गोलाकार ढेर बना लें। उसके चार बराबर भाग कर आमने-सामने के भाग (अ एवं ब) को लेकर फिर मिलाएं, भाग क एवं ग को थैली में भरें।
- नमूना के साथ सूचना पत्र में जानकारी (किसान का नाम, पता, खसरा नम्बर, खेत की पहचान, अंक्षाश/देशांश, नमूना दिनांक, जमीन की स्थिति, मिट्टी का प्रकार, लगाई जाने वाली फसल का नाम, गत वर्ष ली गई फसल का नाम एवं उपयोग की गई खाद/उर्वरक की मात्रा आदि) भरकर थैली में रखें।
- एकत्रित नमूनों को क्षेत्रीय ग्रामीण कृषि विस्तार अधिकार के माध्यम से निकटतम मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला भेजें।
- प्राप्त परिणाम (स्वाइल हेल्थ कार्ड) के अनुसार अनुशंसित मात्रा में उर्वरक उपयोग करें।

मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरक सिफारिश

पी.एच.: यह मिट्टी की अम्लीयता या क्षारीयता को दर्शाती है। इसका मान 1 से 14 तक होता है। साधारणत: 6.5 से 7.5 पी.एच. सामान्य श्रेणी में आता है तथा सभी फसलों के उत्पादन के लिए उपयुक्त है, इससे होने पर भूमि अम्लीय और अधिक होने पर क्षारीय कहलाती है। अम्लीय भूमि में चूना एवं क्षारीय में जिप्सम भू-सुधारक का उपयोग करना आवश्यक है।

विद्युत चालकता: भूमि की विद्युत चालकता मिट्टी में उपलब्ध लवण के आधार पर निर्धारित की जाती है। एक डेसी साइमन प्रति वर्ग से.मी. से कम विद्युत चालकता वाली भूमि सभी फसलों के उत्पादन हेतु उपयुक्त है। इससे अधिक विद्युत चालकता होने पर गोबर/कम्पोस्ट खाद का उपयोग किया जाना आवश्यक है।

आर्गेनिक कार्बन: भूमि में 0.50 प्रतिशत से कम आर्गेनिक कार्बन उपलब्ध होने की स्थिति में हरी खाद, गोबर/कम्पोस्ट खाद का उपयोग किया जाना आवश्यक है।

नत्रजन, स्फुर, पोटाश: उक्त तीनों तत्व मुख्य पोषक तत्व की श्रेणी में आते हैं, जिनका फसलों द्वारा अधिक मात्रा में भूमि से अवशोषण किया जाता है। मिट्टी परीक्षण में उर्वरता, स्तर निम्न होने की स्थिति में सिफारिश मात्रा में 50 प्रतिशत बढ़ाकर, मध्यम उर्वरता स्तर में सिफारिश मात्रा का तथा उच्च स्तर पर होने पर सिफारिश मात्रा में 50 प्रतिशत कमी कर उपयोग करना चाहिए।

सल्फर (गंधक): यह द्वितीयक पोषक तत्व की श्रेणी में आता है। तिलहनी एवं दलहनी फसलों में तेल एवं प्रोटीन के निर्माण में सल्फर तत्व की महत्वपूर्ण भूमिका है जिसकी पूर्ति हेतु जिप्सम/सिंगल सुपरफास्फेट का उपयोग किया जाना आवश्यक है।

जिंक, आयरन कॉपर मैगनीज, बोरॉन, मालिब्डेनम: उक्त छह तत्व सूक्ष्म पोषक तत्व की श्रेणी में आते हैं, इनमें से एक भी तत्व की कमी या अधिकता होने पर पौधों द्वारा तत्वों का अवशोषण प्रभावित होने से फसल की बढ़वार एवं उत्पादकता में कमी आती है। अत: सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा क्रांतिक स्तर से कम होने पर संबंधित तत्व की पूर्ति किया जाना आवश्यक है। अनाज वाली फसलों में जिंक तत्व की कमी की पूर्ति हेतु जिंक सल्फेट का उपयोग करना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

नैनो टेक्नोलॉजी

आशुतोष (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

धन्य कुमार (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

डॉ. मौसमी सैयद (सहायक प्राध्यापक) बीज प्रौद्योगिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

परिचय

कृषि अधिकांश विकासशील देशों की रीढ़ है। कृषि में उर्वरक का मुख्य उपयोग पूर्ण पोषक तत्व (मैक्रो और माइक्रो) प्रदान करने के लिए किया जाता है जो सामान्यत: मिट्टी में नहीं होते। पारंपिक कृषि तकनीकें अब विकास की सीमा पर पहुंच चुकी हैं और न तो उत्पादकता बढ़ा पा रही हैं और न ही पारिस्थितिकी तंत्र को बहाल कर पा रही हैं। कृषि में सतत विकास प्राप्त करने और खाद्य सुरक्षा की चुनौतियों को पूरा करने के लिए, 'नैनो टेक्नोलॉजी ' एक समाधान हो सकता है।

नैनो टेक्नोलॉजी क्या है?

- नैनो टेक्नोलॉजी पदार्थ को सूक्ष्म स्तर पर नियंत्रित करने की कला और विज्ञान है।
- नैनोटेक्नोलॉजी का अध्ययन 1 से 100 नैनोमीटर के बीच सूक्ष्म पदार्थ का होता है।
- इसका उपयोग चिकित्सा, इलेक्ट्रॉनिक, पर्यावरण, कृषि, वस्त्र आदि जैसे क्षेत्रों में किया जाता है।

नेनोपार्टिकल

- नैनोपार्टिकल अल्ट्राफिन पार्टिकल होते हैं जिनका आकार 1 से 100 नैनोमीटर के बीच होता है।

नैनो पार्टिकल्स के गुण

- नेनोपार्टिकल का आकार बहुत छोटा होने के कारण सतह क्षेत्र से आयतन अनुपात बहुत अधिक होता है।
- यह गुण इन्हें अप्रत्याशित भौतिक, रासायनिक एवं प्रकाशित गुण प्रदान करता है।
- उदाहरण के लिए सतह क्षेत्र सेशन विनिमय क्षमता और अयान अवशोषण में वृद्धि होती है।

कृषि में नैनो टेक्नोलॉजी का उपयोग

- नियंत्रित रूप से रिलीज होने वाले नैनो उर्वरक
- नैनो आधारित लक्षण वितरण (जीन स्थानांतरण)
- नैनो कीटनाशक फसलों की सुरक्षा के लिए
- नैनो सेंसर और कंप्यूटरीकृत डिवाइस स्मार्ट निगरानी के लिए
- ननोपार्टिकल्स पौधों में तनाव की सहनशीलता और वृद्धि को बढ़ावा देते है।

नैनो बायो सेंसर

- यह विश्लेषणात्मक उपकरण होते हैं जिनका कोई एक आयाम 100 नैनोमीटर से अधिक नहीं होता।
- यह नैनोकण नैनो ट्यूब नैनो वायर नैनो क्रिस्टल के रूप में बनाए जाते हैं।
- यह नैनोकण नैनो ट्यूब नैनो वायर नैनो क्रिस्टल के रूप में बनाए जाते हैं।
- इनका उपयोग पौधों मिट्टी और जल की निगरानी के लिए किया जाता है।
- भौतिक रासायनिक गुणों का लाभ लेकर यह जैविक और रासायनिक तत्वों की पहचान में सक्षम होती हैं।

नैनो उर्वरक

- ऐसी बात जो नैनो कारों से बने होते हैं या नैनो पार्टिकल्स की मदद से पोषक तत्वों की कुशल आपूर्ति करते हैं नैनो वर्ण और वर्क कहलाते हैं तथा है आज के समय के हिसाब से कम मात्रा में अधिक पोषक तत्व प्रदान करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपाय हैं।

लाभ

- यह पौधों की गुणवत्ता में सुधार करते हैं।
- नैनो उर्वरक मिट्टी की सक्रियता में वृद्धि करते हैं।
- पौधों की जड़ों में संतुलित पोषक तत्व आपूर्ति करते हैं
- पर्यावरण को कम हानि पहुंचाते हैं एवं पर्यावरण के अनुकूल होते हैं।

नियंत्रण तंत्र

- **धीमी रिलीज:** समय के साथ धीरे-धीरे पोषक तत्व छोड़ना चाहिए जिससे कि इसकी अधिकता ना हो।
- **त्वरित रिलीज:** पत्तियों से संपर्क तुरंत इनका छिड़काव करना चाहिए।
- **विशिष्ट रिलीज:** किसी विशिष्ट अनु को लक्ष्य मानकर उसके साथ में हमें ननोपार्टिकल्स को छोड़ना चाहिए तब इस क्रिया को विशिष्ट रिलीज कहते हैं।
- **नमी आधारित रिलीज:** जल की उपस्थिति में ननोपार्टिकल्स का छिड़काव करना।
- **pH आधारित रिलीज:** अम्लीय/क्षारीय हम लिए वातावरण में नैनो उर्वरक का उपयोग करना।

नैनो खरपतवार नाशक

नैनो टेक्नोलॉजी की मदद से तैयार किए गए नैनो आकार के हर विषय जो रासायनिक या जैविक खरपतवारनाशक को प्रभावित ढंग से पहुंचाते हैं। नेनु खरपतवारनाशी कहलाते हैं।

नैनो कीटनाशक

- नैनो कीटनाशक अधिक प्रभावशाली टिकाऊ एवं सक्रिय होते हैं जो नैनो आकर के कानों से बड़ा क्षेत्र प्रभावित करते हैं जिससे कीटों के संपर्क में अधिक मात्रा आती है और इनके परिणाम स्वरूप यह अधिक सफलता पूर्वक कीटों को रोकते हैं।

जैव विविधता का कृषि एवं पर्यावरण पर प्रभाव

इल्मा इस्लाम (शोध छात्रा)
अरुन झा (शोध छात्र)
अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. मौसमी सैयद (सहायक प्राध्यापक)
बीज प्रौद्योगिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

जैव विविधता का तात्पर्य पृथ्वी पर जीवन की विविधता से है, जिसमें प्रजातियों, जीन और पारिस्थितिकी तंत्र की विविधता शामिल है। यह अरबों वर्षों के विकास का परिणाम है और पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता और पर्यावरण विनियमन, जैसे वायु शोधन, कार्बन पृथक्करण और जनसंख्या नियंत्रण के लिए आवश्यक है।

हालांकि, विनाशकारी मानवीय गतिविधियों और बिगड़ते जलवायु संकट के कारण प्रजातियों के विलुप्त होने और खतरे के कारण इस जैव विविधता का नुकसान हो रहा है, जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण के साथ-साथ मानव जाति पर भी दूरगामी परिणाम हो रहे हैं।

जैव विविधता के सकारात्मक प्रभाव

* **खाद्य सुरक्षाः** जैव विविधता से लचीली और टिकाऊ खाद्य फसलों का विकास होता है जो कीड़ों, बीमारियों और जलवायु परिवर्तन के प्रति प्रतिरोधी होती हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा में सुधार होता है.
* **पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं:** जैव विविधता मिट्टी की उर्वरता, प्राकृतिक कीट नियंत्रण, परागण, और जल विनियमन जैसी महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं का समर्थन करती है, जो मानव जीवन के लिए आवश्यक हैं.
* **जलवायु परिवर्तन से निपटने में मददः** जैव विविधता कार्बन को अवशोषित करती है, जिससे जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद मिलती है.
* **मानव कल्याणः** जैव विविधता सांस्कृतिक और मनोरंजक अवसर प्रदान करती है, जो मानव कल्याण में योगदान करती हैं.
* **आनुवंशिक संसाधनः** जैव विविधता में आनुवंशिक संसाधनों का एक विशाल भंडार होता है जो रोग प्रतिरोधक क्षमता और बदलती पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुकूल होने के लिए महत्वपूर्ण हो सकता है.

जैव विविधता के नकारात्मक प्रभाव

* **खाद्य सुरक्षा में कमीः** जैव विविधता में कमी से कृषि उत्पादकता कम हो सकती है और कीटों, बीमारियों और जलवायु परिवर्तन के लिए खाद्य प्रणालियों की भेद्यता बढ़ सकती है.
* **पारिस्थितिक तंत्र की असंतुलनः** जैव विविधता में कमी से पारिस्थितिक तंत्र असंतुलित हो सकते हैं, जिससे कई प्रजातियों के लिए आवास और भोजन की कमी हो सकती है.

जलवायु परिवर्तनः जैव विविधता में कमी से पारिस्थितिकी तंत्र जलवायु परिवर्तन के प्रति कम लचीले हो जाते हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव बढ़ सकते हैं.

मानव स्वास्थ्य पर प्रभावः जैव विविधता में कमी से मानव स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जैसे कि बीमारियों का प्रसार और खाद्य सुरक्षा में कमी.

आर्थिक प्रभावः जैव विविधता में कमी से कई उद्योगों को नुकसान हो सकता है, जो विविध जैविक संसाधनों पर निर्भर करते हैं.

* जैव विविधता हानि के शीर्ष 10 कारण
* जलवायु आवास की हानि और विखंडन
* परिवर्तन
* अत्यधिक शिकार
* अत्यधिक मछली पकड़ना
* आक्रामक प्रजातियाँ
* प्रदूषण * रोग
* आनुवंशिक प्रदूषण
* पारिस्थितिकी तंत्र सरलीकरण
* महासागरीय अम्लीकरण
* पर्यावरण पर जैव विविधता हानि के प्रभाव
* पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता का नुकसान
* पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं में गिरावट
* आनुवंशिक संसाधनों की हानि
* जैव-भू-रासायनिक चक्रों में परिवर्तन
* प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा बढ़ना
* कृषि एवं जैव विविधता

जलवायु पर इसके प्रभावों के अलावा, कृषि के विस्तार ने दुनिया भर में जैव विविधता में भारी नुकसान पहुंचाया हैः प्राकृतिक आवास खेतों और चरागाहों में बदल गए हैं, कीटनाशकों और उर्वरकों ने पर्यावरण को प्रदूषित किया है, और मिट्टी का क्षरण हुआ है। भूमि की सफाई और कृषि उत्पादन में वृद्धि के कारण भविष्य के दशकों में कई पौधों और जानवरों की आबादी विलुप्त होने का सामना करेगी। 12 कृषि पारिस्थितिकी तंत्र भी कम विविध हो गए हैं क्योंकि फसल मोनोकल्चर का उपयोग बढ़ गया है। यहां तक ??कि संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में भी, जैव ईंधन के लिए अधिक भूमि का उपयोग करने के निर्देशों के कारण लाखों एकड़ भूमि को मकई जैसी मोनोकल्चर फसलों में बदल दिया गया है, जो पहले उस भूमि पर नहीं उगाई गई थी।

जैव विविधता कम होने पर खेती को होने वाली हानि

रोग और कीटों का बढ़नाः जब फसलों की विविधता कम होती है, तो एक ही तरह की फसलें उगाई जाती हैं (जैसे मोनोकल्चर), जिससे एक ही तरह के कीट और रोग तेजी से फैलते हैं। इससे फसल की भारी क्षति हो सकती है।

मिट्टी की उर्वरता में कमी

* विविध पौधें मिट्टी से अलग-अलग पोषक तत्व लेती हैं और उसे संतुलित बनाए रखती हैं।
* जब विविधता घटती है, तो कुछ पोषक तत्व ज्यादा खपत हो जाते हैं, जिससे मिट्टी कमजोर हो जाती है।

जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशीलता

* विविधता कम होने पर पूरी खेती एक ही तरह के मौसम पर निर्भर हो जाती है।
* सूखा, बाढ़ या असमय बारिश होने पर पूरी फसल बर्बाद हो सकती है।

परागण करने वाले जीवों की संख्या में गिरावट

* कम विविधता वाले खेतों में मधुमक्खियों और तितलियों जैसे परागण करने वाले जीव नहीं आते।
* इससे फलों और बीजों की उपज घट जाती है।

भविष्य की फसलों का संकट

* जैव विविधता में हजारों प्रकार की फसलें और उनके जंगली रिश्तेदार होते हैं जिनसे भविष्य की बीमारियों और जलवायु चुनौतियों से निपटने वाली किस्में विकसित की जाती हैं।
* यदि विविधता खत्म हो गई तो नई किस्में बनाना मुश्किल हो जाएगा।

पूर्वी उ.प्र. के मैदानी क्षेत्र में चावल विस्फोट रोग मूल्यांकन

'धान की खेती का भविष्य रोग प्रबंधन पर निर्भर है!'

✍ **दुर्गेश्वर सिंह** (परास्नातक छात्र) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

✍ **डॉ. सौरव गोविन्द राव** (सह-प्राध्यापक) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

✍ **अंकुर सिंह** (परास्नातक छात्र) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

✍ **धनंजय** (परास्नातक छात्र) डिपार्टमेंट ऑफ़ प्लांट पैथोलॉजी दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

✍ **डॉ. संजय कुमार** (सह-प्राध्यापक) गुरु काशी विश्वविद्यालय, बठिंडा, (पंजाब)

भूमिका

पूर्वी उत्तर प्रदेश का मैदानी क्षेत्र धान उत्पादन का प्रमुख केंद्र है। हाल के वर्षों में चावल पर "विस्फोट रोग" (Rice Blast Disease) का प्रकोप बढ़ा है, जिससे फसल उत्पादन को गंभीर चुनौती मिली है। इस रोग का वैज्ञानिक मूल्यांकन और नियंत्रण आवश्यक हो गया है।

रोग परिचय

रोग का नाम: चावल विस्फोट रोग
कारक जीव: Magnaporthe oryzae (फफूंद)
प्रमुख प्रभाव: पत्ती, गांठ, बालियों और दानों पर धब्बे एवं नष्ट होना।

पूर्वी उप्र में रोग की वर्तमान स्थिति

बिंदु	विवरण
प्रभावित जिले	गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़, कुशीनगर, बलिया,
प्रकोप का समय	अगस्त से अक्टूबर (खरीफ मौसम)
प्रभावित किस्में	सरजू-52, स्वर्णा, शरबती
उपज हानि	20%- 50% तक

रोग के लक्षण

'पहचानें विस्फोट रोग के संकेत'

- पत्तियों पर धूसर-सफेद धब्बे, किनारे गहरे रंग के।
- गांठ और तनों पर काले रंग के धब्बे।
- बालियाँ सिकुड़ी हुई या खराब दाने।
- पौधों का गिरना और विकास में अवरोध।

प्रसार के कारण

- उच्च आर्द्रता (>90%) और मध्यम तापमान (25-28°C)।
- निरंतर बारिश और बादलों का जमाव।
- संक्रमित बीज और खेत में रोगजनित अवशेष।
- नाइट्रोजन उर्वरक का अत्यधिक प्रयोग।

आर्थिक प्रभाव

- किसानों की आय में 30-40% तक कमी।
- बीज, रसायन और उपचार पर अतिरिक्त लागत।
- स्थानीय बाजारों में चावल की कीमतों में वृद्धि।

नियंत्रण और प्रबंधन रणनीति

(अ) कृषि उपाय

- रोग प्रतिरोधी किस्में अपनाएं।
- संतुलित उर्वरक प्रबंधन।
- फसल चक्र अपनाकर रोग का चक्र तोड़ना।

(ब) जैविक उपाय

- Trichoderma आधारित जैव नियंत्रण का प्रयोग।
- जैविक बीजोपचार।

(स) रासायनिक उपाय

बीजोपचार

कार्बेन्डाजिम 2.5g/kg बीज। रोग लक्षण दिखते ही ट्राइसाइकलाजोल (0.6g/litre) का दो बार छिड़काव।

नवीनतम तकनीकें

"तकनीक से रोग प्रबंधन अब और आसान!"

- सैटेलाइट आधारित पूर्व चेतावनी प्रणाली।
- मोबाइल ऐप से रोग पहचान और सुझाव।
- स्मार्ट खेती के मॉडल का विकास।

भविष्य की दिशा

- क्षेत्रीय रोग सर्वेक्षण प्रणाली का विकास।
- जैव प्रौद्योगिकी आधारित प्रतिरोधी किस्मों का प्रचार।
- किसान प्रशिक्षण कार्यक्रम और सामुदायिक जागरूकता अभियान।

निष्कर्ष

पूर्वी उप्र के खेतों में चावल विस्फोट रोग एक गंभीर संकट है, लेकिन वैज्ञानिक दृष्टिकोण और जागरूकता से इस संकट पर विजय पाई जा सकती है। हमें पारंपरिक ज्ञान और नवीनतम तकनीक के साथ मिलकर खेती को सुरक्षित बनाना होगा।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

वृक्षायुर्वेद शिक्षा: भारतीय समाज पर प्रभाव एवं प्रसार की आवश्यकता

खेता राम सहायक आचार्य (अंतर्विषयक)
वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर
मानद विश्वविद्यालय (डी नोवो) आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. सुमित नत्थानी विभागाध्यक्ष, वृक्षायुर्वेद विभाग
राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर, मानद विश्वविद्यालय
(डी नोवो) आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

लेखक परिचय

राजस्थान के जालोर जिले के नरसाना गांव के निवासी श्री खेता राम ने कृषि शिक्षा में स्नातक स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर से प्राप्त की। तत्पश्चात, उन्होंने राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान (मानद विश्वविद्यालय), जयपुर के वृक्षायुर्वेद विभाग से पादप चिकित्सा शास्त्र (वृक्षायुर्वेद) में स्नातकोत्तर अध्ययन पूर्ण किया। वर्तमान में वे वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर (मानद विश्वविद्यालय, डी नोवो), आयुष मंत्रालय, भारत सरकार में कार्यरत हैं।

वृक्षायुर्वेद: भारतीय ज्ञान परंपरा की अनुपम धरोहर

भारत की समृद्ध आयुर्वेद परंपरा में वृक्षायुर्वेद एक विशिष्ट और प्राचीन शाखा है, जो पौधों के स्वास्थ्य, वृद्धि, संरक्षण तथा उपचार की पद्धतियों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती है। वर्तमान समय में जब पर्यावरणीय असंतुलन, रासायनिक कृषि पर निर्भरता और जैव विविधता का संकट तीव्र हो चला है, वृक्षायुर्वेद की शिक्षा का पुनरुत्थान नितांत आवश्यक हो गया है। वृक्षायुर्वेद केवल पौधों की चिकित्सा प्रणाली नहीं है, बल्कि यह जीवन और प्रकृति के बीच सामंजस्य का शास्त्र है। इसकी शिक्षा सामाजिक, आर्थिक और पारिस्थितिकीय स्तर पर स्थायी विकास का मार्ग प्रशस्त करती है।

वृक्षायुर्वेद क्या है?

यह ज्ञान वैदिक कालीन ग्रंथों जैसे वृक्षायुर्वेद (सुरपाल), कृषिपराशर, बृहत्संहिता आदि में निहित है, जिसमें पौधे के बीज से वृक्ष बनने तक की सम्पूर्ण यात्रा का विस्तृत वर्णन, उनके रोगों की पहचान, उपचार, पोषण और संवर्धन की विधियाँ उल्लिखित हैं।

वृक्षायुर्वेद शिक्षा का महत्व

* वृक्ष रोगों की पहचान एवं पारंपरिक उपचार विधियाँ
* औषधीय पौधों का संरक्षण एवं उनके सतत उपयोग की प्रक्रिया
* जैविक खेती एवं प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित दोहन
* पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में योगदान

(आमलकी वन में वृक्षायुर्वेद विभाग के छात्र को जानकारी देते हुए)

भारतीय समाज पर प्रभाव

कृषक समुदाय में जागरूकता: प्राकृतिक पद्धति से खेती को बढ़ावा

स्वास्थ्य क्षेत्र में योगदान: गुणवत्तापूर्ण औषधीय पौधों की उपलब्धता

पर्यावरणीय लाभ: पारिस्थितिक तंत्र का संरक्षण और पुर्नस्थापन

आर्थिक लाभ: औषधीय पौधों की खेती से स्वरोजगार के अवसर

वर्तमान चुनौतियां

* जनसामान्य में जागरूकता की कमी
* परंपरागत ज्ञान का धीरे-धीरे लुप्त होना
* वैज्ञानिक शोध और दस्तावेज़ीकरण का अभाव
* शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में वृक्षायुर्वेद का सीमित स्थान

राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर में कुलपति प्रो. संजीव शर्मा द्वारा सहायक प्राध्यापक खेता राम का स्वागत करते हुए। साथ में विभागाध्यक्ष व अन्य गणमान्य अतिथि)

प्रसार एवं विकास के उपाय

शैक्षणिक समावेशन: आयुर्वेदिक एवं कृषि संस्थानों में वृक्षायुर्वेद आधारित पाठ्यक्रम

कार्यशालाएँ एवं प्रशिक्षण: ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता एवं प्रशिक्षण शिविर

डिजिटल माध्यमों का उपयोग: वीडियो, पॉडकास्ट, मोबाइल ऐप्स द्वारा जानकारी का प्रचार

नीतिगत समर्थन: सरकारी योजनाओं में वृक्षायुर्वेद आधारित कृषि का समावेश

इंटरनेशनल एक्सचेंज प्रोग्राम्स: अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संस्थानों से साझेदारी

प्राकृतिक चिकित्सा में समावेश: आयुर्वेदिक उपचार केंद्रों एवं औषधीय उत्पाद निर्माण में भागीदारी

शोध को बढ़ावा: शोध संस्थानों के सहयोग से वृक्षायुर्वेद पर गहन अध्ययन, छात्रवृत्तियाँ

हस्तशिल्प एवं विपणन: आयुर्वेदिक उत्पादों के विपणन द्वारा स्वरोजगार के अवसर

स्थानीय कृषि ज्ञान का समन्वय: पारंपरिक कृषि पद्धतियों का आधुनिक तकनीकों से समावेश

स्मार्ट फार्मिंग: ड्रोन, सेंसर तकनीक, और डेटा विश्लेषण आधारित खेती का प्रशिक्षण

देश का प्रथम सरकारी संस्थान राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान मानद विश्वविद्यालय जहां वृक्षायुर्वेद विभाग स्थापित जिसमें मास्टर ऑफ साइंस इन वृक्षायुर्वेद कोर्स करवाया जाता है।

निष्कर्ष

वृक्षायुर्वेद शिक्षा केवल एक पारंपरिक शास्त्र नहीं, बल्कि पर्यावरणीय जागरूकता, सतत विकास और आर्थिक सशक्तिकरण का सशक्त माध्यम है। इसके समुचित प्रचार और शैक्षणिक समावेशन से न केवल कृषि और पर्यावरण को बल मिलेगा, बल्कि भारत को वैश्विक नेतृत्व में एक नई दिशा प्राप्त होगी।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

भिंडी फसल में लगने वाले कीट और उनका प्रबंधन

बबलु शर्मा, शकुन्तला, सैफ अली खान
कीट विज्ञान विभाग, राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान
(एसकेएन कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर) दुर्गापुरा, जयपुर

नानू राम शर्मा कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर

परिचय: भिंडी (एबेलमॉस्चस एसकुलेंटस) जिसे लेडीस फिंगर या भिंडी भी कहा जाता है, माल्वेसी परिवार से संबंधित है और एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल है जिसे पूरे वर्ष उगाया जाता है। भारत के अलावा इसे दुनिया के कई उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। कोमल फलों का उपयोग सब्जियों के रूप में या काटकर और सुखाकर पकवानों में किया जाता है। इसकी उच्च म्यूसीलेज सामग्री के कारण इसका उपयोग ग्रेवी और सूप को गाढ़ा करने के लिए भी किया जाता है। परिपक्व फलों और तनों में कच्चा फाइबर होता है जिसका उपयोग कागज उद्योग में किया जाता है। इसके पोषण मूल्य में विशेष रूप से विटामिन ए, पोटेशियम, कैल्शियम, आयरन और अन्य खनिज जैसे मैग्नीशियम, सोडियम और फास्फोरस, विटामिन बी और सी, वसा और कार्बोहाइड्रेट्स की उच्च सामग्री शामिल है। हमारे देश की उत्पादकता अन्य देशों की तुलना में कम है। जिसका कारण कीटों, बीमारियों और सूत्रकृमि द्वारा उपज में हानि है। इस फसल पर 72 से अधिक कीटों द्वारा हमला होता है प्रोह और फल छेदक, फल छेदक, पत्ती फुदका, सफेद मक्खी, मोयला/चेंपा कीट, लाल कपास कीट, लाल मकड़ी कीट और जड़-गांठ सूत्रकृमि कुछ महत्वपूर्ण कीट हैं जो भिंडी की फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। वर्तमान दस्तावेज़ में कीटों की पहचान, हानि की प्रकृति, प्रबंधन और विभिन्न आईपीएम प्रथाओं पर चर्चा की गई है ताकि फसल को कीटों के नुकसान से बचाया जा सके।

1 प्ररोह और फल छेदक:

कीट की पहचान: प्ररोह और फल छेदक के अंडे आकाशी नीले रंग के होते हैं। सूंडी की पीठ पर सफेद और भूरी धारियों के साथ पेट पर हल्का पीला रंग होता है। वयस्क पतंगों के पंखों की चौड़ाई लगभग 2++-5 सेमी होती है। अग्रपंख हल्के रंग के होते हैं। जिनके मध्य में एक संकीर्ण हल्के हरे रंग की लंबी पट्टी होती है। पूरी तरह से विकसित भूरे-हरे रंग के कैटरपिलर 2 सेमी लंबे होते हैं। जिनमें छोटे मोटे ब्रिसल्स होते हैं और शरीर पर एक श्रृंखला में काले धब्बे होते हैं।

नुकसान के लक्षण: ये कीट आमतौर पर फलो मे बारिश के बाद आर्द्र परिस्थितियों में होते हैं। मादा पतंग अंडो को पत्तियों, फूलों की कलियों और नरम फलों पर देती है। छोटे भूरे कैटरपिलर(सूंडी) ऊपरी नर्म तनों में घुसते हैं और नीचे की ओर सुरंग बनाते हैं जिससे शीर्ष प्ररोह मुरझा जाते हैं और विकास बिंदु मर जाते हैं। बाद में वे फलों में घुसकर अंदर खा जाते हैं। प्रभावित फल उपभोग के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं।

प्रबंधन: प्रभावित फलों और तनों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। अंकुरण के बाद 250 किलोग्राम/हेक्टेयर की दर से नीम की खली डालें और 30 दिन के अंतराल पर दो बार और दोहराएँ। बरसात के मौसम में इंडोक्साकार्ब 14-5 एससी जैसे प्रभावी कीटनाशकों का 0.75 मिली/लीटर या क्लोरट्रानिलीप्रोल 18.50 एससी 0-25 मिली/लीटर की दर से 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। बुवाई के 30 से 35 दिनों बाद अंडे परजीवी ट्राइकोग्रामा चिलोनीस 1-0 लाख/हेक्टेयर 4 से 5 बार साप्ताहिक अंतराल पर प्ररोह और फल छेदक के लिए छोड़ें।

2 भिंडी फल छेदक:

कीट की पहचान: मादा कीट पौधों के कोमल हिस्सों पर अंडे देती है। अंडे गोलाकार और क्रीम रंग के और सूंडी 35×45 मिमी लम्बी तथा हरे से भूरे रंग के बीच रंग भिन्नता दिखाते हैं वयस्क मादा भूरे या पीले-भूरे रंग का पतंग है जिसकी लंबाई लगभग 20 मिमी होती है। इसके अग्रपंखों पर वी आकृति के धब्बे और केंद्र में काले धब्बे होते हैं। पिछला पंख हल्का होता है जिसमें काले किनारे होते हैं।

नुकसान के लक्षण: अंडों से निकलने के बाद युवा सूंडी कुछ समय तक पत्तियों फूलों परभोजन करते हैं और बाद में फलों में गोल छेद कर देते हैं] सूंडी केवल अपने शरीर का एक हिस्सा फल के अंदर डालकर भोजन करते हैं जिसमें उनके शरीर बाहर लटके रहते हैं।

प्रबंधन: संक्रमित फलों और बडी सूंडी (लार्वा)को एकत्रित करके नष्ट करें। फल छेदक वयस्कों को अंडे देने हेतु आकर्षित करने के लिए 40 दिन पुराने अमेरिकी लंबे गेंदा और 25 दिन पुराने टमाटर के पौधे को 1% 10 पंक्तियों में एक साथ उगाएं फूल आने के समय के साथ संयोग करते हुए। अंडे परजीवी ट्राइकोग्रामा चिलोनीस 50000/हेक्टेयर प्रति सप्ताह छह बार रिलीज करें। स्पाइनोसेड 45 एससी 0-35 मिली/लीटर या फ्लुबेंडीएमाइड 39-35 एससी 0-25 मिली/लीटर या बेसिलस थुरिंजियेन्सिस 2 ग्राम/लीटर छिड़कें।

3 सफेद मक्खी:

कीट की पहचान: निम्फ हरे-पीले रंग के] अंडाकार आकार के और वयस्क कीट छोटे शरीर वाले होते हैं] ये 1-0×1-5 मिमी लंबे होते हैं और उनके पीले शरीर पर हल्का सफेद मोम जैसा पाउडर होता है। वयस्क कीट के दो जोड़े शुद्ध सफेद पंख होते हैं। मादा कीट पत्तियों के निचले हिस्से पर अंडे देती है। मौसम की स्थिति के आधार पर पूरा जीवन चक्र 14×100 दिनों में पूरा होता है।

नुकसान के लक्षण: सफेद मक्खियां और निम्फ पत्तियों से कोशिका रस चूसते हैं। प्रभावित पत्तियां मुरझा जाती हैं और सूख जाती हैं। प्रभावित पौधों की वृद्धि रुक जाती है। सफेद मक्खियां येलो वेन मोज़ेक वायरस को भी फैलाने के लिए जिम्मेदार होती हैं। पत्तियों पर क्लोरोसिस धब्बे बनाते हैं पत्तियों के ऊतक का अनियमित पीला होना सफेद मक्खियों द्वारा फैलाया जाने वाला यह रोग आर्थिक रूप से सबसे महत्वपूर्ण रोग है।

प्रबंधन: वैकल्पिक परपोषी खरपतवारो को नष्ट करना। डाइफेनथियुरोन 50 डब्ल्यू पी एक ग्राम/लीटर या डाइमिथोएट 25 ई सी 200 मिली/हेक्टेयर के 4 से 5 पर्ण स्प्रे 10 दिनों के अंतराल पर सफेद मक्खी की जनसंख्या को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करते हैं।

4 मोयला/चेंपा, एफिड:

कीट की पहचान: निम्फ पीले या हरे-भूरे रंग के, पत्तियों की नीचे की सतह पर पाए जाते हैं। वयस्क कीट हरे-भूरे रंग के नरम और छोटे शरीर वाले कीट होते हैं जो पौधों के कोमल हिस्सों और पत्तियों की निचली सतह पर समूह में पाए जाते हैं। वयस्क कीट दोनों पंख वाले और पंख रहित रूपों में होते हैं।

नुकसान के लक्षण: निम्फों और वयस्कों कीट दोनों द्वारा पौधों का रस चूसने से कोमल शाखाओं और पत्तियों की नीचे की सतह पर संक्रमण होता है। गंभीर संक्रमण से पत्तियां मुरझा जाती हैं। पौधों की वृद्धि रुक जाती है और युवा पौधे धीरे-धीरे सूखकर मर जाते हैं। एफिड्स के शहद पर काले कालिख जैसे फफूंद विकसित होती हैं जो पत्तियों पर जमा होती हैं। सूखी परिस्थितियां कीट जनसंख्या की तेजी से वृद्धि को प्रोत्साहित करती हैं और युवा पौधे पुराने पौधों की तुलना में अधिक संवेदनशील होते हैं।

प्रबंधन: संक्रमित टहनियों को काटकर नष्ट कर दें। एलेट वयस्कों की गतिविधियों की निगरानी के लिए पीले चिपचिपे ट्रैप लगाएं। चूर्णित नीम बीज पाउडर अर्क (एनएसपीई 4%)का अच्छी तरह से छिड़काव करें। फूल आने से पहले की अवधि में एसेटामिप्रिड 20 एसपी 100 ग्राम/हेक्टेयर जैसे सिस्टमिक कीटनाशकों का छिड़काव करें।

5 पत्ती फुदका:

कीट की पहचान: मादा कीट पत्तियों के नीचे की सतह पर पीले अंडे देती है और उनसे छोटे कीट निकलते हैं जो कील के आकार के होते हैं और बहुत सक्रिय होते हैं। वयस्क कीट छोटे हरे रंग के होते हैं जो लगभग 3 मिमी लंबा और हरे-पीले रंग का होता है। प्रत्येक अग्र पंख पर एक काला धब्बा और सिर के ऊपर एक काला धब्बा होता है।

नुकसान के लक्षण: निम्फ और वयस्क कीट पत्तियों के नीचे की सतह पर पाए जाते हैं। वयस्क और निम्फ पत्तियों से कोशिका-रस चूसते हैं। इसके परिणाम स्वरूप पत्तियाँ किनारों के साथ ऊपर की ओर मुड़ जाती हैं और उनमें झुलसा हुआ दिखने लगता है, जो पूरे पत्ते के क्षेत्र में फैल जाता है। प्रभावित पौधों की वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है।

प्रबंधन: पत्तियों की निचली सतह पर नीम का 0-5% या चूर्णित नीम बीज चूर्ण अर्क(एनएसपीई)4% का छिड़काव करें। फसल के शुरुआती चरणों में फूल आने से पहले फिप्रोनिल 05 एससी 2 मिली/ली. या फ्लोनिकामिड 50 डब्ल्यूजी 150 ग्राम/हे. जैसे कीटनाशक का छिड़काव करें।

6 लाल कपास कीट:

कीट की पहचान: वयस्क कीट लगभग 1-5 सेंटीमीटर लंबा होता है नर मादा से थोड़ा छोटा होता है। शरीर मुख्यतः लाल रंग होता है लाल रंग के निम्फ के पेट के बीच में 3 काले धब्बों की एक पंक्ति और दोनों किनारों पर 3 सफेद धब्बे होते हैं। और वेंट्रल सतह पर सफेद धारियां होती हैं। अग्र पंख आधे (सामने) लाल-भूरे होते हैं और प्रत्येक पर एक काला बिंदु होता है जबकि पिछले पंख पूरी तरह से काले होते हैं। आँखें, एंटीना और पैर काले रंग के होते हैं।

नुकसान के लक्षण: दोनों निम्फ और वयस्क कीट पत्तियों और फलों का रस चूसते हैं। पौधे कमजोर और ठिगने हो जाते हैं, पत्तियां और फल मुड़ सकते हैं।

प्रबंधन: मोनोक्रोटोफॉस 36 स्रएक मिली/लीटर का छिड़काव करें, पत्ती फुदका की तरह ही प्रबंधन करें।

7 लाल मकड़ी

कीट की पहचान: ये आकार में बहुत छोटे होते हैं और रंग में भिन्न होते हैं (हरा, हरा-पीला, भूरा, या नारंगी-लाल) और शरीर पर दो काले धब्बे होते हैं। अंडे गोल, सफेद या क्रीम रंग के होते हैं जीवन चक्र एक से दो सप्ताह में पूरा होता है। साल में कई पीढ़ियाँ होती हैं। वयस्क तीन से चार सप्ताह तक जीवित रहते हैं।

नुकसान के लक्षण: लाल मकड़ी का संक्रमण ज्यादातर गर्म और शुष्क मौसम के दौरान देखा जाता है। निम्फ और वयस्क कीट पत्तियों से कोशिका रस चूसते हैं जिससे पत्तियों पर सफेद-धूसर धब्बे दिखाई देते हैं। प्रभावित पत्तियां भूरे रंग कि व धब्बेदार होकर अंत मे गिर जाती हैं। गंभीर संक्रमण में पौधे के शीर्ष भाग पर मकड़ी के जाले होते हैं। मकड़ी से संक्रमित पौधों को उनकी पत्तियों की ऊपरी सतह पर बने विशिष्ट धब्बों से दूर से पहचाना जा सकता है।

प्रबंधन: गीले सल्फर 80 डब्ल्यूपी (2 ग्राम/लीटर पानी) या डिकॉफोल 18-5 ई सी (2-5 मिली/लीटर पानी)या स्पाइरोमेसीफेन 22-9 एससी 400 मिली को 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से लाल मकड़ी का प्रभावी नियंत्रण होता है।

8 जड़-गांठ सूत्रकृमि: जड़-गांठ सूत्रकृमि जड़ों में प्रवेश करता है जिससे जड़ों में विशिष्ट गांठें या गॉल्स बनती हैं। ऊपरी लक्षणों में मुख्य रूप से पौधों की वृद्धि में रुकावट और पत्तियों का पीला होना शामिल है। जिससे फसल का वृद्धि कम हो जाती है।

प्रबंधन: सांस्कृतिक नियंत्रण विधियां जैसे कि वैकल्पिक परपोषी फसलों के अवशेषो को हटाना, परती भूमि रखना, फसल चक्र अपनाना और गर्मी के महीनों में 2 से 3 बार गहरी जुताई की सिफारिश की जाती है। अंकुर अवस्था में पौधे को बचाने के लिए बुवाई से पहले सिंचाई के साथ निमागोन(30 लीटर/हे.)का प्रयोग करने की सिफारिश की जाती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

गोपीचंद सिंह, कल्पना चौधरी एवं राकेश गुर्जर कृषि विज्ञान केन्द्र, अठियासन, नागौर, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)

वैज्ञानिक खेती से आम की गुणवत्ता और उत्पादन में बढ़ोतरी

आम भारत का एक प्रमुख और लोकप्रिय फल है, जिसे हमारे देश का राष्ट्रीय फल भी माना जाता है। दुनिया में आम का सबसे अधिक उत्पादन भारत में ही होता है। इसकी खेती देश के लगभग सभी हिस्सों में की जाती है, और भारत में फलों के कुल क्षेत्रफल का आधे से अधिक भाग आम की बागवानी के अंतर्गत आता है।

जलवायु : आम की फसल का अच्छा उत्पादन लेने हेतु जलवायु का अनुकूल होना अति आवश्यक है। आम की खेती उष्ण एंव समशीतोष्ण दोनों प्रकार की जलवायु मे इसकी खेती की जाती है जैसे - तापमान मे उतार -चढ़ाव वर्षा आँधी आदि, आम के उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है। आम के पौधे 5 सेंटीग्रेट से लेकर 44 सेंटीग्रेट तापमान वाले क्षेत्रें मे भी पनपते है लेकिन 23.8 सेंटीग्रेट से 26.6 सेंटीग्रेट तापमान आम के पौधों के लिए उपयुक्त माना जाता है।

मिट्टी : आम की खेती लगभग सभी प्रकार की भूमियों मे की जा सकती है लेकिन कार्बनिक पदार्थ युक्त दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6 से 7.5 के बीच वाली मृदा अच्छी रहती है। आम की खेती हेतु क्षारीय, लवणीय एंव पथरीली भूमि अच्छी नहीं होती है।

आम की उन्नत किस्में : देश में आम की लगभग 1500 से अधिक प्रजातियां पाई जाती है। **उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक आम की खेती होती है कुछ अच्छी गुणवत्ता वाली किस्मों का चुनाव करे जो इस प्रकार हैः-**

मल्लिकाः मल्लिका आम का स्वाद बेहद पसंद आता है इसके साथ ही पोषक तत्वों से भरपूर होता है। यह प्रजाति केन्द्रीय उपोष्ण वागवानी संस्थान रहमानखेड़ा लखनऊ से निकली गयी है।

पूसा प्रतिभाः आम की पूसा प्रतिभा किस्म के छिल्का हल्का लाल ओर गूदे नारंगी होते है इसका फल करीव 180 से 200 ग्राम तक का होता है यह किस्म जुलाई के शुरुआत मे पककर तैयार हो जाती है यह प्रजाति भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान पूसा नई दिल्ली से निकाली गई है

पूसा श्रेष्ठः आम की पूसा श्रेष्ठ किस्म रसदार ओर खाने मे बहुत अच्छी एक हाइब्रिड प्रजाति है इसके फल का वजन लगभग 228 ग्राम तक होता है यह प्रजाति भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान पूसा नई दिल्ली से निकाली गई है

पूसा पीताम्बरः इस किस्म के पौधे मध्यम आकर के तथा नियमित फल देते है एंव इस पर गुच्छा रोग कम आता है। फलों का रंग आकर्षक पीला तथा अच्छी खुशबू होती है। यह प्रजाति भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा नई दिल्ली से निकाली गई है।

आम्रपालीः आम्रपाली आम की एक संकर किस्म है। यह अपने मीठे स्वाद, चमकीले नारंगी रंग हेतु जानी जाती हैं। यह किस्म कम रखरखाव, उच्च उत्पादन ओर फलों की अच्छी गुणवत्ता के कारण घर के बगीचों ओर व्यावसायिक बागों दोनों के लिए लोकप्रिय है।

पूसा अरुणिकाः आम की यह संकर किस्म है। यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा नई दिल्ली से निकाली गई है। इसके फल चमकदार लाल त्वचा ओर मीठे स्वाद के साथ ही यह रोग-प्रतिरोध किस्म है।

अर्का सुप्रभात (एच -14): यह किस्म भारतीय बागवानी अनुसन्धान संस्थान बैंगलोर से विकसित की गयी है। यह अधिक उपज देने वाली संकर किस्म है। इस किस्म के पौधे 4 साल बाद फल देना शुरू कर देते है जिसके प्रत्येक पेड़ से लगभग 40 -50 किलोग्राम फल प्राप्त होते है।

अल्फांसोः यह किस्म अपनी सुगंध मलाइदार बनावट ओर समृद रंग के लिए जानी जाता है। इस किस्म को आमों का राजा कहा जाता हैं ।

दशहरीः यह एक लोकप्रिय किस्म हैं जो अपने मीठे स्वाद और सुगंध हेतु जानी जाती है।

बाग लगाने हेतु गडढो की की तैयारी : आम का बाग लगाने से पहले खेत की गहरी जुताई करके पाटा लगाकर खेत को समतल कर ले इसके बाद मई -जून के महीने मे 10× मी.10 × मी. की दूरी पर 1×1×1 मी. आकार के गड्ढे खोदकर तैयार करें। आम्रपाली किस्म के लिए 2.5 मी.ग 2.5 मी. पर गढ्डे तैयार किये जाते है ओर गडढे को रोपाई से 20 -25 दिन पहले गड्ढों से निकली मिट्टी ओर अच्छी सड़ी गोबर की खाद मिलाकर भर दे। वर्षा शुरू होने के बाद जब गडढे मे भरी गयी मिट्टी पूर्णतया बैठ जाये तो पौधों की रोपाई करें। पौधों की रोपाई का कार्य जुलाई व अगस्त के महीने में किया जाता हैं। आम के पौधों को लगाने के लिए पूरे देश मे वर्षा ऋतु उपयुक्त मानी जाती है क्योंकि इन दिनों वातावरण मे नमी होती है।

खाद तथा उर्वरक प्रबंधन : आम के पौधों से अच्छा उत्पादन लेने हेतु संतुलित मात्रा मे खाद तथा उर्वरको का प्रयोग करें। आम का बगीचा लगाने से पहले यदि संभव हो सके तो मिट्टी की जाँच करा लें। जिससे पता चल जाएगा कि जमीन में किन-किन पोषक तत्वों की कमी है उसी के आधार पर खाद तथा उर्वरक का प्रयोग करें। जुलाई -अगस्त मे पौधे लगाने के 1 साल बाद खाद तथा उर्वरको को निम्न प्रकार से देना चाहिए खाद तथा उर्वरको का प्रयोग पेड़ के चारो ओर थाला बनाकर करना चाहिए। गोबर की खाद, फॉस्फोरस एंव पोटाश उर्वरक तथा नाइट्रोजन उर्वरकों की आधी मात्रा अक्टूबर महीने में व शेष नाइट्रोजन की मात्रा फल तुड़ाई के बाद जून -जुलाई के महीने मे दें।

सिंचाईः बाग में पौधे लगाने के बाद पौधों की आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें। उत्तर भारत में फलदार वृक्षों में अक्टूबर से जनवरी तक सिंचाई नहीं करनी चाहिए। पौधों में फूल आने के समय सिंचाई नहीं करनी चाहिए जब फल मटर के दाने के बराबर हो जाए तो सिंचाई करनी चाहिए। गर्मियों में 10-12 दिनों के अंतराल पर और सर्दियों में 25 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें

बाग में निराई गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रणः पौधों से अच्छा उत्पादन लेने हेतु समय-समय पर निराई गुड़ाई एवं खरपतवारों का नियंत्रण करना बहुत जरुरी होता है अन्यथा पौधों की वृद्धि एव फलत पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वर्ष में दो बार निराई- गुड़ाई करे से खरपतवार तथा भूमिगत कीट नष्ट हो जाते हैं साथ ही साथ समय पर घास फूस निकालते रहने से बगीचा स्वच्छ रहेगा और कीट तथा बीमारियों का प्रकोप कम होता है।

फलों की तुड़ाई एवं उपज : आम के पौधे चार से पांच वर्ष के होने पर फल देना आरंभ कर देते हैं और 10 से 15 वर्ष पुराने पौधे से लगभग 1000 से 3000 तक फल प्राप्त होते हैं। फलों की तुड़ाई फल की परिपक्वता को देखकर की जाती है तुड़ाई के समय ध्यान रखें। फलों को किसी प्रकार की चोट न लगे तथा फल डंठल (2 -3 सेंटीमीटर) सहित तोड़े जाये

कीट एव रोग नियंत्रणः आम के पौधों से अच्छा उत्पादन लेने के लिए कीट एव रोगो का समय पर नियंत्रण करना बेहद जरुरी होता है। अन्यथा उपज कम हो जायेगी। **आम फसल मे लगने वाले कीट एवं रोग निम्न प्रकार है**

आम के प्रमुख रोग

1. कोयली रोगः यह रोग आम के बागानों में एक गंभीर समस्या के रूप में देखा जाता है। इसके कारण लगभग 25% तक उत्पादन घट सकता है।

लक्षणः * फलों का निचला सिरा पहले मुलायम होकर काला पड़ जाता है। * बाद में यह भाग सख्त और कड़ा हो जाता है। * यह मुख्य रूप से बोरान की कमी से होता है।

रोकथामः फूल आने से पहले बोरेक्स 0.6ः (500 लीटर पानी में घोलकर) का छिड़काव करें।

चूर्णी फफूंदः यह रोग दिसंबर से मार्च के बीच दिखाई देता है और आम के उत्पादन में 22-90% तक की गिरावट कर सकता है।

लक्षणः * नई पत्तियों के दोनों ओर अनियमित भूरे धब्बे बनना। * फूलों, फलों और पत्तियों पर सफेद चूर्ण जैसी परत जमना। * फूल सूखकर झड़ जाते हैं।

रोकथामः * रोगग्रस्त पत्तियों और टहनियों को तोड़कर नष्ट करें। * कैराथेन 0.1% या वेटेबल सल्फर 0.25% का फूल आने से पहले छिड़काव करें। * फल बनने के बाद 15-15 दिन के अंतराल पर दोहराएं।

अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोगः यह रोग अल्टरनेरिया नामक फफूंद से होता है।

लक्षणः * पत्तियों पर भूरे रंग के गोल धब्बे बनते हैं, जो बाद में पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं। * पत्ती की निचली सतह पर लक्षण ज्यादा स्पष्ट होते हैं। * प्रभावित पत्तियाँ समय से पहले झड़ जाती हैं।

रोकथामः * कॉपर आधारित फफूंदनाशक का नियमित अंतराल पर छिड़काव करें। * रोगग्रस्त पौध भागों को इकट्ठा कर जला देना चाहिए।

आम के प्रमुख कीट

आम की भुनगा

लक्षणः * कोमल टहनियों, फूलों और फलों का रस चूसती है, जिससे फूल झड़ जाते हैं।

रोकथाम * इमिडाक्लोप्रिड 0.005% या थायमेथोक्साम का छिड़काव करें।

फल मक्खी

लक्षणः * फल में अंडे देकर उसे सड़ाती है; फल जल्दी गिरने लगते हैं।

रोकथामः * फेरोमोन ट्रैप लगाएँ; संक्रमित फलों को नष्ट करें; इमिडाक्लोप्रिड 0.005% का छिड़काव करें।

3. तना छेदक

लक्षणः * तनों में छेद बनाकर सुरंगें बनाता है, जिससे पौधा कमजोर हो जाता है।

रोकथामः * छेदों में कीटनाशक का घोल भरें और मिट्टी से बंद कर दें; संक्रमित शाखाएँ काटकर नष्ट करें।

✍ **पिंकी शर्मा, बृजेश** पौध व्याधि विभाग
(राजस्थान कॉलेज आफ एग्रीकल्चर उदयपुर)

✍ **कविता कांसोटिया** पौध व्याधि विभाग
(श्रीकर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर)

अफीम की खेती की उन्नत तकनीक

अफीम (पेपवर सोमनिफेरम एल.) एक महत्वपूर्ण व्यापारिक औषधीय फसल है। भारत में इसकी खेती अफीम एवं बीजों के लिए की जाती है। अफीम पोस्त के डोडों से प्राप्त की जाती है। यह एक औषधीय पौधा है। अफीम सफेद रंग के सूक्ष्म गोल, मधुर और स्निग्ध दाने बीज के रूप में होते है जिसे हम आमतौर पर खसखस के नाम से जानते हैं। इसमें विशिष्ट प्रकार की तीव्र गंध होती है, जो स्वाद में तीखी होती है।

उपयोगिता एवं महत्व: यह एक औषधीय पौधा है अम का प्रयोग विभिन्न प्रकार की दवाइयों को बनाने में किया जाता है। यह एक मादक पदार्थ है इसका प्रयोग नशे के लिए भी किया जाता है जो काफी हानिकारक है। इसमें चीरा लगाने से एक गाढ़ा दूध निकलता है उसे इकठ्ठा करके सुखा लिया जाता है। यही व्यावसायिक या औषधि अफीम है। सूखने के बाद अफीम गम का प्रयोग कई प्रकार की दवाईयों में किया जाता है। अफीम का दूध जो कि इसके संपुट (डोडों) से चीरा लगाकर प्राप्त किया जाता है। अफीम के दूध में 40 प्रकार के एल्केलाइड्स पाये जाते हैं। इसलिये इनका उपयोग रोगियों को नींद के लिये, चित्त को स्थाई करने, दर्द को कम करने हेतु तथा कैंसर व सिर में चोट से उत्पन्न दर्द को ठीक करने में प्रयोग किया जाता है। अफीम का दूध जो कि इसके संपुट (डोडों) से चीरा लगाकर प्राप्त किया जाता है। अफीम में औषधीय उपयोग हेतु एल्केलाइड्स की मात्रा पायी जाती है इनमें मुख्यतः मॉफिन (7द17 प्रतिशत), कोडिन (2.1-4.4 प्रतिशत) थिबेन (1.0-30 प्रतिशत) नारकोटिन (3.द10.0 प्रतिशत) व पेपवरिन (0.5द3.0 प्रतिशत) है। इस एल्केलाइड्स का प्रयोग दर्द निवारक व विभिन्न प्रकार की दवाइयों के निर्माण में होता है तथा शेष प्रजातियां बगीचों में सजावटी पौधों के रूप में उगाई जाती है। अफीम के दानों में लगभग 42द52 प्रतिशत तेल पाया जाता है, जिनमें लिनोलिक अम्ल की मात्रा बहुत अधिक 68 प्रतिशत तक होती है। अतः यह मनुष्यों के खून में कोलेस्ट्रोल की मात्रा को कम करता है। विश्व में औषधीय प्रयोग के लिये इसकी खेती भारत, पूर्व सोवियत संघ, मिश्र, यूगोस्लाविया, चेकास्लोवाकिया, पोलेण्ड, जर्मनी, नीदरलैण्ड, चीन, जापान, अर्जेन्टीना, स्पेन, बुल्गारिया, हंगरी एवं पुर्तगाल में होती है। अफीम की खेती भारत में राजस्थान के झालावाड़, बारां, चित्तौड़गढ़, प्रतापगढ़, भीलवाड़ा, मध्यप्रदेश के नीमच, मन्दसौर, रतलाम क्षेत्र तथा उत्तरप्रदेश के फैजाबाद, बाराबंकी, बरेली, शाहजहाँपुर क्षेत्र में दाने तथा अफीम दूध के उत्पादन के लिये भारत सरकार के अधीन केन्द्रीय नारकोटिक्स ब्यूरो द्वारा जारी पट्टे के आधार पर की जाती है।

अनुकूल जलवायु: अफीम एक समशीतोष्ण जलवायु वाली फसल है, लेकिन इसे उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सर्दियों के दौरान सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। ठंडी जलवायु इसकी उपज को बढ़ा देती है, जबकि दिन और रात के उच्च तापमान आमतौर पर उपज को प्रभावित करते हैं। ठंढा या शुष्क तापमान, बादल या बरसात का मौसम न केवल उत्पादन को कम करता है बल्कि अफीम की गुणवत्ता को भी कम करता है।

उपयुक्त मिट्टी: अफीम उत्पादन के लिए एक अच्छी जल निकासी वाली, अत्यधिक उपजाऊ हल्की काली या दोमट मिट्टी जिसका इष्टतम चभ् लगभग 7.0 हो, अफीम उत्पादन के लिए उपयोगी है।

प्रमुख उन्नत किस्में: अब तक किसान की स्थानीय प्रजातियाँ जैसे काली डाण्डी, सफेद डाण्डी, सुया पंखा, रणजटक, तेलिया, धोलिया इत्यादि का प्रयोग करते आ रहे हैं जिनकी उत्पादन क्षमता कम है व रोगों के प्रतिरोधक क्षमता भी कम पायी जाती है। भारत में कृषि अनुसंधानों से नवीनतम किस्मों का विकास किया गया है तेलिया, रनजटक, धोला चोटा गोटिया, एम.ओ.पी.-3, एम.ओ. पी.-16 (जवाहर अफीम -16), शामा, श्वेता, कीर्तिमान (एन.ओ.पी.-4), चेतक (यू.ओ.-285), तृष्णा (आई.सी.-42) एवं जवाहर अफीम-540 (जे.ओ.पी.-540)

जमीन कैसे तैयार करें: मिट्टी को अच्छी तरह से बारीक करने के लिए खेत की 3 या 4 बार जुताई करनी चाहिए। तब खेत में एक सुविधाजनक आकार का क्यारियाँ तैयार किया जा सकता है।

बुवाई: अफीम के बीजो को या तो प्रसारण विधि से या पंक्तियों में बोया जाता है। प्रसारण से पहले बीज को आमतौर पर महीन रेत के साथ मिलाया जाता है ताकि बीज क्यारियों में समान रूप से फैल जाए।

बीज उपचार : बुवाई से पहले, बीजों को फफूंदनाशकों जैसे डाइथेन एम -45 / या मेटालेक्सिल 35: डब्ल्यू.एस. 4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के साथ उपचारित किया जा सकता है।

बुवाई का समय: बुवाई का सबसे अच्छा समय अक्टूबर के अंत या नवंबर की शुरुआत है। प्रसारण विधि के लिए बीज दर 7-8 किग्रा/हेक्टेयर और लाइन बुवाई के लिए 4-5 किग्रा/हेक्टेयर है।

बुवाई की विधि: अफीम की बुवाई दो प्रकार से य नेकी छिड़काव विधि से या कतारों में की जाती है। किन्तु कतारों में बुवाई करना ज्यादा उपयुक्त रहता है क्योंकि इस विधि से निराई-गुड़ाई अफीम में चीरा लगाना एवं अफीम लूने व कटाई करने में आसानी रहती है। इसमें बीजों का अंकुरण 8 से 10 दिनों में पूर्ण हो जाता है। कतारों में बुवाई के लिए पंक्ति की दूरी 30 सेंमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंमी. होनी चाहिये। एक हेक्टर क्षेत्र के लिये अफीम में पौधों की संख्या लगभग 3.33 लाख होनी चाहिये। अंकुरण के 30-35 दिन पश्चात् फालतू तथा घने पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंमी. कर देनी चाहिये। छिटकवां विधि में बीज को समतल क्यारियों में समान रूप से हाथ से बिखेर कर रेक द्वारा मिट्टी में मिला देना चाहिये। इसके बीज बहुत छोटे होते हैं, इसलिये बीजों पर अधिक मिट्टी नहीं आनी चाहिये वरना अंकुरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है एक जैसी बुवाई हेतु बीज के साथ आठ से दस गुना सूखी मिट्टी तथा रेत मिला देना चाहिये ।

बुवाई के बाद: मिट्टी की नमी के आधार पर अंकुरण में पांच से दस दिन लगते हैं। पौधे की एकसमान और बेहतर वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए थिनिंग एक महत्वपूर्ण फसल गतिविधि है। यह आमतौर पर तब किया जाता है जब पौधे 5-6 सेंटीमीटर ऊंचे होते हैं और पौधे में 3-4 पत्तियां होती हैं। जब तक पौधा 14 से 15 सेमी की ऊंचाई तक नहीं पहुंच जाता, तब तक इसे पतला किया जाता है। यह प्रक्रिया 3-4 सप्ताह की अवधि में की जाती है।

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन: अफीम खाद और उर्वरकों के उपयोग के लिए उल्लेखनीय रूप से प्रतिक्रिया करता है, जिससे अफीम की उपज और गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होती है। खेत की जुताई के समय, प्रसारण विधि द्वारा खेत को 20-30 टनध्हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद दी जाती है। इसके अलावा, 60- 80 किग्रा एन और 40-50 किग्रा च2 व्5 प्रति हेक्टेयर की सिफारिश की जाती है। इसमें पोटाश का उपयोग नहीं किया जाता है। छ का आधा और पूरा च् खेत में लगाने की विधि से बुवाई के समय और छ का शेष आधा रोसेट अवस्था में दिया जाता है।

खरपतवार नियंत्रण और छटाई : खरपतवार नियंत्रण एवं छटाई की पहली क्रिया बुवाई के 25-30 दिनों बाद तथा दूसरी क्रिया 35-40 दिनों बाद रोग व कीटग्रस्त एवं अविकसित पौधे निकालते हुए करनी चाहिए। अन्तिम छटाई 50-50 दिनों बाद पौधे से पौधे की दूरी 8-10 से.मी. रखते हुए करें।

सिंचाई प्रबंधन: अफीम की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए एक हल्की सिंचाई बुवाई के तुरंत बाद और दूसरी हल्की सिंचाई बीज के अंकुरित होने के 7 दिन बाद करनी चाहिए। फूल आने से पहले 12 से 15 दिनों के अंतराल पर तीन बार सिंचाई करनी चाहिए और फिर फूल आने और कैप्सूल बनने की अवस्था में सिंचाई की बारंबारता 8-10 दिनों तक करनी चाहिए। आम तौर पर, पूरी फसल अवधि के दौरान 12-15 सिंचाइयां दी जाती हैं। फलने और लेटेक्स निष्कर्षण चरण के दौरान नमी की कमी से पैदावार में काफी कमी आती है।

चीरा लगाना एवं अफीम लूना/इकठ्ठा करना: अफीम के पौधे के संपुट (डोडे) के बाहरी सतह पर चीरा लगाकर अफीम इकट्ठी की जाती है। डोडों में 70 प्रतिशत तक मॉर्फिन व अन्य एल्केलाइड्स पाये जा है। फूलों की पंखुडिया गिरने के 15 दिन बाद पके हुए हरे डोडे पर चीरा लगाया जाता है। चीरा लगाने का कार्य दोपहर बाद (3 बजे बाद) तथा डोडों पर चीरा लगने के लिये 3-4 नोक नश्तर का प्रयोग किया जाता है। चीरा लगाते समय यह ध्यान रखते हैं कि चीरें की गहराई 0.5 से 1.00 मिमी. रहे। अफीम के प्रत्येक डोडे पर सामान्यतया 3-5 चीरें लगाये जाते है तथा दूसरा चीरा एक दिन छोड़कर अर्थात् प्रथम चीरें लगाने का कार्य बंद रखना चाहिये। चीरा लगाने के दूसरे दिन अफीम डोडे से सुबह जल्दी खुरज कर इकट्ठा की जाती है। सुबह जल्दी हवा में अधिक आद्रता एवं कम तापमान में वृद्धि व आर्द्रता कम होने पर अफीम का दूध सूखकर डोडे पर चिपक जाता है जिससे अफीम लूने में कठिनाई रहती है। प्रत्येक डोडे से प्रथम चीरें में अधिक अफीम का स्त्राव होता है। उसके बाद धीरे-धीरे चीरें बढ़ने पर स्त्राव कम होता जाता है। डोडों से अफीम इकठ्ठा कर लेने के बाद डोडों को पौधों पर 15-20 दिन तक सूखने दिया जाता है।

कटाई और थ्रेसिंग: फसल को लगभग 20-25 दिनों हेतु सूखने के लिए छोड़ दिया जाता है जब कैप्सूल से लेटेक्स रिलीज आखिरी बार बंद हो जाता है। उसके बाद कैप्सूल को तोड़ा जाता है और पौधे के बचे हुए हिस्से को काट दिया जाता है। एकत्र किए गए कैप्सूल को फिर खुले मैदान में सुखाया जाता है और बीजों को लकड़ी के डंडों से पीटकर एकत्र किया जाता है। कच्ची अफीम की उपज 50 से 60 किग्रा/हे. होती है।

अफीम की खेती के लिए लाइसेंसिंग प्रक्रिया: केंद्रीय नारकोटिक्स विभाग लाइसेंसिंग प्रक्रिया को पूरा करता है, और अफीम की उपज भी खरीदता है। इससे पहले भारत के अन्य राज्यों में अफीम उगाने के कई प्रयास किए गए, लेकिन प्रतिकूल मौसम के कारण सफल नहीं हो सके। इसलिए उन राज्यों के किसानों के लाइसेंस रद्द कर दिए गए। वर्तमान में, यह केवल मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश और राजस्थान राज्यों में उगाया जाता है। यह लाइसेंस केवल उन्हीं किसानों को दिया जाता है जो पहले से ही सरकारी नियमों का पालन करते हुए अफीम की खेती कर रहे हैं। पात्र किसानों को एक वर्ष के लिए लाइसेंस दिया जाता है और एक वर्ष के बाद फिर से एक नया लाइसेंस जारी किया जाता है। अफीम नीति के तहत सरकार लाइसेंस देती है, इस लाइसेंस के लिए कोई आवेदन जमा करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि पहले से मौजूद रिकॉर्ड के आधार पर लाइसेंस दिया जाता है।

राजस्थान में जलवायु परिवर्तन: प्रभाव, आंकड़े, चुनौतियां एवं अनुकूलन रणनीतियां

ऋचा सचान (सहायक प्राध्यापक) प्रसार शिक्षा, कृषि महाविद्यालय जोधपुर, कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर, (राजस्थान)

स्नेहा सिंह (सहायक प्राध्यापक) कृषि प्रसार विभाग, राष्ट्रीय किसान कॉलेज शामली (उ.प्र.)

परिचय: 21वीं सदी में जलवायु परिवर्तन केवल वैज्ञानिक विमर्श का विषय नहीं, बल्कि मानव अस्तित्व से जुड़ा हुआ एक गंभीर संकट बन चुका है। इसके प्रभाव पृथ्वी के प्रत्येक कोने में महसूस किए जा रहे हैं, और भारत जैसे विकासशील देश इसके प्रतिकूल प्रभावों से अछूते नहीं हैं। राजस्थान, जो कि भौगोलिक दृष्टि से एक शुष्क और अर्ध-शुष्क राज्य है, जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से सबसे अधिक संवेदनशील राज्यों में आता है। यहाँ की भौगोलिक विषमता, सीमित जल संसाधन, वर्षा पर निर्भर कृषि, और जैव विविधता इस चुनौती को और भी गहरा बनाते हैं। यह लेख राजस्थान में जलवायु परिवर्तन के बहुआयामी प्रभावों की वैज्ञानिक, सांख्यिकीय एवं सामाजिक दृष्टिकोण से समीक्षा करता है। साथ ही यह उन नीतिगत सुझावों और सामुदायिक रणनीतियों की भी चर्चा करता है जो इस संकट से निपटने में प्रभावी सिद्ध हो सकती हैं।

राजस्थान में जलवायु परिवर्तन के रुझान

तापमान में वृद्धि: पिछले कुछ दशकों में राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में औसत वार्षिक तापमान में निरंतर वृद्धि देखी गई है। शर्मा और सहकर्मियों (2021) के अनुसार, 1971 से 2019 के बीच न्यूनतम और अधिकतम तापमान में क्रमशः 1.4 डिग्री और 1.2 डिग्री की वृद्धि हुई है। बाड़मेर, बीकानेर और जैसलमेर जैसे जिलों में ग्रीष्म ऋतु में तापमान 50 डिग्री सें. तक पहुँच गया है। यह केवल मनुष्यों के लिए नहीं, बल्कि पशु-पक्षियों और कृषि उत्पादन के लिए भी विनाशकारी है।

वर्षा में अनियमितता और तीव्रता: मीणा और बिष्ट (2020) का अध्ययन दर्शाता है कि राज्य में मानसून की अनिश्चितता बढ़ रही है। औसत वार्षिक वर्षा में भारी उतार-चढ़ाव देखा गया है, और वितरण की विषमता के कारण कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं। 2013 की रिपोर्ट के अनुसार 85% वर्षा मानसून काल में होती है, लेकिन यह अवधि अब संक्षिप्त और तीव्र हो गई है।

सूखा की पुनरावृत्ति: जलवायु परिवर्तन से राजस्थान में सूखा की आवृत्ति बढ़ी है। उपाध्याय (2014) के अनुसार, औसतन हर तीसरे वर्ष राज्य के एक बड़े भूभाग को सूखा प्रभावित घोषित किया जाता है। इससे फसलें, पशुपालन, और पेयजल की उपलब्धता गंभीर रूप से प्रभावित होती है।

कृषि और खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव: राज्य की 60% से अधिक जनसंख्या आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है, जो वर्षा पर आधारित है। जलवायु परिवर्तन के कारण फसल चक्रों में परिवर्तन, कृषि जैव विविधता में कमी, कीट एवं रोगों की नई प्रजातियों का प्रकोप और उत्पादन लागत में वृद्धि जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं। सिंह एवं कुमार (2014) के अनुसार, पश्चिमी राजस्थान में वर्षा आधारित खेती में 20-25% तक की पैदावार में गिरावट आई है। चना, सरसों, गेहूं और बाजरा जैसी फसलों की उत्पादकता विशेष रूप से प्रभावित हुई है। उच्च तापमान और अनियमित वर्षा के कारण बीज अंकुरण, फूलन और फलन की प्रक्रिया प्रभावित हो रही है।

जल संसाधनों पर प्रभाव: राजस्थान के 33 में से 22 जिले जल संकट की गंभीर स्थिति से गुजर रहे हैं। भूजल स्तर औसतन 0.5 मीटर प्रति वर्ष की दर से नीचे जा रहा है। फ्रॉमेन और सहकर्मियों (2021) के अनुसार, जयपुर के बाहरी इलाकों में भूजल पर मानवजनित और भौगोलिक प्रभाव बढ़ते जा रहे हैं। वर्षा जल संचयन प्रणाली की उपेक्षा और पारंपरिक जल स्रोतों की उपेक्षा ने संकट को और बढ़ाया है।

पारिस्थितिकी और जैव विविधता पर प्रभाव

थार मरुस्थल और मरुस्थलीकरण: थार मरुस्थल में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से वनस्पति आवरण में उल्लेखनीय गिरावट आई है। इससे न केवल मिट्टी का कटाव और मरुस्थलीकरण बढ़ा है, बल्कि स्थानीय तापमान और वायुमंडलीय नमी में भी गिरावट दर्ज की गई है। पूणिया (2023) के अनुसार, अधिक गर्मी और वर्षा की अनिश्चितता ने चरागाहों को प्रभावित किया है। मेहरोत्रा और सहकर्मी (1991) के अनुसार, 1990 के बाद वनस्पति घनत्व में 12% तक की गिरावट आई है।

पशु स्वास्थ्य: शर्मा और सहकर्मी (2024) ने दर्शाया कि हीट स्ट्रेस के कारण पशुओं में दूध उत्पादन में 10-15% की गिरावट आई है। इसके साथ ही गर्भधारण दर में कमी, मृत जन्म और बीमारियों की दर में वृद्धि देखी गई है।

स्वास्थ्य, आजीविका और सामाजिक प्रभाव: जलवायु परिवर्तन के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों में स्वास्थ्य पर पड़ने वाला प्रभाव भी प्रमुख है। * अत्यधिक गर्मी से हीट स्ट्रोक, निर्जलीकरण और हृदय संबंधी समस्याओं के मामले बढ़े हैं। * खाद्य असुरक्षा के कारण कुपोषण की समस्या गहराई है, विशेषकर ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में। * महिलाओं और बच्चों पर प्रभाव अधिक स्पष्ट है, क्योंकि वे पानी और ईंधन की खोज में अधिक समय और श्रम लगाती हैं।

केस स्टडी: बाड़मेर जिले में जलवायु संकट और अनुकूलन प्रयास

परिचय: बाड़मेर जिला, राजस्थान का एक अत्यंत शुष्क क्षेत्र है जहाँ औसत वर्षा मात्र 277 मिमी है। यहाँ के लोग पारंपरिक कृषि और पशुपालन पर निर्भर हैं।

समस्या: 2018-2023 के दौरान बाड़मेर में मानसून की अनिश्चितता, अत्यधिक तापमान और बार-बार सूखा जैसी स्थितियाँ बनी रहीं। जल स्रोत सूख गए, फसलें असफल हुईं और पशु चारे की भारी कमी हुई।

प्रभाव: 30% से अधिक किसान खेती छोड़कर मजदूरी की ओर प्रवृत्त हुए। पशुपालन पर आधारित आय में 40% तक गिरावट आई। महिलाओं को पानी लाने हेतु औसतन 5.7 किमी चलना पड़ता है।

अनुकूलन प्रयास: लोकस्तर पर तालाब पुनर्जीवन अभियान चलाया गया। कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा सूखा-प्रतिरोधी बाजरा और मूँग बीज वितरित किए गए। सामुदायिक स्तर पर वर्षा जल संचयन टांकों का निर्माण किया गया।

निष्कर्ष: स्थानीय ज्ञान, सरकारी हस्तक्षेप और सामुदायिक सहभागिता से बाड़मेर जैसे संकटग्रस्त क्षेत्र में भी सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है।

जिलेवार आंकड़ों का विश्लेषण: राजस्थान में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

जिला	तापमान वृद्धि (1971 से 2019)	औसत वर्षा (मिमी)	सूखे की आवृत्ति (वर्षों में)	प्रभावित क्षेत्र (%)
बाड़मेर	1.5°C	277	2 में 1 बार	68%
बीकानेर	1.6°C	288	3 में 1 बार	55%
जैसलमेर	1.6°C	190	प्रति वर्ष	75%
जोधपुर	1.4°C	330	3 में 2 बार	61%
अलवर	1.1°C	620	5 में 1 बार	38%
कोटा	0.8°C	860	10 में 1 बार	22%

विश्लेषण: पश्चिमी राजस्थान के जिलों (बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर) में तापमान वृद्धि, सूखे की आवृत्ति और कृषि पर प्रभाव अधिक गंभीर है। पूर्वी जिलों में समस्या अपेक्षाकृत कम है, परंतु मानसून की अनिश्चितता वहाँ भी कृषि को प्रभावित कर रही है।

अनुकूलन और शमन रणनीतियां

कृषि अनुकूलन तकनीकें : सूखा प्रतिरोधी बीज, मृदा नमी संरक्षण तकनीकें, और फसल विविधीकरण को बढ़ावा देना।

जल संसाधन प्रबंधन: माइक्रो इरिगेशन, जल पुनर्भरण, और पारंपरिक जल संरचनाओं का पुनरुद्धार।

सामुदायिक भागीदारी: जल और कृषि समूहों का गठन, महिला स्व-सहायता समूहों को सशक्त करना।

जलवायु सूचना प्रणाली: मौसम पूर्वानुमान प्रणाली, मोबाइल-आधारित कृषि सलाह सेवाएँ।

नीति-स्तरीय हस्तक्षेप: जिला स्तरीय जलवायु अनुकूलन योजना, किसान बीमा योजना का विस्तार, और जलवायु शिक्षा।

निष्कर्ष: राजस्थान जलवायु परिवर्तन के गंभीर प्रभावों से जूझ रहा है, जो इसकी पारिस्थितिकी, अर्थव्यवस्था और जनजीवन को गहराई से प्रभावित कर रहे हैं। इस संकट का समाधान केवल वैज्ञानिक तकनीकों या सरकारी योजनाओं से संभव नहीं है, अपितु इसके लिए स्थानीय समुदायों, अनुसंधान संस्थानों और नीति-निर्माताओं के बीच समन्वय आवश्यक है। अब समय आ गया है कि जलवायु अनुकूल नीतियाँ, नवाचार और परंपरागत ज्ञान को एकीकृत करके एक समावेशी रणनीति अपनाई जाए। राजस्थान यदि समय रहते कदम उठाए, तो वह इस संकट को अवसर में बदल सकता है और भावी पीढ़ियों हेतु एक स्थायी और सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित कर सकता है।

संदर्भ सूची

1.Sharma, R. K., Verma, P., & Singh, N. (2021). Climate trends in Rajasthan: A regional analysis. Journal of Climatology and Weather Forecasting, 9(2), 45–53.

2.Meena, P. C., & Bisht, R. (2020). Rainfall variability and changing monsoon patterns in Rajasthan. Indian Journal of Meteorology, 74(4), 232–240.

3.Singh, S., & Kumar, A. (2014). Climate change vulnerability in arid agriculture: A case from western Rajasthan. Indian Journal of Extension Education, 50(1&2), 58–64.

4.Upadhyaya, A. (2014). Informal risk management strategies under climate variability in Rajasthan. Agri-Economic Research Review, 27(1), 129–137.

5.Frommen, N., Singh, R., & Jain, M. (2021). Water resource stress in peri-urban Rajasthan: Anthropogenic and geogenic effects. Water International, 46(1), 101–118.

6.Poonia, S. (2023). Impact of climate change on desert ecology: Insights from Thar. Desert Studies Quarterly, 18(2), 85–98.

7.Mehrotra, A., Sen, P. K., & Ali, Z. (1991). Satellite data interpretation for vegetation changes in western India. Remote Sensing Applications, 9(3), 212–220.

8.Sharma, D., Singh, L., & Rao, V. (2024). Effects of climate change on livestock health in Rajasthan. Veterinary Research Review, 15(1), 34–42.

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु आवासीय प्रशिक्षण

डॉ. दिनेश रजक (सह प्राध्यापक)
डॉ. विशाल कुमार (सह प्राध्यापक)
देवेन्द्र कुमार (प्राध्यापक), प्रसंसकरण एवं खाद्य अभियन्त्रिकी विभाग, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौधोगीकी महविद्यालय डॉ. रा.प्र. कें.कृ. वि. पूसा, समस्तीपुर, बिहार

परिचय : कृषि यंत्रों की मरम्मत का प्रशिक्षण कृषि क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे किसानों को अपनी मशीनों और यंत्रों की सही देखभाल, रख-रखाव और मरम्मत के बारे में जानकारी मिलती है। यह प्रशिक्षण न केवल किसानों की मशीनों की कार्यकुशलता को बनाए रखने में मदद करता है, बल्कि उनकी आर्थिक बचत में भी योगदान देता है, क्योंकि वे बाहरी मरम्मत सेवाओं पर निर्भर नहीं रहते।

कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु आवासीय प्रशिक्षण का महत्व

1.किसानों के लिए सशक्तिकरण: आवासीय प्रशिक्षण में भाग लेने से किसान अपने कृषि यंत्रों की मरम्मत, संचालन और देखभाल के बारे में सीधे और व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करते हैं। इसका लाभ यह है कि किसान खुद अपने यंत्रों को सुधार और संचालन कर सकते हैं, जिससे उनकी निर्भरता बाहरी सेवाओं पर कम होती है।

2.यंत्रों की कार्यकुशलता में वृद्धि: नियमित मरम्मत और देखभाल से कृषि यंत्रों की कार्यकुशलता बनी रहती है, जिससे वे लंबी अवधि तक अच्छा प्रदर्शन करते हैं और अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

3.आर्थिक बचत: जब किसान खुद अपने यंत्रों की मरम्मत कर सकते हैं, तो वे बाहरी मरम्मत सेवाओं पर खर्च किए गए पैसे को बचा सकते हैं। यह उनकी आय में वृद्धि करने का एक तरीका हो सकता है।

4.समय की बचत: कृषि यंत्रों की खराबी के कारण किसानों को कार्यों में रुकावटें आती हैं। सही तरीके से मरम्मत और देखभाल करने से यह रुकावटें कम होती हैं, जिससे समय की बचत होती है और कृषि कार्य निर्बाध रूप से चलता रहता है।

कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु आवासीय प्रशिक्षण के प्रमुख पहलु

प्रशिक्षण का उद्देश्य

- किसानों को विभिन्न प्रकार के कृषि यंत्रों और मशीनों की मरम्मत, रख-रखाव और संचालन के बारे में प्रशिक्षण देना।
- यंत्रों में होने वाली सामान्य खराबियों का पता लगाना और उन्हें सुधारने के तरीके सिखाना।
- कृषि यंत्रों की जीवन अवधि बढ़ाने के लिए सही देखभाल की तकनीकें समझाना।

प्रशिक्षण में शामिल विषय

- **कृषि यंत्रों का परिचय:** विभिन्न कृषि यंत्रों जैसे ट्रैक्टर, हार्वेस्टर, स्प्रेयर, प्लांटर, इत्यादि के बारे में विस्तार से जानकारी।

संचालन और मरम्मत: यंत्रों के विभिन्न हिस्सों का कामकाज, खराबी का कारण, और उनकी मरम्मत के तरीके।

मूल्यांकन और निदान: कृषि यंत्रों में खराबी का सही मूल्यांकन और निदान करना।

सुरक्षा उपाय: मरम्मत के दौरान सुरक्षा की जरूरी बातें और सावधानियाँ।

आधुनिक तकनीकी यंत्र: नई तकनीक और उपकरणों की मरम्मत के तरीके।

प्रशिक्षण विधियां

प्रैक्टिकल सेशंस: खेतों में या कार्यशालाओं में वास्तविक यंत्रों की मरम्मत करना, ताकि किसान वास्तविक अनुभव प्राप्त कर सकें।

थियोरी सेशंस: यंत्रों के विभिन्न घटकों, उनकी कार्यप्रणाली, और मरम्मत के तरीकों पर सैद्धांतिक जानकारी देना।

समूह चर्चाएँ: प्रशिक्षकों और किसानों के बीच संवाद और समस्याओं का समाधान करने के लिए समूह चर्चाएँ आयोजित की जाती हैं।

प्रशिक्षण के स्थान

कृषि महाविद्यालय और संस्थाएं: इन संस्थाओं में विशेष कृषि यंत्रों की मरम्मत के लिए प्रशिक्षण केंद्र होते हैं, जहां आवासीय प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

सरकारी और निजी कृषि प्रशिक्षण केंद्र: राज्य सरकारों और निजी कंपनियों द्वारा कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

कृषि यंत्र डीलर और सर्विस सेंटर: कई बार यंत्रों के निर्माता या डीलर स्वयं प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु आवासीय प्रशिक्षण के लाभ

1.किसानों का आत्मनिर्भर बनना: किसानों को उनके यंत्रों की मरम्मत करने का ज्ञान मिलने से वे बाहरी मरम्मत सेवाओं पर निर्भर नहीं रहते, जिससे उनकी लागत कम होती है और वे अपने यंत्रों का सही तरीके से देखभाल कर सकते हैं।

2.प्रौद्योगिकी का उपयोग: कृषि यंत्रों की नई तकनीकों को समझने और उन्हें लागू करने में मदद मिलती है, जिससे उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।

3.स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन: यदि किसान स्वयं यंत्रों की मरम्मत करने में सक्षम होते हैं, तो वे अपनी सेवा अन्य किसानों को भी दे सकते हैं, जिससे स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर बढ़ते हैं।

4.कृषि यंत्रों की लंबी उम्र: नियमित मरम्मत और देखभाल से यंत्रों की कार्यकुशलता बनी रहती है, और उनकी उम्र बढ़ती है, जिससे किसान लंबे समय तक अपने यंत्रों का उपयोग कर सकते हैं।

निष्कर्ष: कृषि यंत्रों की मरम्मत हेतु आवासीय प्रशिक्षण किसानों के लिए बेहद फायदेमंद है। यह न केवल उनके यंत्रों की देखभाल में मदद करता है, बल्कि उनकी आत्मनिर्भरता और आर्थिक स्थिति को भी मजबूत करता है। इससे किसानों को बेहतर यांत्रिक ज्ञान मिलता है और वे कृषि यंत्रों का अधिकतम उपयोग कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, यह कार्यक्रम कृषि क्षेत्र में तकनीकी सुधार, रोजगार सृजन और आर्थिक सशक्तिकरण में योगदान करता है।

01/2023-24

डॉ. अनिल कुमार सिंह वरीय वैज्ञानिक एवं प्रधान, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि वि.वि., पूसा समस्तीपुर, बिहार

डॉ. रंजु कुमारी सह प्राध्यापक एवं वरीय वैज्ञानिक, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर

ई. सुभाष चन्द्र सह प्राध्यापक एवं वरीय वैज्ञानिक, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि वि.वि., पूसा समस्तीपुर

हेमचन्द्र चौधरी सहायक प्राध्यापक एवं कनीय वैज्ञानिक, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि वि.वि.,पूसा समस्तीपुर

गर्मी मौसम के फूल

शरद ऋतु खत्म होने के साथ-साथ अब गर्मियों की शुरुआत हो गई है। इस दौरान तेज धूप और पानी की कमी के कारण पौधे में ज्यादा फूल नहीं खिलते हैं जिससे बगिया देखने में बिल्कुल भी अच्छी नहीं लगती है। गर्मी का मौसम भारत में अप्रैल से जून तक रहता है। इस दौरान तापमान बहुत अधिक हो जाता है और वातावरण गर्म व शुष्क हो जाता है। हालांकि यह मौसम कठिन होता है, फिर भी कुछ विशेष प्रकार के फूल इस मौसम में भी अपनी खूबसूरती और खुशबू से वातावरण को मोहक बना देते हैं।

अगर आप चाहती हैं कि गर्मियों में भी आपके गमले फूलों से लदी रहेए तो इसके लिए एक उपाय है। आप गर्मियों में खिलने वाले फूल को अपने गमले में लगा सकती हैं। ये फूल आपकी बालकनी या गार्डन में गर्मियों के सीजन में भी चार चांद लगा देंगे। अबए अगर आप ये सोच रही हैं कि आखिर वह कौन से पौधे हैं जो तेज धूप में भी फूलों से भर जाते हैं तो चलिए हम आपको बताते हैं इस सीजन में खिलने वाले फूलों के पौधे के बारे में। गर्मियों में गेंदे का पौधा बड़े आसानी से लग जाता है। साथ ही इसके खिले-खिले फूल भी आपको बेहद पसंद आएंगे। गेंदे के पीले-पीले फूल गार्डन को एक अलग ही ऊर्जा और सुंदरता से भर देते हैं। सूरजमुखी के पौधे को यूं तो घर पर लगा पाना थोड़ा मुश्किल होता है। पर एक बार अगर ये ठीक से लग जाए तो बगीचे के साथ-साथ यह घर की खूबसूरती को भी बढ़ा देते हैं। तेज धूप में भी इन पौधों से फूल हमेशा खिलते हैं।

इस मौसम में ठंड की तुलना में कम फूल पाए जाते हैं। कोचिया, गैलार्डिया, पोर्टुलाका, सूरजमुखी, कास्मिया, टोरेनिया, जिनिया, सिलोशिया, पिटूनिया, गुड़हल, चमेली, गेंदा, गुलमोहर, चंपा, रातरानी आदि गर्मियों के कुछ प्रमुख फूल हैं।

पिटूनिया: पिटूनिया पौधे को हैंगिंग वास में लगाना काफी खूबसूरत लगता है। ये फूल घर को एक अलग तरह की वाइब देता है।

गुड़हल के फूल: दरअसल गुड़हल के पौधे को ज्यादा धूप की जरूरत पड़ती है। इसलिए गर्मियों के सीजन में लगाया जाने वाला यह पौधा एक बेस्ट ऑप्शन है। गुड़हल के फूलों का पूजा में भी इस्तेमाल किया जाता है। यह चमकीले लाल या पीले रंग में पाया जाता है और गर्मी में खूब खिलता है। यह आयुर्वेदिक गुणों से भरपूर भी होता है।

चमेली: चमेली फूल के पौधे को घर में लगाना आसान होता है और इसे बहुत ज्यादा देखभाल की भी जरूरत नहीं पड़ती है। अपनी बेहतरीन खुशबू और सफेद मनमोहक रंगों की वजह से चमेली का पौधा गर्मियों के लिए बेस्ट होता है।

जीनिया के फूल: जीनिया के पौधों को भी बहुत ज्यादा देखभाल की जरूरत नहीं होती है। इसमें एक बार फूल खिलने के बाद, यह बहुत दिनों तक खिले रहते हैं।

गुलमोहर: यह पेड़ अपने चमकीले लाल-नारंगी फूलों के लिए प्रसिद्ध है। गर्मी में इसका फूलना शहरों की सड़कों को रंगीन बना देता है।

गेंदा: यह एक सामान्य लेकिन लोकप्रिय फूल है जो पीले और नारंगी रंगों में मिलता है। पूजा और सजावट में इसका उपयोग होता है।

चंपा: यह सुगंधित फूल गर्मियों में खिलते हैं और मंदिरों में भी इनका विशेष स्थान है।

रातरानी: यह फूल रात में खिलता है और इसकी भीनी-भीनी खुशबू वातावरण को सुगंधित बना देती है।

गुलाब: गुलाब का पौधा खुशबू और सुंदरता की वजह से लोगों को काफी ज्यादा आकर्षित करता है। गर्मियों के लिए भी इस पौधे में फूल खिलते हैं।

बोगनवेलिया: बोगनवेलिया के पौधे को घर पर लगाना बेहद आसान होता है। यह स्टेम से भी बड़े आसानी से लग जाता है। इसकी खासियत यह है कि इसके लिए आपको ज्यादा मेंटेनेंस करने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी। साथ हीए आपके गार्डन को यह पौधा एक अलग ही रंगत से भर देता है। बोगनवेलिया उन फूलों में से एक है जिसका बहुत ज्यादा ध्यान नहीं रखना पड़ता, लेकिन यह पौधा सुंदर बहुत दिखता है। घर में अगर बोगनवेलिया का पौधा या फिर बेल हो तो यकीनन उसमें खिलने वाले रंग-बिरंगे फूल मन मोह लेते हैं। बोगनवेलिया का पेड़ जितना पुराना होता है उतने ही खूबसूरत फूल खिलते हैं।

बोगनवेलिया में इस तरह से करें वॉटरिंग: बोगनवेलिया का पौधा उन पौधों में से एक है जिसे बहुत ज्यादा फर्टिलाइजर या पानी की जरूरत नहीं होती है। बोगनवेलिया में रोजाना पानी डाल देते हैं जिसके कारण यह पौधा पत्तियां ज्यादा प्रोड्यूस करता है। इस पौधे की मिट्टी जब सूखने लगे इसे तभी पानी की जरूरत होती है। बहुत ज्यादा पानी के कारण पौधा फूल बनाने में कम फोकस करता है। यही कारण है कि घर में लगे हुए पौधे में ज्यादा फूल नहीं आते लेकिन बाहर सड़क पर लगे पौधे फूलों से भरे रहते हैं।

कब दें बोगनवेलिया एवं अन्य फूलों के पौधे को फर्टिलाइजर: बोगनवेलिया एवं अन्य फूलों के पौधे में 30-35 दिनों के अंतराल में फर्टिलाइजर देना होता है। अन्य सभी पौधों को 20-25 दिनों में ही इसकी जरूरत महसूस होने लगती है। हालांकि अगर आपका पौधा जमीन में लगा है तो दो-तीन महीने में एक बार फर्टिलाइजर देंगी तो भी चलेगा। गमले में लगे हुए पौधे की मिट्टी बहुत जल्दी अपनी न्यूट्रिटिव वैल्यू खो देती है इसलिए अगर आपका बोगनवेलिया एवं अन्य फूलों का पौधा भी गमले में लगा हैए तो उसे 30-35 दिनों में एक बार न्यूट्रिशन जरूर दें।

किस फर्टिलाइजर से बेहतर होगी बोगनवेलिया एवं अन्य फूलों की गुणवत्ता: बोगनवेलिया में केमिकल फर्टिलाइजर मिलाने की जगह आप प्राकृतिक फर्टिलाइजर घर पर बनाकर डालें। इसके लिए तीन मुख्य फर्टिलाइजर्स का मिला जुला रूप काम करेगा।

* 2 कप कम्पोस्ट (वर्मी कम्पोस्ट या किचन कम्पोस्ट) * 2 बड़े चम्मच पोटैशियम पाउडर प्रयोग * 2 बड़े चम्मच फॉसफोरस पाउडर (रॉक फॉस्फेट या बोन मील जो भी आपको ठीक लगे) * इसे प्रयोग करने हेतु पौधों के आसपास एक रिंग बनाना है। इसके लिए गमलों की मिट्टी की गुड़ाई कर दें। इससे पौधे के ऊपरी हिस्से पर मौजूद जड़ों की प्रूनिंग हो जाती है और यही कारण है कि पौधा और तेजी से ग्रो कर पाता है। एक बार आपने गुड़ाई कर दी तो एक दिन हेतु पौधे को ऐसे ही छोड़ दें। इसके बाद आप इसमें फर्टिलाइजर डालें और फिर उसे पानी से भर दें।

पौधे में फर्टिलाइजर देने के बाद पानी क्यों डालना चाहिए: इसका सीधा सा कारण यह है कि फर्टिलाइजर में जितने भी न्यूट्रिएंट्स होते हैं वो पानी में घुलनशील होते हैं। यह सिर्फ बोगनवेलिया नहीं, बल्कि सभी पौधों के लिए प्रयोग होता है। अगर आप फर्टिलाइजर डालने के बाद पौधों में पानी डाल देंगीए तो पानी में सभी न्यूट्रिएंट्स मिक्स होकर जड़ों तक पहुंचेंगे जिन्हें जड़ें अवशोषित करेंगी और पौधा वृद्धि करेगा।

गर्मियों में फूलों की देखभाल: तेज धूप और अधिक तापमान के कारण पौधों के सूखने का खतरा बढ़ जाता है। **ऐसे में उनकी सही देखभाल के लिए-**

पर्याप्त पानी: सुबह जल्दी (6.8 बजे) या शाम (5.7 बजे) के बीच पानी देना चाहिए। इससे नमी ज्यादा समय तक बनी रहती मई.जून के महीने में पौधों में कम से कम दो बार पानी देना चाहिए। ध्यान रखें कि पानी की मात्रा सीमित होनी चाहिए क्योंकि अधिक पानी से कुछ पौधों की जड़ें सड़ सकती हैं।

धूप: फूलों को धूप में रखना चाहिए लेकिन अत्यधिक धूप से भी बचना चाहिए-

मिट्टी: फूलों को अच्छी तरह से जल निकासी वाली मिट्टी में लगाना चाहिए। इसके अलावा मिट्टी की सतह पर पुआल, सूखी घास, लकड़ी के बुरादे, नारियल या भूसी की परत बिछाएं। इससे मिट्टी में नमी बनी रहती है और पौधे गर्मी से सुरक्षित रहते हैं।

कीटों और बीमारियों से बचाव

गर्मी के मौसम में तापमान बढ़ने के साथ ही एफिड्सए मिली बग्सए व्हाइटफ्लाई जैसे कई तरह के कीटों (Pests) का प्रकोप बढ़ जाता है। ये कीट पौधों की पत्तियोंए तनोंए फूलों और जड़ों को नुकसान पहुंचाते हैंए जिससे उनकी वृद्धि रुक सकती है।

इस मौसम में पौधों को कीटों से बचाने के लिए रोजाना पौधों की पत्तियों और तनों की जांच करें। खासतौर पर पत्तियों की निचली सतह देखें क्योंकि अक्सर कीट वहीं छिपे रहते हैं। किसी भी खराब अथवा पीले पड़ चुके पत्ते या शाखा को तुरंत हटा दें। इसके अलावा नई पत्तियों और तनों पर ज्यादा ध्यान दें क्योंकि वे अधिक सेंसिटिव होते हैं। गर्मी के मौसम में खिलने वाले फूल प्रकृति की सुंदरता को दर्शाते हैं और यह सिखाते हैं कि कठिन परिस्थितियों में भी सुंदरता और सृजन संभव है। हमें इन फूलों की देखभाल करनी चाहिए और अधिक से अधिक पेड़-पौधे लगाने चाहिए।

किरण खोखर
विजय कुमार एवं महा सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, करनाल
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

केंचुआ खाद के प्रयोग से मृदा सुधार

केंचुआ कृषकों का मित्र एवं 'भूमि की आंत' कहा जाता है। यह आर्गेनिक पदार्थों, ह्यूमस व मिट्टी को एकसार करके जमीन के अन्दर अन्य परतों में फैलाता है इससे जमीन पोली होती है व हवा का आवागमन बढ़ जाता है, तथा जलधारण की क्षमता भी बढ़ जाती है।

केंचुए के पेट में जो रासायनिक क्रिया व सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रिया होती है, उससे भूमि में पाये जाने वाले नत्रजन, सल्फर, फॉस्फोरस, पोटाश, कैलशियम व अन्य सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है। केंचुआ खाद यानी वर्मीकम्पोस्ट में फसलों के लिए लाभदायक कई पोषक तत्वों के साथ कुछ हार्मोस और एंजाइम्स भी पाए जाते हैं। केंचुआ खाद न केवल मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार करती है, बल्कि फसलों की उपज भी बढ़ाती है। केंचुओं की मदद से कचरे को खाद में परिवर्तित करने हेतु केंचुओं को नियंत्रित वातावरण में पाला जाता है। इस क्रिया को वर्मीकल्चर कहते हैं, केंचुओं द्वारा कचरा खाकर जो कास्ट निकलती है उसे एकत्रित रूप से वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट के लाभ

वर्मी कम्पोस्ट एक अच्छी किस्म की खाद है तथा साधारण कम्पोस्ट या गोबर की खाद से ज्यादा लाभदायक साबित हुई है। **इसका प्रयोग करने में निम्नलिखित लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं-**

- भूमि एक जैविक माध्यम है तथा इसमें अनेक जीवाणु होते हैं जो इसको जीवन्त बनाए रखते हैं इन जीवाणुओं को भोजन के रूप में कार्बन की आवश्यकता होती है। वर्मी कम्पोस्ट मृदा में कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि करता है तथा भूमि में जैविक क्रियाओं को निरन्तरता प्रदान करता है।
- वर्मी कम्पोस्ट में आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर व सन्तुलित मात्रा में होते हैं। जिससे पौधे सन्तुलित मात्रा में विभिन्न आवश्यक तत्व प्राप्त कर सकते हैं।
- वर्मी कम्पोस्ट के प्रयोग से मिट्टी भुरभुरी हो जाती है जिससे उसमें पोषक तत्व व जल संरक्षण की क्षमता बढ़ जाती है व हवा का आवागमन भी मिट्टी में ठीक रहता है।
- वर्मी कम्पोस्ट क्योंकि कूड़ा-करकट, गोबर व फसल अवशेषों से तैयार किया जाता है अतः गन्दगी में कमी करता है तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखता है।
- वर्मी कम्पोस्ट टिकाऊ खेती के लिये बहुत ही महत्वपूर्ण है तथा यह जैविक खेती की दिशा में एक नया कदम है। इस प्रकार की प्रणाली प्राकृतिक प्रणाली और आधुनिक प्रणाली जो कि रासायनिक उर्वरकों पर आधारित है, के बीच समन्वय और सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है।
- वर्मी कम्पोस्ट को भूमि में बिखेरने से भूमि भुरभुरी एवं उपजाऊ बनती है। इससे पौधों की जड़ों के लिये उचित वातावरण बनता है। जिससे उनका अच्छा विकास होता है।

केंचुआ खाद और गोबर की खाद का तुलनात्मक विवरण

तत्व	केंचुआ खाद (%)	गोबर खाद (%)
नाइट्रोजन	1.00-1.60	0.40-0.75
फास्फोरस	0.50-5.04	0.17-0.30
पोटाश	0.80-1.50	0.20-0.55
कैल्शियम	0.44	0.91
मैगनीशियम	0.15	0.19
लोह (पीपीएम)	175.20	146.50
मैंगनीज (पीपीएम)	96.51	69.00
जिंक (पीपीएम)	24.43	14.50
कापर (पीपीएम)	4.89	2.80
कार्बन- नाइट्रोजन अनुपात	15.50	31.28

उपयोग विधि

वर्मी कम्पोस्ट जैविक खाद का उपयोग विभिन्न फसलों में अलग-अलग मात्रा में किया जाता है। खेती की तैयारी के समय 2.5 से 3.0 टन प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए। खाद्यान्न फसलों में 5.0 से 6.0 टन प्रति हेक्टेयर मात्रा का उपयोग करें। फल वृक्षों में आवश्यकता अनुसार 1.0 से 10 किग्रा./पौधा वर्मी कम्पोस्ट उपयोग करें तथा किचन, गार्डन और गमलों में 100 ग्राम प्रति गमला खाद का उपयोग करें तथा सब्जियों में 10-12 टन/हेक्टेयर वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करें।

कंचुए की खाद बनाते वक्त ध्यान में रखने योग्य बातें

- वर्मी कम्पोस्ट केवल छायादार स्थान में ही बनाएं।
- वर्मी कम्पोस्ट बनाने वाली जगह पर बारिश का पानी एकत्रित नहीं होना चाहिए।
- घर में इस्तेमाल किये गए साबुन या डिटर्जेंट के पानी का प्रयोग खाद बनाते वक्त नहीं करना चाहिए।
- छोटे कीड़े मकोड़े, चिड़िया, चूहे व अन्य छोटे जंतु कंचुए को नुकसान पहुंचाते हैं, इसलिए इनके बचाव के पर्याप्त उपाय किए जाने चाहिए।
- कभी कभी पशुओं को कीड़े मरने की दवाई दी जाती हैं, तो ऐसे गोबर का प्रयोग खाद बनाने के लिए न करें जिसमें दवाई का अंश होने की आशंका हो।

वर्मीकम्पोस्ट को खेत में छिटककर इस प्रकार फैलाना चाहिए कि वर्मीकम्पोस्ट पूरे खेत में समान रुप से फैल जाये और मिट्टी में मिल जाए।

जल संरक्षण का कृषि में महत्व

डॉ. सुशील कुमार सिंह, डॉ. एम.डी. परिहार
डॉ. मुकेश कुमार जाट, डॉ. एस.के. शर्मा
डॉ. रोहतास कुमार एवं डॉ. दिनेश
कृषि महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, (हरियाणा)

जैसे-जैसे वैश्विक जनसंख्या की वृद्धि हुई है और जलवायु परिवर्तन हो रहा है , पानी की मांग भी बढ़ रही है, जिससे वर्षा जल का संरक्षण महत्वपूर्ण हो जाता है। पानी की बचत झीलों, नदियों और जल भृतों सहित हमारे जल निकायों पर दबाव कम करती है और प्रदूषण को रोकने में मदद करती है। जल संरक्षण का मतलब सिर्फ़ उपयोगिता बिलों पर बचत करना नहीं है । पानी के उपयोग को कम करने के तरीकों को लागू करके, हम लोगों और वन्यजीवों दोनों के लिए एक टिकाऊ और सुरक्षित जल भविष्य सुनिश्चित करते हैं, जो एक बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधन के जिम्मेदार प्रबंधन का प्रदर्शन करता है।साथ ही पानी की गुणवत्ता को बेहतर बनाने में मदद करना है । जल का संरक्षण कृषि में अत्यधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि जल कृषि उत्पादन के लिए सबसे प्रमुख संसाधन है। भारत जैसे विकासशील देश में, जहां कृषि पर निर्भरता बहुत अधिक है, जल का संरक्षण न केवल फसल की वृद्धि और उत्पादन के लिए जरूरी है, बल्कि यह किसानों की आजीविका और आर्थिक स्थिति के लिए भी महत्वपूर्ण है। **निम्नलिखित बिंदुओं में जल के संरक्षण का कृषि में महत्व समझाया गया है:**

उत्पादन में वृद्धि: जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो तो फसलों की वृद्धि में सहायता मिलती है, जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है। जल के उचित प्रबंधन से भूमि का उपजाऊपन बनाए रखा जा सकता है और फसलों की गुणवत्ता में सुधार हो सकता है।

सूखा और जलवायु परिवर्तन से बचाव: जलवायु परिवर्तन के कारण बेमौसम बारिश, सूखा और तापमान में उतार-चढ़ाव जैसी समस्याएं बढ़ रही हैं। ऐसे में जल का संरक्षण महत्वपूर्ण हो जाता है, ताकि सूखा या कम वर्षा के समय में भी पर्याप्त जल उपलब्ध हो सके।

भूमि की उपजाऊ क्षमता में सुधार: जब जल का सही तरीके से संरक्षण और उपयोग किया जाता है, तो इससे भूमि की उपजाऊ क्षमता बढ़ती है। इससे मिट्टी की संरचना और गुणवत्ता बनी रहती है, जो फसलों के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती है।

विकसित सिंचाई प्रणालियाँ: जल का संरक्षण न केवल वर्षा पर निर्भर करता है, बल्कि सिंचाई प्रणालियाँ जैसे ड्रिप सिंचाई और स्प्रिंकलर सिंचाई का उपयोग भी जल की बर्बादी को रोकने और जल के अधिकतम उपयोग के लिए किया जाता है। ये प्रणालियाँ जल की खपत को न्यूनतम करती हैं और कृषि में जल की कमी को संतुलित करती हैं।

कृषि लागत में कमी: जल की बचत से सिंचाई पर खर्च होने वाले धन में कमी आती है। इससे किसान कम लागत में ज्यादा उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। विशेष रूप से, सूखा या कम जल वाले क्षेत्रों में यह रणनीति महत्वपूर्ण हो सकती है।

जल संसाधनों का संतुलन बनाए रखना: जल का सही तरीके से उपयोग और संरक्षण जल संसाधनों का संतुलन बनाए रखता है। न केवल कृषि, बल्कि घरेलू, औद्योगिक और पर्यावरणीय उपयोग के लिए जल की आवश्यकता होती है। जल का उचित प्रबंधन सभी क्षेत्रों में संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।

पर्यावरण संरक्षण: जल का अत्यधिक दोहन पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बन सकता है, जैसे जल स्रोतों का सूखना, मृदा का क्षरण, और जैव विविधता में कमी। जल का संरक्षण इन सभी नकरात्मक प्रभावों को कम करता है और पारिस्थितिकी तंत्र को संरक्षित रखता है।

सामाजिक और आर्थिक लाभ

जल संरक्षण से न केवल किसानों का जीवन सुधरता है, बल्कि इससे समग्र समाज को भी फायदा होता है। जब जल की उपलब्धता अधिक होती है, तो फसल उत्पादन बढ़ता है, जिससे किसानों की आय में वृद्धि होती है और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित होती है।

पानी की गुणवत्ता बनाए रखना

जल संरक्षण के उपायों के तहत, जल के स्रोतों की सफाई और जल की गुणवत्ता पर ध्यान देना भी शामिल होता है। इससे जल की शुद्धता बनी रहती है जो फसलों और मानव स्वास्थ्य हेतु महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार, जल का संरक्षण कृषि के लिए न केवल एक आवश्यकता है, बल्कि यह कृषि क्षेत्र के समग्र विकास और भविष्य के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

जल संरक्षण के लिए मुख्य बिंदु: जल संरक्षण के लिए कृषि में कई महत्वपूर्ण बिंदु हैं, जिन्हें अपनाकर जल की बचत की जा सकती है और कृषि में जल के सही उपयोग को सुनिश्चित किया जा सकता है। इनमें से कुछ मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं:

स्मार्ट सिंचाई प्रणालिया

ड्रिप सिंचाई: यह सबसे प्रभावी सिंचाई पद्धतियों में से एक है, जिसमें पौधों की जड़ों के पास सीधे पानी दिया जाता है, जिससे जल की बर्बादी कम होती है।

स्प्रिंकलर सिंचाई: यह पद्धति पानी को पौधों तक समान रूप से पहुंचाती है, जिससे जल का प्रभावी उपयोग होता है और फसलें अच्छी तरह से सिंचित होती हैं।

वृष्टि जल संचयन

जल संचयन तालाब और बर्तन: वर्षा के पानी को इकट्ठा करने के लिए तालाब, बर्तन या अन्य जल संचयन संरचनाओं का निर्माण किया जा सकता है, जो सूखे के मौसम में उपयोगी होते हैं।

* **वृष्टि जल संचयन प्रणाली:** कृषि भूमि पर वर्षा का पानी एकत्र करने की व्यवस्था स्थापित करना, जिससे पानी की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।

मल्चिंग

* **मल्चिंग सामग्री का उपयोग:** मल्च (पत्तियाँ, घास, लकड़ी की छाल, प्लास्टिक आदि) को मिट्टी पर डालने से पानी की वाष्पन दर कम होती है जिससे मिट्टी में नमी बनी रहती है और जल की आवश्यकता कम होती है।

* मल्चिंग से मिट्टी का तापमान नियंत्रित रहता है और खरपतवार की वृद्धि भी नियंत्रित होती है।

भूमि सुधार तकनीकियां

विकसित भूमि प्रबंधन: मिट्टी में जल धारण क्षमता को बढ़ाने के लिए जैविक खाद, कम्पोस्ट, और हरित खाद का उपयोग करें। यह पानी को मिट्टी में बेहतर तरीके से बनाए रखने में मदद करता है।

जैविक खेती: मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ाने के लिए जैविक विधियाँ अपनाना जल संरक्षण के लिए फायदेमंद होता है।

फसल चक्र और विविधीकरण

फसल चक्र अपनाना: एक ही फसल की लगातार खेती से मिट्टी में पानी की कमी हो सकती है। फसल चक्र अपनाने से मिट्टी की नमी बनी रहती है और विभिन्न फसलों हेतु जल की आवश्यकता नियंत्रित रहती है।

सूखा प्रतिरोधी फसलों का चयन: कम पानी में उपजने वाली फसलें जैसे मक्का, बाजरा, और चना आदि का चयन करें।

संवेदनशील क्षेत्रों में उपयुक्त फसलें लगाना

सूखा सहिष्णु फसलें: ऐसे क्षेत्रों में जहां पानी की कमी रहती है, वहां सूखा सहिष्णु और कम जल की आवश्यकता वाली फसलों की खेती करना चाहिए।

मौसमी फसलें : समय और मौसम के अनुसार फसलों का चयन करना जल संरक्षण को बढ़ावा देता है।

वाटर-प्रूफ खेत

सिंचाई के लिए खेतों की मिट्टी को सील करना: खेतों में पानी का रिसाव रोकने के लिए उनकी सतह को सील किया जा सकता है, ताकि पानी खेत में बना रहे और पानी की खपत कम हो।

कृषि में टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल

स्मार्ट एग्रीकल्चर और सेंसर्स का उपयोग: जल की सही मात्रा और समय के बारे में जानकारी के लिए स्मार्ट सिंचाई प्रणालियों और मिट्टी के आर्द्रता सेंसर्स का उपयोग करें। यह जल की बर्बादी को रोकेगा और पानी का सही उपयोग सुनिश्चित करेगा।

डेटा एनालिटिक्स: मौसम, मिट्टी की नमी और अन्य पर्यावरणीय कारकों के आधार पर जल प्रबंधन तकनीकों को विकसित करना।

मिट्टी का संरक्षण

* **तेज़ी से बहने वाले पानी से बचाव:** पानी के बहाव को नियंत्रित करने के लिए नालों, और जल कुंडों का निर्माण करें ताकि पानी का सही उपयोग हो सके।

* **मिट्टी का संरक्षण:** भूमि में जल की भरपाई के लिए उचित भूमि सुधार उपायों को अपनाना आवश्यक है, जैसे स्लोप पर कंटूर बंडिंग और जल निकास सिस्टम।

जल पुनर्चक्रण

जल पुनर्चक्रण प्रणाली का निर्माण: सिंचाई के लिए पुनः उपयोग किया जा सकने वाला जल स्रोत स्थापित करें, जैसे जल पुनर्चक्रण प्रणाली, ताकि जल की बर्बादी को रोका जा सके और उसकी उपलब्धता बढ़ाई जा सके।

जागरूकता और शिक्षा

किसानों को जल संरक्षण के लाभ और उपायों के बारे में जानकारी लाभकारी साबित हो सकती है।

बे-मौसमी सब्जी उत्पादन: निम्न लागत संरक्षित ढांचे से किसानों के लिए नए अवसर

रिया पाण्डेय सब्जी विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर- 263145 (उत्तराखण्ड)

अंकुर शर्मा मुख्य सचिव, एग्रीमीट फाउंडेशन, भारत

कन्हैया सिंह कृषि विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस (उ.प्र.)

इशिता मिश्रा कृषि विस्तार एवं संचार विभाग, कृषि महाविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर - 263145, (उत्तराखण्ड)

सब्जियों की खेती कृषि में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह न केवल किसानों की आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। सब्जियों में विटामिन, खनिज, और फाइबर की प्रचुरता होती है, जो मानव स्वास्थ्य हेतु अत्यंत आवश्यक हैं। सब्जियां हमारे आहार का अभिन्न हिस्सा हैं और इन्हें दैनिक भोजन में शामिल करना अत्यंत आवश्यक है। ये न केवल हमारे शरीर को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती हैं, बल्कि बीमारियों से बचाव और संपूर्ण स्वास्थ्य को बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। विविधता और पोषण से भरपूर सब्जियाँ हमारे भोजन को संतुलित और स्वास्थ्यवर्धक बनाने में सहायक हैं।

पॉलीहाउस में बे-मौसमी (ऑफ सीजन) सब्जियों की खेती का महत्व: पॉलीहाउस में उगाई जाने वाली गर्मियों में और सर्दियों में वृद्धि करने वाली सब्जियाँ बे-मौसमी सब्जियाँ कहलाती हैं। ये सब्जियाँ मौसम के प्रतिकूलताओं के बावजूद पॉलीहाउस के संरक्षित वातावरण में उगाई जाती हैं। पॉलीहाउस के अंदर प्रदान किए जाने वाले नियंत्रित तापमान, नमी, प्रकाश और वायुसंचरण की शर्तों में इन सब्जियों की वृद्धि और उत्पादन बढ़ा दिया जाता है।

वातावरणीय नियंत्रण: पॉलीहाउस का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इसके अंदर का वातावरण पूरी तरह से नियंत्रित रहता है। पौधों को उनकी वृद्धि के लिए आवश्यक तापमान, नमी और प्रकाश मिलता है। गर्मियों में अत्यधिक गर्मी और सर्दियों में अत्यधिक ठंड से पौधों को बचाया जा सकता है। इस नियंत्रित वातावरण में पौधों की वृद्धि अधिक तेज होती है और वे बेहतर गुणवत्ता की फसलें देते हैं।

कीट और रोग नियंत्रण: पॉलीहाउस की संरचना के कारण सब्जिया कीटों और बीमारियों से सुरक्षित रहती हैं। पॉलीहाउस के अंदर प्रवेश करना कीटों के लिए कठिन होता है और इसलिए फसलें कीट और रोगें के हमले से बची रहती हैं। इससे रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कम हो जाता है और फसलें अधिक स्वस्थ रहती हैं। यह जैविक खेती को भी प्रोत्साहित करता है।

जल संरक्षण: पॉलीहाउस में ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग होता है जिससे पानी का समुचित उपयोग होता है और जल की बर्बादी कम होती है। पौधों को उनकी आवश्यकता के अनुसार ही पानी मिलता है, जिससे जल संरक्षण होता है और पौधों की वृद्धि में भी सुधार होता है।

उच्च उत्पादन और गुणवत्ता: पॉलीहाउस में पौधों को उनकी आवश्यकता के अनुसार पोषक तत्व और आदर्श वृद्धि परिस्थितियाँ मिलती हैं, जिससे फसल का उत्पादन बढ़ता है। फसलों की गुणवत्ता भी बेहतर होती है क्योंकि वे नियंत्रित वातावरण में उगती हैं। इसके साथ ही, फसल उत्पादन की अवधि भी बढ़ाई जा सकती है, जिससे किसान साल भर उच्च गुणवत्ता वाली सब्जियाँ उगा सकते हैं।

मौसम की निर्भरता कम: पॉलीहाउस में खेती करके किसान मौसम की प्रतिकूल स्थितियों से बच सकते हैं। बाहरी मौसम चाहे कितना भी प्रतिकूल क्यों न हो, पॉलीहाउस के अंदर फसलें सुरक्षित और स्वस्थ रहती हैं। इससे किसान बे-मौसमी सब्जियों की खेती कर सकते हैं और बाजार में उनकी मांग को पूरा कर सकते हैं।

आर्थिक लाभ: पॉलीहाउस में उगाई गई सब्जियों की गुणवत्ता और उत्पादन अधिक होता है, जिससे किसानों को अधिक लाभ होता है। बे-मौसमी सब्जियों की मांग अधिक होती है और उनकी कीमत भी अधिक होती है। इस प्रकार, पॉलीहाउस खेती से किसानों की आय में वृद्धि होती है और उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है।

बे-मौसमी सब्जी उत्पादन के लिए किसानों के लिए कम लागत वाली संरक्षित संरचनाएं: कम लागत पॉलीहाउस का निर्माण स्थानीय रूप से उपलब्ध बांस और धातु के तार का उपयोग करके फ्रेम बनाने हेतु किया जाता है। छत को ढकने हेतु 200 माइक्रॉन (800 गेज) की यूवी स्थिर फिल्म का उपयोग किया जाता है और साइड दीवारों पर 75% छाया नेट लगाया जाता है। 100 वर्ग मी. आकार के पॉलीहाउस के निर्माण की अनुमानित लागत 13,000 से 15,000 रु. के बीच आती है। पॉलीहाउस के आसपास उचित जल निकासी जलमार्ग विकसित किए जाते हैं ताकि पानी जमा न हो सके। पॉलीहाउस के अंदर 1 मीटर चौड़ी और 30 सेंटीमीटर ऊंची उठी हुई क्यारियां तैयार की जाती है, जिनकी लंबाई सुविधानुसार रखी जाती है। इन क्यारियों में मिट्टी और गोबर की खाद को 2:1 के अनुपात में अच्छी तरह मिलाया जाता है।

लो टनल - लो टनल को "छोटा ग्रीनहाउस" भी कहा जाता है। यह संरचना मुख्य रूप से सर्दियों के मौसम में सब्जियों की बे-मौसम खेती के लिए उपयोग की जाती है। उत्तर भारतीय परिस्थितियों में सर्दियों के महीनों के दौरान ठंडी हवाओं के कारण टमाटर, ग्रीष्मकालीन स्क्वैश, खरबूजे, शिमला मिर्च जैसी फसलों की खुले खेत में खेती करना बहुत कठिन होता है। पौधों के फूल आने पर परागण को सक्षम बनाने हेतु इस पॉलीथीन को खाइयों से हटा दिया जाता है। लो टनल में उगाई गई विभिन्न कुकुरबिट्स जैसे खरबूजा, गोल तरबूज, लौकी, खीरा, तरबूज की फसल को उनकी सामान्य विकसित होने वाली अवधि से 30-40 दिन पहले ही प्राप्त किया जा सकता है।

वॉक-इन टनल - वॉक-इन टनल एक अस्थायी संरचना है, जिसे जी आई पाइप या बांस का उपयोग करके बनाया जाता है और इसे विभिन्न मौसमों के अनुसार अलग-अलग आवरण सामग्री से ढका जाता है। इसका मुख्य उपयोग सब्जियों जैसे लौकी, खीरा आदि की बे-मौसम खेती के लिए होता है, खासकर सर्दियों के मौसम (दिसंबर से मध्य फरवरी) के दौरान। वॉक-इन टनल का आदर्श आकार 4 मी. चौड़ाई और 30 मी. लंबाई (120 वर्ग मी.) का हो सकता है, और इसके निर्माण की कुल लागत लगभग 12,000-14,000 रु. होती है । इस प्रकार की संरचना की ऊंचाई इतनी होती है कि किसान अंतर-सांस्कृतिक गतिविधियों के दौरान आराम से चल सकें।

छाया जाल : छाया घर एक कम लागत वाली संरक्षित संरचना है। यह संरचना नमी, सूर्यप्रकाश और हवा को आवश्यक मात्रा में अंदर जाने देती है, जिससे पौधों की वृद्धि के लिए उपयुक्त सूक्ष्म जलवायु तैयार होता है। छाया घर की संरचना दो मुख्य घटकों से बनी होती है: फ्रेम और आवरण सामग्री। छाया जाल बाजार में विभिन्न प्रतिशत छाया में उपलब्ध होते हैं जैसे 25%, 30%, 35%, 50%, 60%, 75% और 90%। पत्तेदार सब्जियों और कई सजावटी पौधों के लिए छाया जाल के नीचे खेती की जाती है। छाया जाल का मुख्य उद्देश्य गर्मी के महत्वपूर्ण महीनों (मई-सितंबर) के दौरान विकिरण और तापमान को एक निश्चित सीमा तक कम करना है।

मल्चिंग: मल्चिंग कृषि में एक महत्वपूर्ण तकनीक है जिसका उपयोग मिट्टी की सतह को ढकने के लिए किया जाता है। यह विधि मिट्टी की नमी बनाए रखने, खरपतवारों को नियंत्रित करने और फसल उत्पादन को बढ़ाने में सहायक होती है। मल्चिंग हेतु विभिन्न सामग्रियों का उपयोग किया जा सकता है, जैसे कि प्लास्टिक, जैविक पदार्थ (फसल अवशेष, पत्ते, घास) आदि। जबकि प्राकृतिक मल्च जैसे पत्तियाँ, भूसा, सूखी पत्तियाँ और खाद सदियों से उपयोग में आ रही हैं, पिछले 60 वर्षों में कृत्रिम (सिंथेटिक) सामग्री के आगमन ने मल्चिंग के तरीकों और लाभों को बदल दिया है। अन्य मल्च की तुलना में प्लास्टिक मल्च पूरी तरह से जलरोधी होते हैंय इसलिए यह मिट्टी से नमी के सीधे वाष्पीकरण को रोकता है और इस प्रकार जल हानि और मिट्टी के कटाव को सीमित करता है। इस प्रकार यह जल संरक्षण में एक सकारात्मक भूमिका निभाता है।

पॉलीहाउस खेती की चुनौतियाँ

हालांकि पॉलीहाउस में खेती के अनेक लाभ हैं, लेकिन इसके साथ कुछ चुनौतियाँ भी हैं:

उच्च प्रारंभिक लागत: पॉलीहाउस स्थापित करने की प्रारंभिक लागत बहुत अधिक होती है। इसमें संरचना निर्माण, प्लास्टिक शीट्स, सिंचाई प्रणाली और अन्य उपकरणों की लागत शामिल होती है। छोटे और सीमांत किसानों के लिए यह लागत वहन करना कठिन हो सकता है।

प्रबंधन और रखरखाव: पॉलीहाउस का प्रबंधन और रखरखाव कठिन हो सकता है। इसमें नियमित निरीक्षण, सफाई और उपकरणों की मरम्मत की आवश्यकता होती है। पौधों को सही समय पर पोषक तत्व और पानी प्रदान करना महत्वपूर्ण होता है, जिससे उनकी वृद्धि और उत्पादन में सुधार हो सके।

तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता: पॉलीहाउस खेती के लिए तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है। किसानों को विभिन्न कृषि तकनीकों, सिंचाई प्रणाली और पौधों की वृद्धि हेतु आवश्यक पर्यावरणीय स्थितियों के बारे में जानकारी होनी चाहिए। इसके लिए प्रशिक्षण और शिक्षा की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष: पॉलीहाउस तकनीक किसानों के लिए एक वरदान साबित हो रही है। यह न केवल किसानों की आय में वृद्धि करती है, बल्कि उन्हें उच्च गुणवत्ता वाली फसलों के उत्पादन में भी सहायता करती है। यह संरचना फसलों को हानिकारक कीटों और रोगजनकों से बचाती है, जिससे कीटनाशकों और रसायनों के उपयोग की आवश्यकता कम होती है। कम लागत वाले पॉलीहाउस के अंतर्गत ऑफ-सीजन नर्सरी उत्पादन लाभदायक पाया गया। इसी प्रकार, उच्च मूल्य वाली बे-मौसमी सब्जियों की खेती के अंतर्गत कम लागत वाली संरक्षित संरचनाओं को सब्जियां उगाने के लिए एक व्यवहार्य तकनीक पाया गया। बे-मौसमी सब्जियों की खेती ने किसानों के लिए नई संभावनाओं के द्वार खोले हैं। पॉलीहाउस जैसी तकनीकों की मदद से वे अपने उत्पादन को बढ़ा सकते हैं और बाजार में प्रतिस्पर्धा कर सकते हैं। इससे न केवल उनकी आय में वृद्धि होती है, बल्कि उन्हें वर्ष भर रोजगार और स्थायित्व भी प्राप्त होता है। पर्यावरणीय संतुलन और संसाधनों के समुचित उपयोग के कारण बे-मौसम खेती स्थायी कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस प्रकार, छोटे और सीमांत किसानों की आय बढ़ाने और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए, कम लागत वाले पॉलीहाउस के तहत ऑफ-सीजन नर्सरी के साथ-साथ सब्जियों की खेती को एक आर्थिक और लाभदायक उद्यम पाया गया है। यह तकनीक किसानों के जीवन को बेहतर बनाने और कृषि क्षेत्र में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। पर्यावरणीय नियंत्रण और संसाधनों के समुचित उपयोग के कारण यह तकनीक स्थायी कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

दीक्षा शर्मा, रूपम भारती, भाकृअनुप – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, (नई दिल्ली)

अंशुल शर्मा राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर, (राजस्थान)

पशुपालन की रीढ़: चारा ज्वार का चमत्कारी योगदान

राजस्थान राज्य की जलवायु, मिट्टी और भू-भाग की भिन्नता के कारण यहां खेती और पशुपालन की अनेक चुनौतियां हैं। राज्य की बड़ी आबादी कृषि एवं पशुपालन पर निर्भर है, लेकिन यहां हर साल चारे की भारी कमी महसूस की जाती है। विशेषकर गर्मी और सूखे के महीनों में जब खेतों में हरी घास उपलब्ध नहीं होती, तब चारा फसलों का महत्व और भी बढ़ जाता है।ऐसे में चारा ज्वार एक ऐसी फसल है, जो राजस्थान के अर्ध-शुष्क एवं शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में भी बहुत कम पानी में अच्छी उपज देने की क्षमता रखती है। यह फसल न केवल पशुओं को भरपूर पोषण देती है, बल्कि किसानों की आय बढ़ाने और राज्य की चारा सुरक्षा सुनिश्चित करने में भी अहम भूमिका निभाती है।

चारा ज्वार की विशेषताएँ

1.सूखा सहनशीलता

राजस्थान के पश्चिमी भाग–जैसे बाड़मेर, जैसलमेर, चूरू और बीकानेर–अत्यधिक शुष्क एवं वर्षा की कमी वाले क्षेत्र हैं। इन स्थानों पर सिंचाई की सुविधाएं सीमित हैं और खेती पूर्णतः मानसून पर निर्भर करती है। ऐसी स्थिति में चारा ज्वार एक वरदान की तरह है क्योंकि यह बहुत कम पानी में भी अच्छी तरह से विकसित हो जाता है। इसकी गहरी जड़ प्रणाली मिट्टी में उपलब्ध नमी को अच्छे से खींच लेती है, जिससे यह सूखा सहन करने में सक्षम बनती है।

2.उच्च पोषण मूल्य

चारा ज्वार न केवल भरपूर मात्रा में उगता है बल्कि इसका पोषण मूल्य भी उच्च होता है। इसमें लगभग 8-10 प्रतिशत कच्चा प्रोटीन, उचित मात्रा में खनिज पदार्थ, रेशा तथा 60-65त्र पाच्यता होती है। यह सभी गुण इसे एक उत्तम चारा विकल्प बनाते हैं। इसे खाने से पशुओं की दूध उत्पादन क्षमता बढ़ती है और उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी मजबूत होती है।

3.त्वरित विकास

चारा ज्वार एक तीव्र वृद्धि वाली फसल है जो 60-70 दिनों में हरे चारे के लिए पूरी तरह तैयार हो जाती है। इससे किसानों को कम समय में चारा उपलब्ध हो जाता है और वे एक ही मौसम में कई बार इसकी कटाई कर सकते हैं। यह विशेषता विशेषकर उन किसानों के लिए अत्यंत उपयोगी है जिनके पास पशुओं के लिए सीमित भंडारण की व्यवस्था है।

4.बहु-कटाई योग्य किस्में

आजकल चारा ज्वार की कई उन्नत किस्में बाजार में उपलब्ध हैं, जो एक ही बार बोने पर तीन से चार बार तक कटाई देने में सक्षम हैं। उदाहरणस्वरूप एमपी चारा ज्वार, पीसी-23, और एसएसजी जैसी किस्में किसानों में अत्यधिक लोकप्रिय हो रही हैं। इन किस्मों का एक बड़ा लाभ यह है कि इन्हें लगातार काटा जा सकता है और फिर से जल्दी उग आती हैं, जिससे हर समय ताजा हरा चारा उपलब्ध रहता है।

राजस्थान में चारा ज्वार का महत्व

राजस्थान में चारा ज्वार का महत्व अत्यंत अधिक है क्योंकि यह फसल न केवल पशुपालकों के लिए एक वरदान साबित होती है, बल्कि किसानों की आय बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। चारा ज्वार के सेवन से पशु स्वस्थ एवं मजबूत बनते हैं, जिससे उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है और दूध उत्पादन में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार यह फसल पशुओं की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा कर उनके स्वास्थ्य और उत्पादन क्षमता को बढ़ावा देती है। वहीं, जिन किसानों के पास अधिक भूमि होती है, वे चारा ज्वार की फसल उगाकर न केवल अपने पशुओं के लिए चारा उपलब्ध कराते हैं, बल्कि अतिरिक्त चारा बेचकर अपनी आमदनी में भी वृद्धि कर सकते हैं। इसके अलावा, चारा ज्वार को साइलेज विधि के माध्यम से स्टोर करके साल भर उपयोग में लाया जा सकता है, जिससे हरित चारा सुरक्षा सुनिश्चित होती है और पशुओं को पूरे वर्ष पोषित चारा उपलब्ध होता है। इस तरह चारा ज्वार राजस्थान के पशुपालन क्षेत्र में स्थायी और लाभकारी योगदान देता है, जो पशुपालकों और कृषकों दोनों के लिए अत्यंत उपयोगी है।

खेती की वैज्ञानिक विधियां

खेती की वैज्ञानिक विधियों का पालन करना चारा ज्वार की फसल में उच्च उपज और बेहतर गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए अत्यंत आवश्यक है। सबसे पहले, बुवाई का सही समय बहुत महत्वपूर्ण होता है, इसलिए खरीफ मौसम में जून से जुलाई के बीच ही बीज बोना चाहिए। इससे पौधों को अनुकूल तापमान और मिट्टी की नमी मिलती है, जो अंकुरण और विकास के लिए उपयुक्त होती है। बीज दर भी सही होनी चाहिए, जिसमें प्रति हेक्टेयर लगभग 35 से 40 किलोग्राम बीज बोना पर्याप्त रहता है। इससे पौधों की सही संख्या बनती है और वे आपस में प्रतिस्पर्धा नहीं करते। पंक्तियों के बीच 30 सेंटीमीटर की दूरी और पौधों के बीच 10 सेंटीमीटर की दूरी बनाए रखना चाहिए, ताकि फसल को आवश्यक स्थान मिले और निराई-गुड़ाई में आसानी हो। उर्वरक प्रबंधन भी फसल की वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण होता है, इसलिए बुवाई के समय प्रति हेक्टेयर 60 किलोग्राम नाइट्रोजन और 40 किलोग्राम फास्फोरस देना चाहिए। ये पोषक तत्व पौधों की तेजी से वृद्धि और बेहतर विकास के लिए जरूरी होते हैं। सिंचाई का प्रबंध भी सही समय पर करना चाहिए, खासकर तब जब वर्षा कम हो। ऐसे में 15 से 20 दिन के अंतराल पर हल्की सिंचाई देना फसल के लिए लाभकारी होता है, जिससे मिट्टी में नमी बनी रहती है और पौधे स्वस्थ रहते हैं।

खरपतवार नियंत्रण

चारा ज्वार की फसल में अच्छे उत्पादन और गुणवत्ता के लिए खरपतवार नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है। खेत में खरपतवार यदि समय रहते नियंत्रित न किए जाएं, तो ये फसल के साथ नमी, पोषक तत्व और प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि बाधित होती है और उपज में कमी आ जाती है। इसलिए, खरपतवार प्रबंधन के लिए वैज्ञानिक और प्रभावी उपाय अपनाना अनिवार्य होता है। सबसे पहले, गहरी जुताई करना एक महत्वपूर्ण तरीका है, जिससे मिट्टी में मौजूद खरपतवारों के बीजों का अंकुरण रुक जाता है। गहरी जुताई के कारण खरपतवारों के बीज जमीन के अंदर दब जाते हैं और उनकी वृद्धि नहीं हो पाती, जिससे फसल को उचित पोषण और स्थान मिलता है। इसके बाद, बुवाई के तुरंत बाद एट्राज़ीन नामक रसायन का छिड़काव करना चाहिए। यह रसायन खरपतवारों के शुरुआती विकास को रोकने में बहुत प्रभावी होता है और फसल के लिए एक स्वस्थ वातावरण बनाता है। फसल के उगने के बाद जब पौधे स्थिर रूप से बढ़ने लगें, तब यदि खेत में विशेष रूप से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार अधिक दिखाई दें, तो 2,4-ष्ठ रसायन का छिड़काव करना आवश्यक होता है। यह रसायन चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को विशेष रूप से प्रभावी ढंग से नियंत्रित करता है, जिससे फसल को बिना किसी नुकसान के खरपतवारों से छुटकारा मिलता है।

इस प्रकार, गहरी जुताई, एट्राज़ीन और 2,4-ष्ठ जैसे रासायनिक नियंत्रण के संयोजन से खरपतवारों को समय रहते और प्रभावी तरीके से नियंत्रित किया जा सकता है, जिससे चारा ज्वार की फसल बेहतर होती है और किसानों को अधिक लाभ मिलता है। सही समय और विधि से खरपतवार नियंत्रण करना ही उच्च गुणवत्ता और उपज सुनिश्चित करने का प्रमुख आधार है।

चारे का संरक्षण - साइलेज विधि

जब चारे की अधिकता हो तो उसे लंबे समय तक सुरक्षित रखने के लिए साइलेज विधि का उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में चारा ज्वार को काटकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काटा जाता है और फिर इन्हें विशेष गड्ढों या सिलोज़ में भरकर अच्छी तरह से दबाया जाता है। इस दौरान गड्ढों को पूरी तरह से एयरटाइट यानी हवा बंद रखना आवश्यक होता है, ताकि चारे में कोई हवा न पहुंचे और वह सड़ने या खराब होने से बचा रहे। साइलेज विधि से संरक्षित चारा पौष्टिक और ताजा बना रहता है, जिसे पशुओं को साल भर बिना किसी नुकसान के हरे चारे की तरह खिलाया जा सकता है। इस तरह, फसल की बचत के साथ-साथ पशुपालन में चारे की उपलब्धता बनी रहती है, जो पशुओं के स्वास्थ्य और दूध उत्पादन के लिए अत्यंत लाभकारी है। साइलेज विधि चारा संरक्षण का एक आधुनिक, प्रभावी और आर्थिक तरीका है, जो खासकर राजस्थान जैसे सूखे और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में बहुत उपयोगी साबित होता है।

निष्कर्ष

राजस्थान की सूखा प्रभावित जलवायु और कृषि-प्राथमिकता को ध्यान में रखते हुए, चारा ज्वार पशुपालन की रीढ़ बनकर उभरा है। यह फसल कम पानी में भी अच्छी उपज देती है और पशुओं को उच्च पोषण उपलब्ध कराती है, जिससे उनकी स्वास्थ्य एवं दूध उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है। चारा ज्वार की तीव्र वृद्धि, बहु-कटाई की क्षमता और साइलेज विधि से संरक्षण इसे किसानों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी बनाते हैं। वैज्ञानिक खेती और प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के जरिए इसकी उपज और गुणवत्ता बेहतर होती है, जो राजस्थान के अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में पशुपालकों की आर्थिक समृद्धि और चारा सुरक्षा के लिए आवश्यक है। इस प्रकार, चारा ज्वार न केवल पशुओं की देखभाल में सहायक है, बल्कि राजस्थान के कृषि और पशुपालन क्षेत्र की समग्र प्रगति में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

किसानों को मिलेगी अब फसलों की ज्यादा कीमत

धान समेत 14 फसलों की एमएसपी में बढ़ोतरी

किसान क्रेडिट कार्ड पर कम ब्याज में मिलेगा लोन

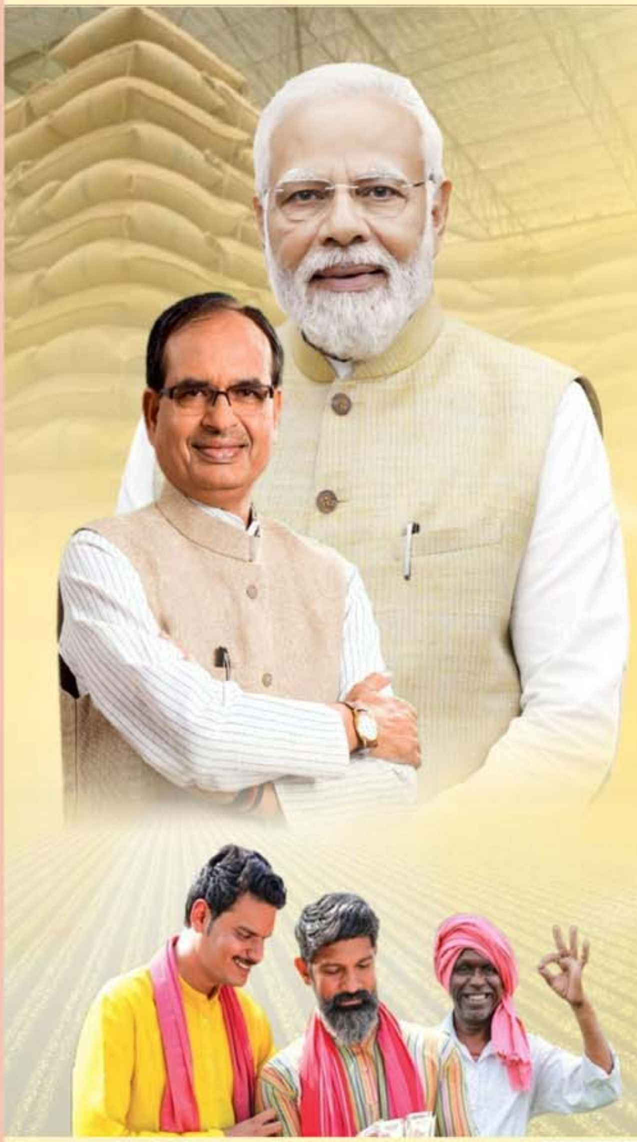

मूल्य: रुपये प्रति क्विंटल

अनाज	2013-14	2025-26
धान (सामान्य)	₹1310	₹2369
धान (ग्रेड ए)	₹1345	₹2389
ज्वार हाईब्रिड	₹1500	₹3699
ज्वार मालदंडी	₹1520	₹3749
बाजरा	₹1250	₹2775
रागी	₹1500	₹4886
मक्का	₹1310	₹2400
तूर/अरहर	₹4300	₹8000
मूंग	₹4500	₹8768
उड़द	₹4300	₹7800
मूंगफली	₹4000	₹7263
सूरजमुखी बीज	₹3700	₹7721
सोयाबीन (पीला)	₹2560	₹5328
तिल	₹4500	₹9846
रामतिल	₹3500	₹9537
कपास (मध्यम रेशा)	₹3700	₹7710
कपास (लंबा रेशा)	₹4000	₹8110

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

जून -2025

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090